श्री

राम-पत्र।

भाग १, २, ३

अर्थात्

श्री स्वामी रामतीर्थ।

उनके सदुपदेश–भाग १७, १८।

प्रकाशक

श्री रामतीर्थ पब्लिकेशन लीग,

लखनऊ।

म संस्करण } —:o:— { नवम्बर १९२२
ति २००० } { अगहन १९७९

nted by K. C. Banerjee at the Anglo-Oriental Press, Lucknow—1922.

मूल्य फुटकर कापी।

ण संस्करण ।) } डाक व्यय रहित। { विशेष संस्करण ॥)

कमीशन दर।

एकट्ठा खरीदने वाले ग्राहकों वा एजन्टों के लिये लीग ने निम्न लिखित दर कमीशन की निश्चय की है:—

(१) २५) रु० से कम के ग्राहक को कोई कमीशन नहीं दिया जायगा।

(२) २५) रु० से ५०) रु० तक के ग्राहक को १०) रु० सैकड़ा।

(३) ५०) रु० से ७५) रु० तक के ग्राहक को १२॥) रु० सैकड़ा।

(४) ७५) रु० से १००) रु० तक के ग्राहक को १५) रु० सैकड़ा।

(५) १००) रु० से ऊपर और २००) रु० तक के ग्राहक को २०) रु० सैकड़ा।

(६) २००) रु० से ऊपर और ४००) रु० तक के ग्राहक को २५) रु० सैकड़ा।

(७) ४००) रु० से ऊपर के ग्राहक को ३३) रु० सैकड़ा कमीशन दिया जायगा।

अपने २ प्रथम आर्डर के अनुसार यदि कोई ग्राहक अपने कमीशन की दर निरन्तर जारी रखना चाहे, तो उसे अपना दूसरा आर्ड निम्न लिखित रकम से कम न भेजना होगाः—

१००) रु० तक के खरीदार को कम से कम २५) रु०

१००) रु० से ऊपर और २००) रु० तक के खरीदार को कम से कम ३०) रु०

२००) रु० से ऊपर और ४००) रु० तक के खरीदार को ५०) रु० और ४००) रु० से ऊपर के खरीदार को कम से कम १००) रु० का अपना दूसरा आर्डर भेजना होगा।

प्रत्येक आर्डर के साथ २०) रु० सै० दाम आना चाहिये।

मंत्री

रजिस्टर्ड ग्राहकों से प्रार्थना ।

इन दो नम्बरों (१७ वां १८ वां) के साथ गतवर्ष का वार्षिक शुल्क पूरा होगया। अब नवम्बर से नया वर्ष आरम्भ हो गया है। इस का प्रथम नम्बर जनवरी मास तक प्रकाशित होगा, जो गतवर्ष के ग्राहकों के पास वी० पी० द्वारा भेजा जायगा, अत एव ग्राहकों से प्रार्थना है कि जिस किसी सज्जन ने अपना नाम ग्राहक रजिस्टर में किसी कारण से जारी न रखना हो, तो वह कृपया शीघ्र सूचना दे दें; और जिन्हों ने नये वर्ष के भाग को अपने किसी अन्य पते पर मंगवाना हो, वे उस से भी सूचित कर दें जिस से लीग को हानि न पहुंचे। बिना सूचना आये के लीग पूर्व पते पर ही १९ वां भाग अर्थात् चौथे वर्ष का प्रथम खण्ड वी. पी. द्वारा सेवा में भेज देगी। कृपया वी. पी. को शीघ्र स्वीकार करके इस धर्म कार्य में कार्य कर्त्ताओं के उत्साह और बल को बढ़ायें।

यह सूचना देना भी अनुचित न होगा कि श्री स्वामी राम के अंग्रेज़ी व्याख्यानों से अत्युत्तम वाक्यों का संग्रह श्री "राम हृदय" के नाम से प्रकाशित हो रहा है, और उस में लगभग ६०० वाक्य नव अध्यायों में विभक्त हैं। ग्रन्थावली के रजिस्टर्ड ग्राहकों को नियत दाम से आधे दाम पर इस की कापी मिल सकती है। अतएव जो नवीन ग्राहक अंग्रेज़ी की इस अद्भुत पुस्तक को मंगाना चाहें वह कृपया अपना ग्राहक नम्बर सहित सविस्तर पते के भेज कर मंगा लें।

मैनेजर

श्री राम तीर्थ पब्लिकेशन लीग लखनऊ।

श्री राम तीर्थ ग्रन्थावली

के

रजिस्टर्ड ग्राहकों के नियम।

१ एक वर्ष में २०×३० (डबल क्राऊन) साइज़ के १६ पेजी आकार के १६० पृष्ठ के छै खण्ड अर्थात् ९६० पृष्ठ दिये जायंगे और प्रत्येक भाग में एक फोटो भी होगी।

२ ऐसे छै खण्डों का पेशगी वार्षिक मूल्य डाकव्यय सहित साधारण संस्करण ३) रु० विशेष संस्करण ४॥) रु० होगा।

३ ग्रन्थावली का वर्ष कार्त्तिक शुक्ल १ से आरम्भ हो कर कार्तिक कृष्ण १५ तक पूरा होता है। वर्षारम्भ में ही प्रथम खण्ड वी० पी० द्वारा भेजकर वार्षिक मूल्य प्राप्त किया जाता है, या ग्राहक को मनीआर्डर द्वारा भेजना होता है।

४ वर्तमान वर्ष के मध्य या अन्त में मूल्य देने वाले को उसी वर्ष के छै खण्ड दिये जायंगे, अन्य किसी वर्ष के मास से १२ मास तक का वर्ष नहीं माना जायगा। किसी ग्राहक को थोड़े एक वर्ष के और थोड़े दूसरे वर्ष के खण्ड वार्षिक मूल्य के हिसाब से नहीं दिये जायंगे।

५ किसी एक खण्ड के खरीदार को उस खण्ड की कीमत स्थायी ग्राहक होते समय उस के वार्षिक मूल्य में मुजरा नहीं की जायगी, अर्थात् वार्षिक मूल्य की पूरी रक़म एक साथ पेशगी देने पर ही खरीदार स्थायी ग्राहक माना जायगा।

६ एक खण्ड का फ़ुटकर दाम साधारण संस्करण का ॥=) और विशेष संस्करण का ॥।=) होगा, डाकव्यय अतिरिक्त।

७ पत्रव्यवहार में उत्तर के लिये टिकट या कार्ड भेजना उचित होगा, अन्यथा उत्तर की सम्भावना अवश्य नहीं। पता पूरा २ और साफ आना चाहिये, यदि हो सके तो ग्राहक नं० भी

मैनेजर—श्री राम तीर्थ पब्लिकेशन लीग, लखनऊ।

श्रीराम तीर्थ ग्रन्थावली।

दीपमाला सं० १९७६ से प्रकाशित हो रही है जिस के १८ भाग लगभग २५०० पृष्ठों के अब तक छप कर तैयार हो गये हैं, जो छे छे भागों के तीन खण्डों में विभक्त हैं, और जिन की सविस्तर विषय-सूची नीचे दे दी गई है। प्रत्येक खंड का दाम डाक व्यय रहित साधारण संस्करण ३) रु० और विशेष संस्करण ४॥) रु० है।

इस वर्ष में भी ग्रन्थावली के छ भाग लगभग १००० पृष्ट के निकलेंगे। जिन का वार्षिक शुल्क डाकव्यय समेत पूर्ववत् ३) और ४॥) रु० निम्न लिखित रूप से होगा।

१ प्रत्येक भाग केवल बुकपैकिट द्वारा मंगाने वाले से साधारण संस्करण ३) रु० और विशेष संस्करण ४॥) रु०

२ प्रत्येक भाग रजिस्टर्ड पैकिट द्वारा मंगाने वाले से साधारण संस्करण ३॥) रु० और विशेष संस्करण ५) रु०

३ प्रत्येक भाग वी० पी० द्वारा मंगाने वाले को ॥) पेशगी अपना नाम दर्ज रजिस्टर्ड कराने के लिये भेजने होंगे और उसे भी इस प्रकार वार्षिक शुल्क के भाव से ही भाग मिलेंगे

उक्त ग्रन्थावली के तीन प्रकाशित खंडों अर्थात् १८ भागों में उर्दू भाषा के लगभग समग्र लेख व व्याख्यान आ चुके हैं और अंग्रेजी भाषा के कुछ व्याख्यान तो दूसरी व तीसरी जिल्द से तथा समग्र व्याख्यान व लेख पहिली जिल्द (First Volume of the Woods of God-realisation) से प्रकाशित हुए हैं। प्रत्येक भाग की विषय-सूची निम्न लिखित है, पर अंग्रेजी लेख से जो अनुवाद हुआ है उस का नाम अंग्रेजी भाषा में भी दे दिया है:—

दूसरा भागः—(१) संक्षिप्त जीवन-चरित्र. (२) सान्त में अनन्त (The Infinite in the finite). (३) आत्म-सूर्य और माया (The Sun of Life on the wall of mind). (४) ईश्वर भक्ति. (५) व्यावहारिक वेदान्त. (६) पत्र मंजूषा. (७) माया (maya) ।

तीसरा भागः—(१) राम परिचय. (२) वास्तविक आत्मा (The real Self). (३) धर्म तत्त्व. (४) ब्रह्मचर्य. (५) अकबरे-दिल्ली. (६) भारतवर्ष की वर्तमान आवश्यकतायें (The present needs of India). (७) हिमालय (Himalaya). (८) सुमेरु दर्शन (Sumeru-scene). (९) भारतवर्ष की स्त्रियां (Indian woman hood). (१०) आर्य माता (About wife-hood). (११) पत्र मंजूषा ।

चौथा भागः– (१) भूमिका (Preface by mr. Puran in Vol. I). (२) पाप; आत्मा से उसका सम्बन्ध (Sin-Its relation to the Atman or real Self). (३) पाप के पूर्व लक्षण और निदान (Prognosis & Diagnosis of Sin) (४) नकद धर्म, (५) विश्वास या ईमान (६) पत्र मंजूषा ।

पाँचवाँ भागः– (१) राम परिचय. (२) अवतरण (A Brief of introduction by the late Lala Amir chand, Published in the fourth volume). (३) सफलता की कुंजी (Lecture on Secret of Success delivered in Japan). (४) सफलता का रहस्य (Lecture on Secret of Succass, delivered in America). (५) आत्म कृपा ।

छठा भागः—(१) प्रेरणा का स्वरूप (Nature of Inspiration). (२) सब इच्छाओं की पूर्ति का मार्ग (The way to the fulfilment of all desires). (३) कर्म. (४) पुरुषार्थ और प्रारब्ध. (५) स्वतंत्रता।

सातवाँ और आठवाँ भागः—राम-वर्षा, प्रथम भाग (स्वामी राम कृत भजनों के नौ अध्याय) और दूसरा भाग (जिसके केवल तीन अध्याय दर्ज हैं)।

नवाँ भागः—राम वर्षा का दूसरा भाग समाप्त।

दशवाँ भागः—(१) हज़रत मूसा का डंडा (The Rod of Moses.) (२) सुधार. (३) उन्नति का मार्ग या राह-तरक्की. (४) राम ढिंढोरा (The Problem of India). (५) ज़ातीय धर्म (The National Dharma)।

ग्यारहवाँ भागः - (१) राम के जीवन पर विचार, श्रीयुत पादरी सी, एफ एण्ड्रयूज द्वारा. (२) विजयनी आध्यात्मिक शक्ति (The Spiritual power that wins). (३) लोगों को वेदान्त क्यों नहीं भाता (रिसाला अलफ से—राम का हस्त लिखित उर्दू-लेख)।

बारहवाँ भागः—(१) सुलह कि जंग ? गंगा तरंग।

तेरहवाँ भागः—(१) सुलह कि जंग, गंगा तरंग का अवशिष्ट भाग. (२) आनन्द. (३) राम परिचय।

चौदहवाँ भागः—(१) भारत का भविष्य. (२) जीवित कौन है. (३) अद्वैत. (४) राम।

पन्द्रहवाँ भागः—(१) नित्य-जीवन का विधान (The

Law of Life Eternal). (२) निश्चल चित्त (Balanced mind). (३) दुःखमें ईश्वर (Out of misery to God within). (४)साधारण बात चीत (Informal Talks). (५) पत्र मंजूषा ।

सोलहवाँ भागः—(१) ग़ैर मुल्कों के तजरुबे (अनुभव). (२) अपने घर आनन्द मय कैसे बना सकते हैं (How to make yoor homes happy). (३) गृहस्थाश्रम और आत्मानुभव (Married life & Realization). (४) मांस भक्षण पर वेदान्त का विचार (Vedantic idea of eating meat) ।

सतरहवाँ और अठारहवाँ भागः—बाल्यावस्था से ब्रह्म-लीन अवस्था तक जो पत्र राम से अपने पूर्व आश्रम के गुरु भगत धन्नाराम जी को तथा संन्यासाश्रम में अपने अनेक प्रेमियों को लिखे गये, उन में से लग भग ३०० चुने हुए पत्र का संग्रह सहित भगत धन्ना राम जी की जीवनी और जल्वे-कहसार अर्थात् पर्वतीय दृश्य के ।

भगत धन्नाराम जी।

देहली सन् १९१२

भूमिका ।

बहुत काल से यह विचार उमड़ रहा था कि अपने परमात्म-स्वरूप ब्रह्मलीन श्री स्वामी रामतीर्थ जी महाराज की जीवनी का सविस्तर परिचय जनता को दिया जाय। पर कई एक कारणों से यह विचार अब तक ठीक २ पूर्ण नहीं हो सका। प्यारे सरदार पूर्ण सिंह जी ने भी जो अपनी आँखों देखे समाचारों को इस जीवनी में प्रकाशित करने के लिये भेजने का वचन दिया था वह भी कई कारणों से न भेज सके। इस लिये आज तक पूर्ण विस्तार के साथ अपने पूज्य स्वामी जी की जीवनी न प्रकाशित हो सकी। केवल संक्षिप्त जीवनी सन् १६१० में राम वर्षा भाग २ की प्रस्तावना में दे दी गई थी।

इस संक्षिप्त जीवनी के प्रकाशित होने के बाद सन् १६११ में पता लगा कि स्वामी राम के पूर्वाश्रम के गुरु भगत धन्नाराम जी के पास राम के हस्तलिखित पत्र लग भग ११०० की संख्या में मौजूद हैं जिन से राम के हृदय की क्रमशः उन्नति, गति व स्थिति का परिचय स्पष्ट मिलता है, और जो पत्र वास्तव में राम की सच्ची २ जीवनी वा आत्म चरित्ररूप (autobiography) हो सकते हैं।

इतना मालूम होते ही नारायण झट गुजरांवाले नगर में जाकर भगत जी की सेवा में उपस्थित हुआ और राम जी के पत्रों के देखने की जिज्ञासा प्रकट की। बहुत टाल मटोल के बाद अन्त में भगत जीने कृपा पूर्वक एक मट्टी का घड़ा का घड़ा सामने रख दिया जो पत्रों से लबा लब भरा पड़ा था। भगत जी उन पत्रों को उस घर से बाहिर ले जाकर पढ़ने की आज्ञा कदापि न देते थे, अतएव वहीं उनके सामने सब पत्रों को वर्ष, मास और तिथि के अनुसार कई दिन

तक छाँटना पड़ा, और उनको इस प्रकार क्रम से पढ़ा। लगभग २७० पत्र प्रकाशनार्थ चुने। इतने पत्रों को भी वाहिर ले जाकर छपवाने की आज्ञा भगत जी नहीं देते थे। नारायण की पुनः २ प्रार्थनाओं पर उस से प्रतिज्ञा पत्र लेकर केवल उनकी नकल लेने की आज्ञा भगत जी ने दी। इस पर भी जब नियत काल से किञ्चित् विलम्ब सा हो गया, तो झट भगत जी स्वयं देहिली में आये और पत्रों की नकल होते ही उन्हें वापिस ले गये। इस तरह सन् १६१२ में उर्दू भाषा में ये राम-पत्र नारायण से संपादित होकर प्रकाशित हो सके। आज धन्य समय है कि इतने काल के बाद इन का हिन्दी अनुवाद भी पुनः नारायण से ही होकर प्रकाशित हो रहा है।

इस समय भी भगत जी से वार २ प्रार्थना की गई कि वह कृपया पत्रों को तथा स्वामी जी की जन्म—पत्री इत्यादि आवश्यक वस्तुओं को थोड़े काल के लिये भेज दें जिस से यह हिन्दी प्रति पहिले से भी अधिक सविस्तर और देख भाल के बाद छपे, और श्री स्वामी राम की जीवनी पर उन की ओर से भी कोई टिप्पनी दी जा सके। पर भगत जी ने एक न मानी और सब प्रार्थनाएं निष्फल करदीं जिस से लाचार होकर उर्दू राम पत्र का केवल अनुवाद मात्र ही हिन्दी जनता की भेंट करना पड़ा। ईश्वर भगत जी के चित्त में इस विषय में उदारता उत्पन्न करें और राम की जीवनी के कार्य को सफल करने में वह हम सब लोगों से अधिक उत्सुक हों।

ॐ तथास्तु

भवदीय,
नारायण स्वामी।

ॐ

प्रस्तावना

भगत धन्ना राम जी

की

संक्षिप्त जीवनी।

भगत धन्ना राम जी जिन्हें तीर्थ राम जी के बचपन (बाल्यावस्था) में ही उन के गुरु होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था जाति के अरोड़ा और संज्ञा में मनोच्च थे। भारत में (विशेष करके पञ्जाब में) यह जाति अपने को क्षत्रि वंश से निकली मानती है। पर जिन २ नगरों में यह जाति क्षत्रिय मानी जाती है, वहां २ भी उच्च वा उत्तम श्रेणी के क्षत्रियों में इस की गणना नहीं होती बल्कि क्षत्रिय वंश के अन्तर्गत खत्रियों से भी नीचे मानी जाती है, और द्विज ब्राह्मणों से तो कई गुणा अधम समझी जाती है।

तीर्थ राम जी जाति के ब्राह्मण और उत्तम कुल के गोस्वामी थे, जो पञ्जाब में द्विजों के गुरु घराने से प्रसिद्ध है। ऐसी उत्तम द्विज कुल की सन्तान का गुरु बनना भगत धन्नाराम जी जैसे के लिये कुछ कम सौभाग्य का अवसर नहीं था। इस लिये ऐसी अवस्था में यदि वह बड़े भारी भाग्य शाली कहे वा समझे जायं, तो किंचित् अनुचित न होगा।

भगत धन्ना राम जी के पिता का नाम लाला ज्वाहर मल था। भगत जी का जन्मकाल कार्त्तिक संवत् १९०० से

बतलाया जाता है। भगत जी के जन्म लेने के कुछ काल पश्चात् ही उनकी पूज्य माता का देहान्त हो गया, अर्थात् भगत जी अभी किञ्चित् सचेत भी होने न पाये थे कि उन्हें अपनी परम प्यारी माता के प्रेम भरे आञ्चल से सदा के लिये पृथक हो जाना पड़ा और माता की प्रेम भरी गोद देर तक नसीब न हुई।

इस छोटी सी आयु में भगत जी को उन की प्रेम भरी भूआ (पिता की भगनी) और दादी ने पाला पोसा। बाल्यावस्था (लड़कपन) में वहां की रीति रवाजानुसार वह पाधा के पास पढ़ने को बिठाये गये, अर्थात् हिन्दी वा देशी भाषा की पाठशाला में प्रविष्ट किये गये। दो चार बर्ष तक निरन्तर उन्हों ने वहां लण्डे (देशी अक्षर जिस से दुकान्दार लोग अपना हिसाब किताब लिखते और पत्र व्यवहार करते हैं) और देशी हिसाब किताब खूब सीखा, मानो दुकान्दारी के हिसाब किताब में अच्छे दक्ष (प्रवीण) होगये।

भगत जी के मुखार्विन्द तथा गुसांई तीर्थराम जी की अपनी नोट बुक से मालूम हुआ कि बाल्यावस्था में ही भगत जी बड़े होन्हार (आशान्वित) और करामाती थे। उन का पाधा जब लड़कों को छुट्टी दिया करता था, तो वह प्रायः कुछ आशान्वित लड़कों को गणित के कुछ प्रश्नों को मुखाग्र पूछने के लिये रोक लिया करता था, और जो लड़का उनके प्रश्न का पहिले उत्तर देता उसे तत्काल छुट्टी मिल जाती और शेष लड़के तत्पश्चात् बारी बारी छुट्टी पाते थे। प्रत्येक वार भगत जी ही इन प्रश्नों के उत्तर देने में प्रथम रहते और सब लड़कों से पहिले छुट्टी पाया करते थे, मानों अपने सब सहपाठियों में प्रथम थे।

एक बार सहपाठियों ने परस्पर मिल कर भगतजी पर कोई झूठा दोष आरोपन करना चाहा जिससे वह सब से पहिले घर जाने न पाये। इस प्रकार एक विद्यार्थी ने भगत जी की शिकायत की और शेष सब विद्यार्थियों ने उस का समर्थन किया। इस पर पाधा जी ने दूसरे लड़के से भगत जी की पीठ पर पाँच चपत ज़ोर से लगवाये जिन के चिह्न बहुत काल तक उन के शरीर पर बने रहे। पाधा जी का नाम बाशी पाधा था। चूंकि यह सब दण्ड भगत जी को बिना उनके अपराध और बिना ठीक २ जाँच के मिला था इस लिये वह हताश चित्त से घर पहुँचे। और घर में प्रविष्ट होते ही रो कर अपने पिता जी से यों कहने लगेः—"देखो! बाशी पाधा जी ने बिना किसी अपराध के नाहक सखत चपत दूसरों से मेरी पीठ पर लगवाये हैं, इस लिये मैं भविष्य को पाधे (पाठशाला) में कभी नहीं जाऊंगा। यदि आप मेरा इस पाठशाला में जाना बन्द करदोगे, तो मैं घर में रहूंगा, अन्यथा नित्य के लिये घर से बाहर चला जाऊंगा।" इस पर पिता ने उसे सन्तुष्ट किया और प्रतिज्ञा की कि "हम तुम्हारा पाधे (पाठशाला) जाना नितान्त रोक देंगे, तुम घर से बाहिर कहीं मत जाओ।" तदनुसार भगत जी का पाधे जाना बिल्कुल बन्द होगया।

पाठशाला जाना तो बंद होगया, पर जैसा भगत जी का अपना कथन है, उस अनापराधी को अन्याय पूर्वक दण्ड देने का फल पाधा जी को यह मिला कि उन का बड़ा पुत्र शीतला के रोग से ग्रस्त होकर मर गया और तत्पश्चात् पाधा के शेष पुत्र भी बारी २ एक के बाद दूसरे करके उसी रोग से मृत्यु को प्राप्त होगये। फिर उन की प्यारी अर्धाङ्गी

परलोक सिधार गईं, और अर्धाङ्गी की मृत्यु के थोड़े काल पीछे आप स्वयं भी स्वर्गवास हो गये। तात्पर्य यह कि दो मास के भीतर २ ही पाधा जी का सारा वंश नष्ट हो गया।

इन्हीं दिनों में गुजरांवाले के एक और धनाढ्य पाधा रल्ल ने भी अपने पुत्र के कहने पर भगत जी को बिना उस के अपराध के मारा था, जिस का फल उन्हें भी यह मिला कि पाधा जी का इकलौता पुत्र (सर्वदयाल) हैज़ा (विपूचिका) की बीमारी से मर गया। और शेष वंश का भी वही हाल हुआ जो काशी पांधा के वंश के साथ हुआ था।

पाधे से उठने अर्थात् पाठशाला छोड़ने के बाद भगत जी को उनके पिता ने ठठेरे (कसेरा) का काम सीखने के लिये एक अच्छे अभ्यासी (प्रवीण) ठठेरे के स्पुर्द कर दिया। थोड़े काल के भीतर ही भगत जी ने उस काम से अच्छी मुहारत हासिल करली और अपनी रोज़ी (जीविका) कमाने के योग्य होगये। उन्हीं दिनों में भगत जी को व्यायाम और कुश्ती से बड़ी रुचि थी। सायंकाल जब ठठेरे के कार्य से अवकाश पाते, झट अखाड़े में पहुँच जाते और वहां प्रत्येक प्रकार का व्यायाम करते थे। जो रुपया या सवा रुपया प्रति दिन कमाते वह सब इसी पहलवानी (मल्ल-युद्ध) में खर्च कर देते थे। इस प्रकार जब युवावस्था को पहुंचे, अर्थात् जब वह लग भग १६ वर्ष के हुए, तो एक बार वैशाखी के मेले पर पञ्जाब के कटास राज तीर्थ की यात्रा को गये। यह तीर्थ भारतवर्ष की चक्षु कहलाता है, और पिंड दादन खाँ नगर से लगभग १५ मील की दूरी पर है। वैशाखी के दिन हिन्दुओं का मेला यहां बड़ी धूम धाम से लगता है और इस मेले पर अनेक साधु महात्मा आते हैं। यह तीर्थ

यात्रा समाप्त करके भगत जी जब कटास राज से पिण्ड दादन खाँ को वापिस आये तो उन का चित्त वहां ही रह जाने को चाहने लगा। और वहां ठठेरे का काम अधिक देख कर उन्हों ने इसी वृत्ति की दुकान खोल ली, और स्थाई रूप से बसना शुरू कर लिया।

इस नगर (पिंड दादन खां) में कुशती (मल्ल युद्ध) की वर्ज़िश का रवाज नहीं था। केवल मुंगलियों और मुगदर इत्यादि से व्यायाम करते थे। भगत जी इस कुशती के व्यवसाय में अति निपुण तो थे ही, अपने अभ्यास (शौक़) के कारण इस नगर में भी कुशती की वर्ज़िश का रिवाज डाल दिया और इस काम के लिये एक बड़ा अखाड़ा बनवा डाला। इस अखाड़े में वह आप भी प्रति दिन मल्ल-युद्ध करते और कई एक अन्य युवकों को भी खूब वर्ज़िश कराते थे। इन की देखा देखी इन के अखाड़े की तर्ज़ पर उस कस्बे (नगर) में कई एक और अखाड़े भी बन गये। थोड़े काल के बाद उन्हें एक बड़े शक्तिशाली मल्ल (पेहलवान) से मल्ल-युद्ध करना पड़ा। यह मल्ल भगत जी से द्विगुणे कद का और मोटा ताज़ा था, तथापि अखाड़े में भगत जी ने उसे खूब पिछाड़ा। और एक घंटे के अन्दर २ चित्त कर दिया। यह आश्चर्यजनक जीत भगत जी को शारीरिक बल से नहीं हुई थी बल्कि, जैसा उन्हों ने वर्णन किया, यह सब परमात्मा पर पूर्ण विश्वास रखने का परिणाम था।

इस युवावस्था में भगत जी जैसें कि बलवान् और पहल्वान (मल्ल) थे, वैसे ही चित्त के बड़े शूर वीर और उदार थे। जो कुछ कमाते वह कुछ खुद खाते और बहुत सी रकम साधु महात्माओं की सेवा में खर्च कर देते थे। और इरादे (संकल्प)

था हठ के भी इतने पक्के थे कि जो मन में ठान लेते उसे ज़रूर निभा कर दिखा देते थे। इक पक्के इरादे की मदद से उन्हों ने ऐसे २ अजीब स्वभाव डाल लिये कि जो दूसरों को आश्चर्य किये बिना न रहते। दृष्टान्त रूप से कितने समय तक वह केवल पाखाने जाते और पेशाब (लघुशंका) कदापि न जाते थे। ऐसे ही भोजन करते तो पानी नितान्त न पीते थे। एक बार ऐसा स्वभाव डाला कि दिन भर हंसते ही रहे, और फिर ऐसा मौन साधा कि नितान्त चुप रहे। कभी शीतकाला में नितान्त कपड़े न पहन कर नंगे तन जीवन व्यतीत करने लगे। और कभी गर्म ऋतु में कपड़ों के भार से अपने को लाद लिया करते। तात्पर्य यह कि अपने अत्यन्त विचित्र स्वभाव भगत जी ने डाले हुए थे जिन से उनके संकल्प की दृढ़ता का काफी प्रमाण मिलता है।

बाल्यावस्था में ही भगत जी की रुचि कथा सुनने की थी। जहां कहीं कथा होती, वहां वे अपने साथियों समेत जाते, और जब उन के साथी कथा के समय बात चीत करते या शोर मचाते, तो भगत जी उन को चुप करा देते थे; बहुत ध्यान से आप कथा सुनते और दूसरों को भी चित्त लगाकर सुनने के लिये कहते थे। संक्षेप से यह कि उन की रुचि धर्म के कार्यों में पहिले ही से थी। और प्रेम व भक्ति की कथा से उन के चित्त पर इतना प्रभाव पड़ता था कि एक बार रास मण्डल में सुदामा भक्त की बेपरवाही और उस पर कृष्ण महाराज की अधीनता को देखकर उन की आंखों में प्रेम के आँसु भर आये।

इसी प्रकार जब एक ओर से शारीरिक बल और दूसरी ओर से चित्त की एकाग्रता में उन्नति पाने लगे, तो भगत जी

में कविता बनाने की योग्यता (शक्ति) प्रकट होने लगी। जब किञ्चित भी वह समाहित चित्त होते तो झट कविता उन के मुख से विना यत्न निकल पड़ती। इन्हीं दिनों उन की लेखनी से दो सीहरफियां (कवितायें) निकली थीं, जिन के विषय में गोस्वामी तीर्थराम (पीछे स्वामी रामतीर्थ) जी अपनी लेखनी से यों लिखते हैं:—"यद्यपि इन सीहरफियों (कविताओं) के पद्यों में मधुर स्वर और छन्द (Metre and Bright muse) इत्यादि अधिक नहीं हैं तथापि प्रशंसनीय वात यह है कि इन में परिश्रम का तो नाम तक भी खर्च नहीं हुआ, जैसा कि अन्य कवियों के विषय में देखा जाता है। दृष्टान्त रूप से फरदौसी को लीजिये कि तीस वर्ष में केवल साठ हज़ार कविता बनाने पर भी, कि जिनका परिमाण (अन्दाज़ा) पाँच या छे पद्य प्रति दिन होता है, फिर भी उन में यह गुण वा लक्षण नहीं पाये जाते।"

लगभग इन्हीं दिनों में भगत जी को योग वासिष्ठ की कथा सुनने का समागम हुआ जिस से उन्हें प्रथम ही प्रथम यह पता लगा कि "मनुष्य सव कुछ कर सकता है और यह कि जीव वास्तव में ब्रह्म रूप है।" इस रहस्य को पाते ही भगत जी प्रत्येक को कभी सुन्दर, कभी ईश्वर, कभी ब्रह्म के नाम से पुकारते, और लोग उनको भी इन्हीं नामों से बुलाते थे। उस समय के परिचित्त लोग अभी तक भगत जी को ईश्वर (खुदा) के नाम से पुकारते हैं।

इस प्रकार वात चीत में तो वह यद्यपि प्रत्येक को ईश्वर के नाम से पुकारते या स्वयं भी ईश्वर कहलाते थे, पर भीतर की आँख (हृदय नेत्र) पूरी २ खुली नहीं थी, अर्थात् उक्त रहस्य का पूरा पूरा साक्षात्कार अभी तक नहीं हुआ था।

इस लिये हरदम उन के चित्त में अशान्ति सी बनी रहती थी। और जब पिण्ड दादन खाँ में बहुत काल रहने पर भी किसी से उनके चित्त की शान्ति न हुई, तो फिर वह उस नगर को छोड़कर शान्ति और आनन्द की ढूँढ में कुजरांवाले आये और यहां उन को कुछ महात्माओं के दर्शन हुए। भगत जी को बड़ा अशान्त व अस्थिर चित्त देख कर एक महात्मा ने पूछा कि "ऐ प्यारे! तुम विस्मित और अशान्त क्यों और किस लिये हो? भगत जी ने सविनय उत्तर दिया कि "महाराज! सांसारिक सुख के सब साधन तो प्राप्त हैं, पर चित्त फिर भी अस्थिर और अशान्त हुए जाता है"। महात्मा जी ने कहा कि "मन को तुम अपने साक्षी आत्मा में स्थिर करो"। उसी वक्त भगत जी ने मन को अपने स्वरूप के ध्यान में लगाया। और (भगत जी के कथनानुसार) उनका मन इस ध्यान में ऐसा लीन हो गया कि तीन चार घंटे तक उनको किसी प्रकार की सुध बुध न रही। जब चार घंटे के बाद मन ध्यान से उतरा, तो महात्मा जी को सामने उपस्थित न पाया। जब भगत जी ने साथ के दुकानदार से पूछा तो उत्तर मिला कि "आप तो चार घंटे के बाद होश में आये हैं, और महात्मा जी तो केवल थोड़ी देर बैठ कर चले गये थे। हम हैरान (विस्मित) हैं कि आप इतनी देर तक कैसे लीन व समाहित चित्त बैठे रहे।" यह उत्तर सुन कर भगत जी खुश हुए और महात्मा के चले जाने का किञ्चित् शोक न किया, बल्कि दिल में यह विचार जमाने लगे कि "चलो, अब मनके एकाग्र करने का उपाय तो अच्छी तरह आ ही गया है, अब किसी और बात की हमें परवाह नहीं।" तब से भगत जी एकाग्रचित्त रहने के बड़े उत्सुक होगये, और प्रति दिन नियम पूर्वक अभ्यास में बैठने लगे। इस प्रकार

अभ्यास करते करते उन्हें थोड़ा ही समय बीता था कि उन महात्मा जी के पुनः दर्शन हुए कि जिन की आज्ञानुसार चलने से उनका समाहित चित्त हो गया था। अब तो भगत जी उनके साथ हो लिये, और उनके सहचारी बन कर जंगलों में जाकर खूब एकान्त अभ्यास करने लगे।

अधिकतर अभ्यास भगत जी को अनाहत शब्द का रहता था। जब जंगलों में उक्त महात्मा जी की संगति देर तक की और एकान्त अभ्यास खूब किया, तो उन्हें मन, वाणी की कुछ सिद्धियां प्राप्त हो गईं, अर्थात् जिस को वह जो कुछ कहते या जिस के विषय में जैसा भी वह खयाल करते, वह तत्काल पूरा हो जाता था, और जिस किसी को वह कोई शाप देते, वह भी तत्काल फल ले आता था। तत्पश्चात् भगत जी जंगल को छोड़ कर अपने सांसारिक घर (कुजरांवाले) में आगये, और शनैः शनैः इन सिद्धियों के कारण अपने नगर में प्रख्यात होने लगे।

लगभग इन्हीं दिनों में गोस्वामी तीर्थराम जी को इन के पूज्य पिता जी कुजरांवाले हाई स्कूल की स्पैश्यल क्लास (Special class) में पढ़ने के लिये अपने परम मित्र भगत धन्नाराम जी के सरंक्षण में छोड़ गये। भगत जी की अनोखी व निराली प्रकृति और वाणी की सिद्धियों ने भोले भाले बालक तीर्थराम जी के चित्त पर कुछ अजीब प्रभाव डाला। भगत जी से वह ऐसा डरने लगे जैसे साक्षात् परमेश्वर से कोई आस्तक पुरुष डरता है, और प्रति दिन भगत जी की वाणी की सिद्धि और अन्य गुणों को देख कर बालक तीर्थराम जी के चित्त में यह ख्याल जम गया कि भगत जी साक्षात् ईश्वर का अवतार हैं।

भगत जी यद्यपि सर्व साधारण की दृष्टि में जाति के अरोड़े और छोटी वृत्ति (व्यवसाय) वाले ठठेरा थे, पर तीर्थराम जी के चित्त को वह परम ज्ञानी और भगवान् के साक्षात् अवतार भान होते थे। भगत धन्नाराम की जीवनी के विषय जो नोट गोस्वामी तीर्थराम जी ने अपनी नोट बुक में दर्ज कर रक्खे हैं उन से स्पष्ट सिद्ध हो रहा है कि गोस्वामी जी अपने गृहस्थाश्रम के समय भगत जी को केवल अपना गुरु ही नहीं मानते थे बल्कि साक्षात् ईश्वर का अवतार भी उन्हें समझते थे। और यह गुरु-शिष्य भाव गोस्वामी जी के चित्त में तब तक ही रहा जब उन के भीतर निजानन्द ने अपना रंग व सिक्का न जमा लिया था। जब अनन्य गुरु-भक्ति से अन्तः करण शुद्ध होकर तीर्थराम जी के चित्त में निजानन्द तरंगायित हुआ, तो फिर कहां का गुरु और कहां का चेला, कहां का ईश्वर, और कहां का ईश्वर-अवतार, सब के सब द्वैत ख्याल स्वतः दुम दबाये अपने २ घोंसलों (आलनों, विश्राम स्थान) में छुप गये। और छुपे भी ऐसे कि नितान्त शशि-शृंगवत् लुप्त हो गये। स्वामी राम के चित्त की यह उन्नति का क्रम उन के अपने पत्रों से स्पष्ट विदित हो रहा है, और पाठक को पूर्ण निश्चय दिला रहा है कि जब तीर्थराम जी का चित्त निजानन्द में तरंगायित होने लगा तो फिर प्रति दिन भगत जी को पत्र लिखने स्वतः बन्द हो गये। और कभी कभी भगत जी के पत्र के उत्तर में यदि कुछ लिखा भी जाता, तो वह उपदेश के रूप में निकलता, गुरु-शिष्य के भाव से या भगत जी से किसी प्रकार के उपदेश या आज्ञा की आशा रखते हुए कदापि न लिखा होता था। प्रथम तो पत्र लिखने ही बंद होगये। द्वितीय यदि भगत जी के अनेक पत्रों के उत्तर में राम कुछ लिखते भी, तो अति संक्षेप वा उपदेश युक्त।

दृष्टान्त रूप से नवम्बर सन् १८९७ का पत्र लो। जब भगत जी ने तीर्थराम जी से शायद लगातार पत्र न लिखने या प्रत्येक पत्र का उत्तर न भेजने का कारण पूछा तो राम ने उत्तर दिया कि:—"·········यद्यपि मैं ने इतने दिन कोई पत्र नहीं लिखा, पर आप के स्वरूप में लीन रहने के सिवा कोई और काम भी मैं ने नहीं किया। जब अपना आप हो गये, तो पत्र किस को लिखे?"

इस तिथि (तारीख) के बाद तीर्थ राम जी के भीतर त्याग और वैराग्य की उमंगे जोश मारने लगीं और उन पर हार्दिक संन्यास आच्छादित होगया। इस के बाद जो पत्र भगत जी को लिखे गये, उनमें या तो भगत जी की युक्तियों और प्रश्नों के प्रबल उत्तर हैं और या दिल पर चोट लगाने वाले प्रेम भरे उपदेश; पर किसी प्रकार का सांसारिक उद्देश्य वा सम्बन्ध उन में नहीं। इस के अतिरिक्त जो मासिक धन सहायता के रूप में कभी २ भगत जी की सेवा में भेजा जाता था, जिसे स्वामी जी "भेंट करूंगा वा अर्ज़ करूंगा" के वाक्य से अपने पत्रों में संकेत करते थे, वह भी भेजना नितान्त बन्द होगया। और जब भगत जी ने इस सब का कारण पूछा तो मार्च सन् १८९९ में उन की सेवा में राम जी यों लिखते हैं कि:—

"अर्ज़ (निवेदन) यों है कि यहां किसी प्रकार का अनुमान तो दौड़ाया नहीं गया। सत्तर से भी एक दो कम रुपये महीने के मिले, उस में से कौड़ी तो एकत्र करनी नहीं, जो जो आवश्यकताएं सामने आईं, भुक्त गईं। बाकी आवश्यकताओं को उत्तर देना अर्थात् परे हटाना पड़ा। केवल १२) रुपये घर भेज गये, जहां आठ मनुष्य खाने वाले हैं।

गृहस्थी स्त्रियों, बच्चों और बूढ़ों को अधिक ज़रूरत होती है और साधुओं की अपेक्षा अत्यन्त हाजत मन्द (दीन, अकिञ्चिन्) होते हैं, जिन साधुओं के लिये मधु मक्खियों के समान अनेक पुष्पों से मधुकरी लाना भूषण है, और जो हो रहा है अति उत्तम और उचित हो रहा है।"

अब दशा नितान्त उलट हो गई। गोस्वामी तीर्थराम जी को भगत जी से उपदेश वा शिक्षा मिलने के स्थान पर उलटा भगत जी को तीर्थ राम जी से उपदेश वा शिक्षा मिलने लगे। अर्थात् जो नदी कि पहिले किंचित सूखी और किंचित् पानी की धारा से तीर्थ राम जी की ओर बहती थी वह अब अनन्त उपदेशों के जल से परिपूर्ण होकर उलटी भगत जी की ओर बहने लगी। पंजाबी रवायत (आख्यान) के अनुसार "हेठले ऊपर और ऊपरले हेठ हो गये" जो नीचे थे वह ऊपर और जो ऊपर थे वह नीचे होगये।

गुरु जो कि था वह तो गुड़ ही रहा।
परंतु उसका चेला शकर होगया॥

जिस प्रकार स्कूल में जो लड़के कि अभी प्रविष्ट ही हुए होते हैं, उन को लोअर प्राइमरी (छोटी कक्षाओं) के अध्यापक भारी विद्वान् और ज्ञानी बल्कि देवता नज़र आते हैं। परन्तु जब उन में से कुछ चतुर (आशान्वित् होन्हार) लड़के शिक्षा पाते पाते वा उस में उन्नति करते करते हाई स्कूल वा कालिज तक पहुंच जाते हैं, तो फिर उनको अपने पूर्व अध्यापकों की योग्यता वा विद्या से पूर्ण परिचय मिल जाता है; यद्यपि प्रणाम वा नमस्कार करना तो कुछ काल तक पूर्व वत् वैसे ही चला जाता है, परन्तु भीतरी विचार का रंग ढंग कुछ और ही हो जाता है; और यद्यपि छोटी

श्रेणी के अध्यापकों का अहंकार विद्या में उन्नति न पाने के कारण कम नहीं होता (चाहे उस का विद्यार्थी लोइर प्राइमर से उत्तीर्ण हुआ एम, ए पास भी क्यों न कर लें), परन्तु विद्यार्थी के चित्त की दशा विद्या में उन्नति पाने के कारण नितान्त बदल जाती है। और यदि ऐसा कोई एम, ए पास हुआ विद्यार्थी कदाचित् निरीक्षक (Inspector) के पद पर नियुक्त होजाय और निरीक्षक की अवस्था में वह अपने लोइरप्राइमरी के पुराने अध्यापकों की परीक्षा निमित्त उन छोटी कक्षाओं में जावे, तो उन्हीं अध्यापकों को अपने भूत पूर्व शिष्य के आगे सिर झुकाना पड़ता है। और चाहे निरीक्षक को वह अध्यापक लोग चित्त से अपना पुराना शिष्य ही समझते हों और अपनी अध्यापकता के अहंकार में फूले न समाते हों, पर वास्तव में प्रत्यक्ष रूप से वह सब अध्यापक उस अपने भूत पूर्व विद्यार्थी के सामने पाठशाला के विद्यार्थी ठहरते हैं, और उसके अधीन सेवक होते हैं। ठीक यही हाल भगत जी और गोस्वामी राम जी के विषय देखा जाता है। जब तीर्थराम जी धार्मिक शिक्षा में अभी बच्चे थे, उस समय नितान्त निराली और अजीब प्रकृति तथा रिद्धि सिद्धि वाला पुरुष उन्हें पूर्ण महात्मा और भगवान् का अवतार दिखाई देता था, इसी से भगत धन्ना राम जी को वह अपना परम गुरु समझते और साक्षात् भगवान् के अवतार के समान उनकी पूजा, सेवा करते थे। पर यों यों आशान्वित (होन्हार) राम ने आध्यात्मिक और मानसिक शिक्षा में उन्नति पाई, और उन्नति करते करते आध्यात्मिक शिक्षा का एम, ए पास कर लिया (अर्थात् निजानन्द में मस्त व मग्न होकर संन्यासी भी हो गये), और भगत जी अपनी उसी रिद्धि सिद्धि की कुरसी पर हो

जमे रहे, तो परिणाम यह निकला कि शिष्य महाराज तो विरक्तात्मा और मस्त स्वरूप हुए समस्त जगत के स्वामी वा सम्राट होगये, और भगतजी जैसे लाखों उनकी मस्ती (निजानन्द) से आकर्षित होकर उनके शिष्य वा भक्त हो गये।

यद्यपि भगत जी आगे उन्नति करने से रुक गये जिस से उन की प्रसिद्धि भी बहुत धीमी पड़ गई, तथापि वर्तमान काल के लाखों साधुओं और क्रोड़ों गृहस्थियों से अब भी अत्युत्तम और श्रेष्ठ हैं; यद्यपि पहिले के समान वह मस्त,शान्त और उदार चित्त नहीं देखे जाते, तथापि जो शान्त, सन्तुष्ट और उदार दशा उनके चित्त की अब भी पाई जाती है, वह भी बहुत कम महात्माओं में दिखाई देती है। बाल्य-ब्रह्मचारी होने के कारण तो वह क्रोड़ों गृहस्थों से अधिक पूजनीय और प्रशंसनीय हैं ही,पर अपनी सूक्ष्म बुद्धि,सादगी वा सरलता के कारण भी अनेक पण्डितों और महात्मओं से अब भी अधिक है। और वैसे, राम के कारण तो वह प्रत्येक के विशेषतः राम भक्तों के, पूजनीय ही हैं।

आज कल भगत जी कुजरांवाला में पुरानी मण्डी के के समीप रहते हैं। आयु लगभग ८० वर्ष के है। अब भी बल में आज कल के साधारण नव-युवकों से यदि अधिक नहीं तो कम भी नहीं है। अच्छे चलते फिरते हैं। सारे जीवन में शायद दो बार ही घोड़े पर चढ़े होंगे। सारा काम अपने सम्बन्ध में स्वयं आप करते हैं। साहस में किसी तरह से कम नहीं,यद्यपि उदारता वैसा नहीं। फिर भी धन्य हैं यह कि जिन को राम जैसे शिष्य मिले और धन्य हैं राम कि जिन्हों ने इन के आश्रय से वह उन्नति पाई जिससे राम स्वयं और उन के कारण भगत जी दोनों जगत-विख्यात हो गये।

स्वामी नारायण,

ॐ श्री स्वामी रामतीर्थ।

आगरा १९०५

ॐ
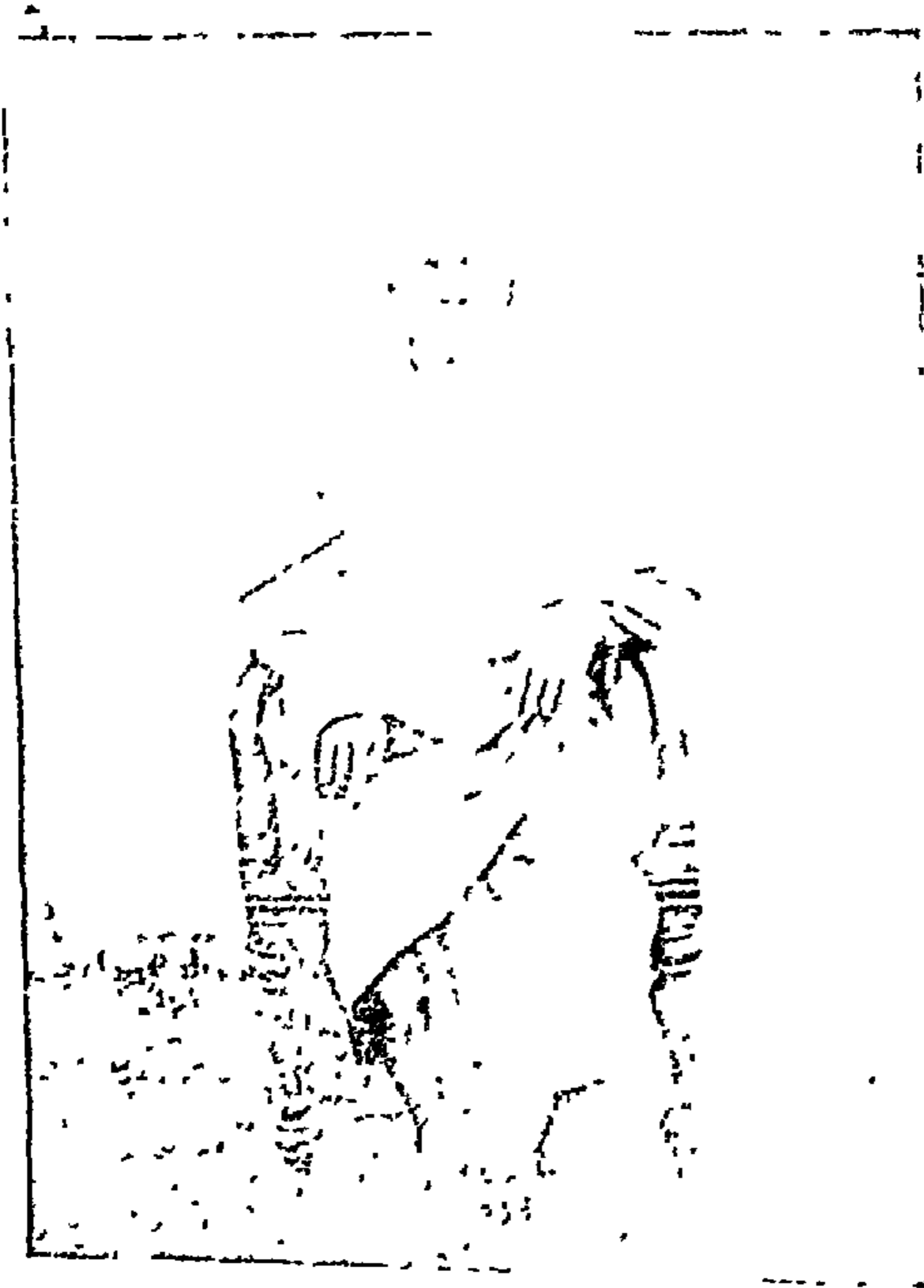
राम पत्र।

अर्थात्

स्वामी रामतीर्थ जी की पत्र-माला

* सन् १८८६ ईस्वी

(१) तीर्थराम जी की गुरु भक्ति।

२४ मई १८८६

रहनुमा-ए-सालिकाँ व पेशवा-ए-आरिफ़ां सलामत! †ग्राम वैरोके

(अर्थात्-मुमुक्षुओं के मार्गदर्शक और

ब्रह्मवेत्ताओं में शिरोमणि! प्रणाम)

आप का कृपा पत्र मुझे वैरोकी के मेले से एक दिन पहिले मिला था। उसमें लिखा था कि "मेले को आवेंगे", इस वास्ते मैं भी मेले को गया, पर मुझे दर्शन न हुए। यहां

---

* सन् १८८६ ईस्वी में तीर्थराम जी की आयु साढे बारह (१२॥) वर्ष के लगभग थी। इस काल में वह गुजरांवाले नगर के हाईस्कूल की मिडल (मध्यम) कक्षा में अध्ययन करते थे। यहां यह विचारनीय है कि इस बाल्यावस्था में भी तीर्थराम जी की अपने गुरु जी के साथ कैसी तीव्र भक्ति थी॥

† वैरोके में तीर्थराम जी का शायद श्वशुरालय (सुसुराल) था। वज़ीराबाद से लगभग तीन मील की दूरी पर यह ग्राम है। बाल्यावस्था में ही तीर्थराम जी का विवाह हुआ था जबकि वह अपने ग्राम में "मुराली वाला" की छोटी पाठशाला (प्राइमरी) में ही पढते थे। अब

लफ़ाफ़े नहीं मिलते, इस लिए पत्र में विलम्ब हुआ। आज केवल इस कार्ड निमित्त वज़ीराबाद आया हूं। मैं तो यहां से ही आपके चरणों में उपस्थित हो जाता, परन्तु किसी न किसी कारण से सदा रुक गया। मैं यहां अति उदास रहता हूं.........यदि कोई अपराध हुआ हो तो क्षमा करें।

आप का दास—

तीर्थराम

† सन् १८८८ ईस्वी

(इस समय तीर्थराम जी की आयु चौदह वर्ष और पांच मास थी)

(२) तीर्थराम जी की ऐंट्रेन्स (प्रवेश) परीक्षा

२० मार्च १८८८

जनाव महाराज बरगज़ीदह-ए-साधुवां व चीदह-ए आरिफ़ां जी !

(अर्थात् श्री सन्त शिरोमणि व परम ज्ञानी जी महाराज)

हाथ जोड़े सादर प्रणामोत्तर प्रार्थना है, कि आज सोमवार के दिन हमारी अंग्रेजी की परीक्षा हुई है। पर्चे (परीक्षा

किसी आवश्यक कार्यार्थ तीर्थराम गुजराँवाले से वहां गये थे। और यह शायद पहिली बार ही भगतजी से किञ्चित् अलग हुए थे। और भगतजी को मिले अथवा गुरु धारण किये अभी थोड़ा काल ही हुआ था। पर वाह री गुरुभक्ति जो बाल्यावस्था में भी इतनी उमड़ी कि केवल कार्ड लिखने निमित्त उसे इतनी दूर ले आई और बालक का भाविक हृदय प्रकट किये बिना न रही॥

† इस वर्ष ऍंटरेन्स इम्तिहान (प्रवेश परीक्षा) देनेको तीर्थराम गुजरांवाल से लाहौर गये थे और वहां से अपने प्रति दिन का समाचार गुरुजी को देते रहे। यहां विचारनीय बात यह है कि इतनी छोटी सी आयु में तीर्थराम जी को अपने गुरु जी पर इतना भारी विश्वास व पूर्ण श्रद्धा थी कि प्रत्यक कार्य की पूर्ति वे अपने गुरु जी महराज की कृपादृष्टि वा दया के आश्रय ही रखते थे और बिना उन की आज्ञा के कोई काम भी करना नहीं चाहते थे।

पत्र) न तो अति कठिन थे न अति सुगम। अच्छा जो आप करेंगे, हो जायगा। और हमारी परीक्षा सर्व प्रकार से २१ मार्च तक समाप्त होजायगी। जबकि मंगल या बुधवार होगा। आप की दया चाहिए, कृपा पूर्वक शुभचिन्तना करनी और कृपा दृष्टि रखनी। यह शरीर आप का सेवक (दास वा गुलाम) है।

आप का दासः—
तीर्थराम लाहौर.

(३)

२३ मार्च १८८८

जनाब महाराज, सत्गुरुजी, बरगज़ीदह-ए साधुवां व चीदह-ए-आरिफां जी !

(अर्थात् सन्तशिरोमणि व परम ज्ञानी श्री गुरुजी महाराज !)

सविनय हाथ जोड़े नमस्कारोत्तर विदित हो कि आज हम अंग्रेजी फ़ारसी तथा उर्दू भाषा की परीक्षा से निपट चुके हैं, अब त्वारीख़ (इतिहास), जुग़राफ़िया (भूगोल), रियाज़ी (अंकगणित), अलजबरा (बीजगणित), और साइन्स (विज्ञान) आदि विषय शेष रह गये हैं जो अति कठिन हैं। आप की कृपा चाहिये, दयादृष्टि रखनी, मैं आप का दास हूं। कृपापूर्वक यह चिन्तन करना कि जैसे मैं चाहता हूं वैसे परीक्षापत्र पर्चे लिख आऊं ॥ ॐ ॥

आप का दासः—
तीर्थराम लाहौर.

(४) ऐंट्रैन्स (प्रवेश) परीक्षा का परिणाम और कालेज प्रवेश।

१८ मई १८८८

श्री सद्गुरु जी महाराज भगत साहिब ! मुझ पर खुश रहो।

मैं सोमवार के दिन मिशन कौलेज में प्रविष्ट होगया हूं और एक मकान बच्छोवाली में एक रुपया मासिक किराया पर लिया है। उस मकान का मालिक महताब राय मिश्र है, इस लिये मुझे पत्र उस के पते पर लिखा करें। मुझे छात्र वृत्ति (वज़ीफा) नहीं मिली, और न मैं प्रथम वर्ग में पास हुआ हूं। मेरा नम्बर पञ्जाब में अठतीसवां है। यहां मिशन कौलेज में साढ़े चार रुपये फ़ीस है, इति। विशेष सादर प्रणाम।

आप का दासः—

तीर्थराम लाहौर।

(५) तीर्थराम जी की एकान्त-प्रीति

(इस पत्र से स्पष्ट हो रहा है कि तीर्थ राम जी इस छोटी सी आयु में भी कैसे एकान्त प्रेमी और विरक्त थे)

१० जून १८८८

श्रीमहाराज श्री भगत जी साहब !

आप की नित्य कृपा बनी रहे।

मत्था टेकना, विनती है कि दो तीन दिन हुए आप का कृपा पत्र पहुंचा, जिस में मेरे समाधि* में न जाने का कारण

*समाधि से तात्पर्य महाराजा रञ्जीत सिंह जी की समाधि है जो लाहौर में किले के समीप बनी हुई है। इस में कुछ कोठरियें रहने के लिये खाली थीं और बहुत थोड़े मासिक किराये पर मिलती थीं। भगत जी ने वहाँ रहने के लिये लिखा था, पर जब वहाँ एकान्त न देखा तो नगर के अन्दर तीर्थराम जी ने रहना स्वीकार किया जिस का कारण भगत जी के पत्र के उत्तर में अब वह देते हैं।

पूछा है। सो सब से मुख्य हेतु यह है कि वहां ऐसा एकान्त स्थान और स्वतंत्रता नहीं है जो यहां पर है। इसके अतिरिक्त और भी कई कारण हैं जो आप के सन्मुख कहे जावेंगे। मुझ पर दयादृष्टि रक्खा करो ॥ ॐ ॥

आप का दीन दास
तीर्थराम, एफ, ए-क्लास मिशन कौलेज
लाहौर

(६) तीर्थराम जी का हिन्दी *भाषा सीखना।

१६ अक्तूबर १८८८

श्री महाराज भगत जी साहिब,

मैं आप को बारम्बार प्रणाम करता हूं, आप की पत्रिका ने कृतकृत्य कर दिया। परमात्मा अब इस कार्य को सम्पूर्ण करे। अब मैं (हिन्दी) भाषा लिख पढ़ सकता हूं। आप कृपा दृष्टि रक्खा करें ॥ ॐ ॥

आप का दास
तीर्थराम।

(७) तीर्थराम जी को छात्र वृत्ति की नित्य लग्न

१४ नवम्बर १८८८

श्री महाराज सच्चिदानन्द स्वरूप, पूर्ण ब्रह्म, सर्वज्ञ, विभु, नित्य जी,

मैं आप के चरणों में सब कुछ अर्पण करता हूं, आप की पत्रिका पहुंची, बड़ा हर्ष प्राप्त हुआ। अब हमारी

*(नोट-इस मास से जुलाई सन् १८८९ के सारे पत्र हिन्दी भाषा में लिखे हुए थे)।

त्रैमासिक परीक्षा इस सोमवार को आरम्भ होगी। आप की दया चाहिये। आप ने चाहा तो छात्र-वृत्ति* मिल जायेगी॥

आप का दास
तीर्थराम।

(८) तीर्थराम जी का संस्कृत सीखना।

२५ नवम्बर १८८८,

श्री महाराज सच्चिदानन्द स्वरूप, सर्वव्यापक, सर्व-घटपूर्ण, सर्व शक्तिमान् जी,

मैं आप के चरणों में अपने आप को अर्पण करता हूं। मैं और दो तीन अन्य विद्यार्थियों ने ऐफ़-ए की परीक्षा के लिये कौलेज के पंडित जी से संस्कृत आरम्भ की है। केवल दो तीन पुस्तकें हैं, यदि तब तक तय्यार हो गई तो परीक्षा में ले लूंगा। यदि न हुई तो न लूंगा। पुरुषार्थ करूं तो कुछ बात ही नहीं, पर मैं आप की आज्ञा विना कुछ करना नहीं चाहता। केवल आप की आज्ञा का भूखा हूं और आप की कृपा दृष्टि का चाहने वाला। मुझे उत्तर ज़रूर भेजना॥

आप का दास
तीर्थराम।

(९) तीर्थराम जी की शारीरिक दशा।

२६ नवम्बर १८८८

श्री महाराज सच्चिदानन्द स्वरूप, पूर्ण ब्रह्म, सर्व शक्तिमान्, सर्वज्ञजी,

मैं आप के चरणों में सब कुछ अर्पण करता हूं।

*इस छात्र-वृत्ति से अभिप्राय म्योनिसिपल कमेटी गुजरांवाले की

आप की कोई पत्रिका नहीं आई······· आप के दर्शनों को जी (चित्त) बड़ा चाहता है। आप खुशी रक्खा करें। हमारी परीक्षा अब केवल कल मंगलवार को होगी। मेरी शारीरक दशा ऐसी है कि यदि एक दिन शौच आता है तो तीन दिवस तक नितान्त नहीं आता॥

आप का दास
तीर्थराम लाहौर

(१०) वार २ छात्र-वृति की उत्कण्ठा।

(तात्पर्य घना होने के कारण पत्र फारसी में लिखा गया)

२८ नवम्बर १८८८

श्री महाराज सच्चिदानन्द स्वरूप, पूर्णब्रह्म, सर्व शक्तिमान् जी,

मैं आप के चरणों में सब कुछ अर्पण करता हूं। आप के दो पत्र एक मेरे नाम और दूसरा लाला अयोध्या दास* के नाम आज मंगलवार को मिले। अत्यन्त हर्ष प्राप्त हुआ। हमारी परीक्षा आज समाप्त होगयी है। वह विद्यार्थी†

---

†छात्र वृत्ति है जो इस लिये नियत थी कि जो छात्र उन के हाई स्कूल गुजराँ वाले में ऐंट्रेंस परीक्षा में उतने नम्बर पा ले कि जो सरकारी छात्रवृत्ति पाने वाले विद्यार्थियों के नम्बरों के लग भग हों उसे दी जाय।

*लाला अयोध्यादास जिला गुजरांवाले के एक कस्बे (शेरखां जंडियाला) के रहने वाले हैं। जब तीर्थराम जी लाहौर में पढते थे तो उस समय यह लाला जी लाहौर में शेखुपरे के राजा हरवंश के वकील थे। आज कल अपने ग्राम में स्थित हैं, और बडे शुद्धात्मा, सत्संगी और सज्जन पुरुष हैं। यह भी तीर्थराम जी के साथ अति स्नेह रखते थे और इन की भक्ति व श्रद्धा भी भगत धन्नाराम में वैसी ही थी जैसी कि तीर्थराम जी की। इस लिये तीर्थराम जी ने अपने पत्र में इन के विषय वर्णन किया है।

जिसे कमेटी से छात्र-वृत्ति (वज़ीफा) मिली थी अब पढ़ना छोड़ बैठा है। सुना गया है कि कमेटी का मंत्री भी मास्टर चन्दूलाल* होगया है। इस लिये मैं आप की सेवा में प्रार्थना करता हूं कि आप लाला सरदारीमल आदि के द्वारा लाला शङ्करदास आदि के सन्मुख मेरे (छात्रवेतन के) विषय कुछ विचार करें। और शिष्यवृत्ति का मेरा अधिकार भी है क्योंकि जिन विद्यार्थियों को सरकार से शिष्यवृत्ति मिली थी उन के पीछे मेरा ही नाम परीक्षावलि में आता है। मैं इस शनिवार को आप के चरणों में उपस्थित हूंगा। आप मुझ पर दयादृष्टि रक्खा करें। मैं आप का दास हूं। इति, विशेष सादर प्रणाम ॥ ॐ ॥

आप का दास
तीर्थराम।

सन् १८८६ ईस्वी।

(इस समय तीर्थराम जी की आयु साढ़े पन्द्रह वर्ष के लग भग थी)

---

†सुना गया है और कुछ इस पत्र से भी स्पष्ट होता है कि इस विद्यार्थी को शिष्यवृत्ति कुछ पक्षपात से कमेटी से मिली थी, पर कौलेज में प्रविष्ट होने के पश्चात् यह निरुद्योगी और आलसी पाया गया जिस से कौलेज के अध्यापकों ने इस विद्यार्थी के विरुद्ध रिपोर्ट करदी, तिस पर इसने कौलेज में पढना छोड दिया ॥

*मास्टर चन्दूलाल जी गुजरांवाले के हाई स्कूल में प्रथम सैकंड मास्टर थे और तीर्थराम जी को पढाया करते थे जिस से वह तीर्थराम जी की विद्याशक्ति और योग्यता से पूरे २ परिचित थे। अब वह म्यूनिसिपल कमेटी गुजरांवाले के मंत्री नियत हुए थे, और कमेटी की ओर से जो शिष्य वृत्ति विद्यार्थियों को मिलती थी उस के देने का अधिकार इन को होगया था, इस लिये इस पत्र में तीर्थराम जी से इन के नाम का वर्णन हुआ ॥

(११) छात्र-वृत्ति की चिन्ता।

मार्च १८८६

श्री महाराज सच्चिदानन्द स्वरूप,सर्वशक्तिमान्,नित्य, अनन्त, विभु, अखंड, शुद्ध, बुद्ध,एक रस, आदिपुरुष अनिर्वाच्य जी !

मैं आप को नमस्कार करता हूं। आप का कृपा पत्र कल मिला था, मुझे खांसी* ने तंग कर रक्खा है। औषधि भी बड़े किये हैं और भोजन पाद भी पांचवां डंग (बार वा काल) है, और एक ही स्थान पर बैठा भी नहीं रहता हूं क्योंकि प्रति दिन कौलेज जाता हूं, और भूख का नाम तक नहीं। छात्र-वृत्ति नहीं मिली। आप दयादृष्टि रक्खा करें। मैं आप का दास हूं॥

आप का दास
तीर्थराम।

(१२) छात्रवृत्ति का मिलना।

१६ मार्च १८८६

श्रीमहाराज सच्चिदानन्द इत्यादि (पुर्वोक्त)

मैं आप को सब कुछ अर्पण करता हूं। मैं यहां पहुंच गया हूं। मुझे वज़ीफा (छात्रवृत्ति) मिल गया है। आप दया रक्खा करें॥

आपका दास
तीर्थराम

---

*इस पत्र व अन्य कई एक पत्रों से स्पष्ट होता है कि तीर्थ राम जी की शारीरक स्थिति नीरोग नहीं रहती थी बल्कि सारे विद्याध्ययनकाल तक वह नित्य रोगी ही रहे और ऐसी रोगी अवस्था में भी वह विद्या में सर्वोपरि उन्नति करते गये॥

(१३) कुसंग का त्याग ।

२१ एप्रिल १८८६

श्रीमहाराज इत्यादि (पूर्वोक्त),

मैं आपको सब कुछ अर्पण करता हूं, आप दया रक्खा करें। निःसन्देह कुसंग मनुष्य का नाश करदेता है। आप मुझे जिस प्रकार कहें, मैं उसी प्रकार करूंगा। कहो तो उस लड़के को आज ही जवाब देदूं, और कहो तो अभी कुछ काल तक न जवाब दूं (अर्थात् न निकालूं)। आप यदि शीघ्र दर्शन दें तो मुझे अति आनन्द हो। आप की सीहर्फियां (कवितायें) अति सुन्दर अक्षरों में आपके लिये लिखवाई हुई यहां पड़ी हैं॥

आपका दास
तीर्थराम

(१४) प्रार्थना का भाव।

२६ मई १८८६

*सत्यं ज्ञानमनन्तं (ब्रह्म) आनन्दामृत शान्ति निकेतन, मंगलमय शिवरूपम् अद्वैतम् अतुलम् परमेशम् शुद्धम-पापाविद्धम्,

मैं आपको सब कुछ अर्पण करता हूं, आप दया रक्खा करें। आपका पत्र कोई नहीं मिला, चित्त उस ओर रहता है ....'शुद्ध करो मेरे मन को (प्रभु जी) !

---

* २९ मई १८८९ से लेकर ३० अगस्त १८९८ तक सारे पत्रों के आरम्भ में तीर्थराम जी ने अपने गुरु जी को "सत्यंज्ञानमनन्तम्ब्रह्म', इत्यादि उपमा से सम्बोधन करके लिखा है,परप्रत्येक पत्र के आरम्भमें बार बार यह संबोधन लिखना उचित और आवश्यक नहीं समझा गया इसलिये उसके स्थान पर केवल "संबोधन पूर्वोक्त" ऐसा शब्द लिख दिया गया है॥

पापी मन मम रुकत न रोके। धीर धरो नहीं छिन (क्षण) को
शुद्ध करो मेरे मन को"

आपका दास
तीर्थराम

(१५) गुरुभक्ति का उदाहरण।

३ जून १८८६

सम्बोधन पूर्वोक्त,

आपका एक पत्र बहुत काल के पश्चात् मिला, बड़ा हर्ष हुआ ·· ···············कुछ दिनों से लाला अयोध्यादास की वृत्ति बदल गयी हुई थी। वह एक भाई सुजान सिंह* के चेले (शिष्य) के पीछे लगा हुआ था, और उस शिष्य ने उसे यह कहा हुआ था कि मैं तुझ को साक्षात् परमेश्वर दर्शाता हूं। इस कारण से लाला अयोध्यादास उसके पीछे लगा हुआ था, परन्तु अब मैं ने लाला जी का चित्त उस ओर से नितान्त हटा दिया है और वह आपके चरणों में दृढ़ हो गया है। महाराज जी! मैं आपको हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूं कि आप इस सप्ताह (अर्थात् शनिवार को) अवश्य यहां पधारें॥

आप का चरणसेवक
तीर्थराम।

(१६) निज-इच्छा विरुद्ध भी गुरु आज्ञानुसरण का भाव।

१६ जुलाई १८८६

संबोधन पूर्वोक्त,

*भाई सुजान सिंह गुजरांवाले में एक प्रसिद्ध मस्त और उन्मत्त सन्त थे।

हमें इस सप्ताह (अर्थात् शनिवार) को आशा है छुट्टियां होंगी, और [1]नीरंजनाभ मेरे साथ हमारे ग्राम में आना बड़ा चाहता है। आप यदि मुझे कहें तो मैं उसे लाऊंगा, नहीं तो न लाऊंगा। मैं आपके कहे पर चलूंगा। वह भाड़ा (किराया) अपने पास से देगा, और थोड़ा काल वहां रहकर उसका वापस चले आने का विचार है। मेरे पास वह पढ़ने के लिये रहना चाहता है। आप शीघ्र लिखें कि मैं उसे लाऊं या न लाऊं॥

आप का दास
तीर्थराम

(१७)

२२ जुलाई १८८६

संबोधन पूर्वोक्त

मैं आप का सेवक हूं, मेरे अपराधों को क्षमा करा करो। आप के दो पत्र मिले, बड़ा हर्ष प्राप्त हुआ। मैं नीरंजनाभ को कदापि साथ न लाऊंगा। मैं आप का आज्ञाकारी हूं॥

(१८) तीर्थराम जी की अधीनता।

२३ जुलाई १८८६

संबोधन पूर्वोक्त

आप के दो पत्र आज और मिले। मैं बड़ा ही पापी और अपराधी हूं। आप मेरे मन को शुद्ध करें, क्योंकि सब कुछ आप ही करने वाले हैं। मेरे पिता भी आप हैं, भाई भी और सब सम्बन्धी भी आप ही हैं। मुझ पर रहम (दया)

[1]नीरंजनाभ एक ब्राह्मण लड़का था जो तीर्थराम जी की रसोई बनाया करता था और साथ इसके उनसे विद्याध्ययन भी किया करता था। गुरु जी को इस लड़के का आचरण अच्छा प्रतीत नहीं होता था, इस लिये इसकी संगति से तीर्थराम जी को रोकते थे। परन्तु तीर्थराम

किया करो क्योंकि "अज़ ख़ुर्दां ख़ता व अज़ बज़ुर्गां अता" (छोटों से अपराध और बड़ों से क्षमा) चली आती है। मनुष्य से अपराध भी हो जाते हैं। मैं आप का दास हूं, जिस प्रकार कहोगे, उसी प्रकार करूंगा।

आप का दास
तीर्थराम

(१९) अन्तःकरण की कोमलता।

२४ जुलाई १८८९

संबोधन पूर्वक,

आप का एक और पत्र आज मुझे मिला। मैं तो आप के संकेत (इशारे) को भी अत्यन्त स्पष्ट समझ जाता हूं, आप फिर मुझे बार २ क्यों ताकीद (अनुबोध) करते हैं?। मैं ने तो अब नरिंजनाथ से बोलना भी छोड़ दिया है। मुझ पर आप क्रुध क्यों होते हैं? मेरा आप के विना कोई ठिकाना नहीं। मुझ पर दया दृष्टि करो। मुझ पर यदि आप प्रसन्न होंगे तो भी मैं आप का हूं, और यदि क्रुद्ध (नाराज़) होंगे तो भी मैं आप के चरणों में पड़ा रहूंगा। मुझ पर करुणा करो॥

आप का दास
तीर्थराम

सन १८९० ईस्वी
(इस वर्ष तीर्थराम जी की आयु साढ़े सोलह वर्ष के लगभग थी)

जी को यह गरीब और भोलाभाला दिखाई देता था, इस लिये इसे पढाने तथा अन्य प्रकार से सहायता देने में तत्पर रहते थे। तथापि वह अपने चित्त के अनुसार विना गुरु की आज्ञा के कुछ नहीं करना चाहते थे इस लिये इस के विषय में उन्होंने ने पत्र द्वारा गुरु जी से आज्ञा मांगी॥

(२०) निरभिमानता।

११ फरवरी १८६०.

सम्बोधन पूर्वाङ्क,

हमारी वार्षिक परीक्षा के प्रवेश-शुल्क (इम्तिहान के दाख़ले) के लिये गुरुवार और शुक्रवार नियत हुए हैं। इन दिनों में से चाहे किसी दिन प्रवेश-शुल्क (दाख़ले) कौलेज में दे दूं। मैं ने अभी लाला ......से रूपये नहीं लिये॥

अब महाराज जी! मुझे बड़ी चिन्ता लगी हुई है, क्योंकि मुझे अपने आप पर किञ्चिन्मात्र भी विश्वास (भरोसा) नहीं। मैं बड़ा अयोग्य (नालायक़) हूं। यदि मेरी छात्र-वृत्ति इस बार न लगी तो मेरे चित्त को अति खेद होगा।

आप साक्षात् परमेश्वर हैं, सब कुछ कर सकते हैं, सब कुछ जानते हैं। किंबहुना आप की उपमा मेरी लेखनी की आवश्यकता नहीं रखती।

अब बात यह है कि अभी तो समय है, यदि आप की सम्मति में मुझे इस वर्ष प्रवेश-शुल्क (दाख़ला) भेजना उचित हो तो मैं भेज देता हूं, नहीं तो अगले वर्ष परीक्षा दे दूंगा। मैं आप का सेवक हूं, आप ने उत्तर विचार कर शीघ्र लिखना। मुझे अपनी प्रवीणता (हुश्यारी) और परिश्रम पर कुछ विश्वास नहीं। पर हां यदि आप सहायता दें, तो मुझे सब कुछ आशा हो सकती है, मुझे इस वर्ष छात्र-वृत्ति मिल सकती है!!

इतना काल बीता, आप का पत्र कोई नहीं आया, क्या कारण है? अब मुझे आप ने भुला दिया है? जब किसी के मन्द (बुरे) दिन आते हैं, तो ऐसा ही होता है।

आप का दास
तीर्थराम

(२१) तीर्थराम जी को वार्षिक परीक्षा का प्रवेश पत्र भरना।

१३ फरवरी १८९०

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं आप के चरणों में सब-कुछ अर्पण करता हूं, आप दया रक्खा करें। कल तक मैं ने यह समझा हुआ था कि परीक्षा में प्रवेश होना अथवा न होना मेरे वश (इख़्त्यार) में है, पर यह बात नहीं निकली। आज साहिब ने सब से पूर्व मुझ से फार्म (प्रवेश पत्र) पर नाम लिखवा लिया है। और जब फार्म पर नाम लिखा गया तो प्रवेश शुल्क (दाख़ला) अवश्य देना पड़ेगा। और परीक्षा में अवश्य जाना पड़ेगा। इस लिये मैं आज लाला ·····से रुपये कल प्रवेश-शुल्क (दाख़ला) देने के लिये ले आया हूं। अब आप ने अवश्य दया करनी। मेरे अपराधों को क्षमा करना, मुझ पर दया रखनी, मैं आप का दास हूं॥

आप का दास
तीर्थराम

(२२) बुरे स्वभाव वाले पड़ोसी से उपराम (परहेज़)

८ मार्च १८९०

संबोधन पूर्वोक्त,

·········आज दो बजे हमारे पास का मकान वेश्याओं ने ले लिया है और वह आज ही इस मकान में आना चाहती हैं. इस लियें अभी थोड़े काल के लिये हम आज ही कोई और मकान किराया पर ले लेंगे। फिर जब आप आयेंगे तो

अन्य किसी अच्छे मकान की योजना (तज्वीज़) कर लेंगे...
मैं आप का सेवक हूं। आप अवश्य शीघ्र पधारें। आप
मुझ पर क्रुद्ध (नाराज़) क्यों हैं? मैं तो आप का दास हूं।

दास तीर्थराम

(२३) परमेश्वर का दया और शान्तस्वरूप गुण।

१० मार्च १८६०

संबोधन पूर्वोक्त,

न तो आप ही आते हैं और न पत्र ही भेजते हैं। न मालूम मैं ने क्या अपराध किया है जो मेरी ओर से आप का चित्त इस प्रकार खिन्न गया (अर्थात् उपराम होगया) है। परमेश्वर के गुणों में से दयास्वरूप और शान्तस्वरूप होना एक बड़ा भारी गुण है। फिर आप मेरे प्रमादों (भूलों) की उपेक्षा (दर गुज़र over-look) क्यों नहीं करते? मुझे प्रतीत होता है कि आप को मेरे विषय कोई बुरी बात ईश्वर की ओर से प्रतीत हुई है, इस लिये आप मेरे साथ अब बोलते नहीं, जिस से कोई यह न कहे कि तीर्थराम भगत जी का (सेवक) था और फिर अपनी वाँछा (मुराद) को प्राप्त न हुआ। पर महाराज जी! आप लोगों के कथन पर ध्यान मत दें। मेरी तो यह दशा है कि:—

"गर बख़ानी ईं दरस्त, व अर बरानी ईं दरस्त
जाय दीगर मन नदानम, ईं सरस्त व ईं दरस्त"

(तात्पर्य) यदि आप बुलायं वा सत्कार करें तो आप का ही द्वार है और यदि तिरस्कार करें तो भी आप का ही द्वार है। मैं और स्थान नहीं जानता, मेरा यह सिर है और आप का यह द्वार है।

आनां कि खाक रा बनज़र कीमिया कुनंद।
आया बुवद कि गोशये चश्मे बमा कुनन्द॥

(अर्थ):—

जो हम भूलें वचन उचारे, क्षमा करो अपराध हमारे॥

आप का दास
तीर्थराम

(२४) ऐफ-ए की वार्षिक परीक्षा।

२० मार्च १८९०

संबोधन पूर्वोक्त,

आज हमारी फारसी की परीक्षा होगयी है। परसों गणित-शास्त्र की जिसे मैथेमैटिक्स भी कहते हैं परीक्षा होगी। गणित शास्त्र सब से क़ठिन विषय है और सब से अतिगूढ़ है। आप दया रक्खें। आप की सहायता बिना कुछ हो नहीं सकता।

दास तीर्थराम

(२५)

२३ मार्च १८९०

संबोधन पूर्वोक्त,

आज के परीक्षा पत्र बड़े कठिन आये थे। परसों हमारी साइन्स (विज्ञान-शास्त्र) की परीक्षा है, जो कि महा कठिन विषय है॥

दास तीर्थराम

(२६)

२५ मार्च १८९०

संबोधन पूर्वोक्त,

आज हमारी विज्ञान-शास्त्र (साइन्स) की परीक्षा हुई,

प्रायः सब प्रश्न ही, पुस्तक से बाहर थे। परसों अंग्रेजी व साइन्स (विज्ञान-शास्त्र) की मुखपरीक्षा (ओरल) होगी। विज्ञान-शास्त्र की मुखपरीक्षा अत्यन्त कठिन है, कारण यह कि यदि उस में कोई उत्तीर्ण (पास) न हो तो सारे विज्ञान-शास्त्र में फ़ेल (अनुत्तीर्ण) गिना जाता है। अंग्रेज़ी की मुखपरीक्षा भी कठिन ही हुआ करती है। आप अवश्य मेरा ध्यान रक्खा करें।

दास तीर्थ राम,

(२७) तीर्थराम जी को उग्र ज्वर।

१६ एप्रिल १८९०

संबोधन पूर्वोक्त,

अभी हमारी परीक्षा का परिणाम नहीं निकला, कदाचित् (शायद) आज या कल निकल आवे। कल मंगलवार में अति बीमार होगया था। दस बजे दिन को उग्र (सख्त) ज्वर चढ़ गया, और सिरपीड़ा तथा कमर-पीड़ा उस से अतिरिक्त थे। न मेरे पास कोई मनुष्य मात्र था। यह उग्र ज्वर लगभग रात के बारह बजे तक रहा। अब आराम है। ...... आप दया करें। मैं आप का सेवक हूँ। यह पत्र लिख चुकने के पश्चात् आप का एक पत्र मिला, बड़ा हर्ष हुआ।

दास तीर्थराम.

(२८) दृढ़ निश्चय समान कोई पदार्थ संसार में नहीं।

४ मई १८९०

संबोधन पूर्वोक्त,

आज आप की बहुत ही बाट ताकी आपका बड़ा ही

इन्तज़ार किया), पर आप नहीं आये। मन को अति दुःख हुआ। यदि आप ने न आना था तो पत्र ही भेज देते। सो आप ने यह भी नहीं किया। चित्त में विचार उठ रहे हैं कि क्या कारण जो आज नहीं आये, शायद चचा जी (पिताजी) नहीं मिले या शायद आपकी अथवा उनकी प्रकृति में कुछ बिगाड़ है, अथवा और क्या अकस्मात विघ्न पड़ गया।

एक दृढ़ निश्चय के समान संसार में अन्य कोई वस्तु नहीं।

दास तीर्थ राम,

(२९) *डाक्टर रघुनाथ मल की सहायता

१२ मई १८९०

संबोधन पूर्वोक्त,

आज सायंकाल की गाड़ी से चचाजी (पिता जी) के चलेजाने का विचार है। आज मौसा (पं० रघुनाथ मल) जी ने पचास रुपये भेज दिये हैं। आज मैं पुस्तकों के लिये लिख देता हूं, आप पत्र लिखते रहा करें।

सेवक तीर्थराम,

---

*पंडित रघुनाथ मल जी तीर्थराम जी के मौसा (मासड़) थे। वह हांसी हिसार आदि प्रान्त में असिस्टेण्ट सर्जन थे। जब तीर्थराम जी ने प्रवेश (एन्टरेन्स) परिक्षा पास की, तो उन के पिता निर्धन होने के कारण उन्हें आगे पढ़ाना नहीं चाहते थे बल्कि किसी दफ़तर में नौकर होने के लिये विवश करते थे। पर तीर्थराम जी नौकरी के लिये उद्यत नहीं होते थे, किन्तु आगे पढ़ने पर उत्सुक थे। तीर्थराम जी के इस उत्तम आशय को पालन कराने में जिन सज्जनों ने सहायता की उन में पंडित रघुनाथ मल जी मुख्य थे॥

*पुस्तकों से तात्पर्य यहां बी. ए. श्रेणि की पुस्तकों से है, क्योंकि इस काल तक तीर्थ राम जी बी. ए. में प्रविष्ट हो चुके थे।

(३०) रुपयों का खोया जाना और काले सर्प की पूँछ का ऊपर आ पड़ना।

१४ मई १८६०

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का पत्र आये बहुत काल होगया है। आप शीघ्र कृपा करें। जब मैं इस मकान में आया था सब सामान तो बाहर की कोठरी में रक्खा था, पर सन्दूक भीतर की कोठरी में। उस सन्दूक में पचास रुपये पं० रघुनाथ मल वाले और सात रुपये जो छात्रवृत्ति* के मिले थे रक्खे थे। पचास रुपये चाचा जी (पिता जी) अपने हाथ से रख गये थे, और सात रुपये उन से पहिले एक कागज़ में बन्द करके मैं ने आप रक्खे थे। कल मैं ने सोचा कि वह सात रुपये कागज़ से निकाल कर उन पच्चास रुपयों के साथ मिलाकर रखदूं। पच्चास रुपये तो वहां पड़े हुए पाये किन्तु सात रुपये न निकले। उस समय तो मैं ने सन्दूक बन्द करके ताला लगा दिया। फिर सायंकाल को सोचा कि पुनः देखूं। कोठड़ी का द्वार खोलते ही एक काले सर्प की पूँछ बड़े ज़ोर से मेरे ऊपर आन पड़ी। मैं डरकर बाहर दौड़ आया, और एक मनुष्य से कोठड़ी को ताला लगवा कर ऊपर कोठे (छत) पर जा बैठा। आज सन्दूक को कोठड़ी के भीतर से बाहर निकलवाया है, और बाहर के कमरे में रक्खा है। किन्तु सन्दूक का कोना २ सब पुस्तकें बाहर निकाल कर देखा है, तथापि उन सात रुपयों का पता तक नहीं मिला।

---

* छात्र-वृत्ति से तात्पर्य म्यूनिसिपल कमेटी गुजरांवाले की छात्र वृत्ति है, सरकारी छात्र-वृत्ति से नहीं॥

महाराज जी ! मैं ने सन्दूक तथा कोठड़ी दोनों को विना ताला लगाये कदापि नहीं छोड़ा, पर यह बड़े आश्चार्य की बात हुई है। महाराज जी ! जिस सर्प का मैं ने वर्णन किया है उस से अतिरिक्त एक या दो अन्य सर्प भी साथ के तवेल (अश्वशाला) में अवश्य रहते हैं क्योंकि उस मकान में मैं सर्पों के चलने की रगड़ के चिन्ह बहुधा पाता हूँ। आप दया रक्खा करें और मुझ को भुला न दें॥

यद्यपि इस मकान में सर्प तो अवश्य हैं, पर प्रति दिन मकान के बदलने में अति कष्ट होता है, इसलिये मैं अभी इस मकान से उपराम नहीं हुआ। आप कृपा रक्खा करें, मैं आप का सेवक हूं।

दास तीर्थराम

(३१) कर्तव्य-निष्ठा।

२१ मई १८६०

संबोधन पूर्वोक्त,

कल आप का एक पत्र मिला था। बड़ा हर्ष प्राप्त हुआ। पुस्तकों के विषय में तो कल मैं ने आप को लिख ही दिया था, आने के विषय में यह है कि मुझे आप की आज्ञा से तो किञ्चित् इन्कार नहीं, परन्तु कार्य इतना अधिक है कि यदि मैं अपने कर्त्तव्य पालन में त्रुटि न करूं तो सिर खुजलाने को भी अवकाश नहीं मिलता। आगे जैसा आप लिखेंगे, वैसा ही करलूंगा।

आप का दास तीर्थराम

(३२) कालेज के काम (अर्थात् अभ्यास) का भार।

६ जून १८९०

संबोधन पूर्वोक्त,

आप ने पत्र में विलम्ब क्यों किया है? मेरी ओर से कोई फर्क़ (विभेद वा विच्छेद) नहीं है। मैं सत्य कहता हूं कि आज कल हमें बड़ा ही (अभ्यास का) काम होता है, इसलिये मैं नहीं आ सका। अब हमें नाम मात्र तो दो छुट्टियां मिली हैं, परन्तु काम इतना है कि दो सप्ताह में भी कठिनतापूर्वक पूर्ण हो सकता है। अन्ततः अधूरा काम करना पड़ता है। आप ने कोई और ख्याल मन में न लाना। मैं आप का दास (गुलाम) हूं। आप अब आ जायं।

आप का दास तीर्थराम

(३३) ऐनक की आवश्यकता।

११ जून १८९०

संबोधन पूर्वोक्त,

पिछले आदित्यवार में अपने साहिब की चिट्ठी लेकर आँखें दिखाने गया था। तब आँखें देखने वाले साहिब (डाक्टर) ने मुझे एक पत्र लिख दिया था, वह पत्र मैं ने बम्बई भेजा है। वहां से मुझे पाँच रुपये की ऐनकें जो मेरे योग्य हों आयेंगी। इस शनिवार हमारी गणित की परीक्षा है। यहां वर्षा बड़ी हुई है, इस लिये मेरे मुख का स्वाद कल से किञ्चित् कम कड़ुवा है, और भूख भी कुछ अधिक है॥

आप का दास तीर्थराम

(३४) नेत्रों की दूरदृष्टि में कमी।

२४ जून १८९०

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं उस डाक्टर के पास गया था जिस ने मुझे ऐनकों के लिये बम्बई पत्र लिख दिया था। उस ने मेरी ऐनकों को अपने सन्दूक की ऐनकों के साथ मिलाया तो यह वही ऐनकें निकलीं जो लिखी थीं। मैं ने डाक्टर जी से कहा कि मैं इन से अच्छे प्रकार पढ़ क्यों नहीं सकता। वह कहने लगे कि यह पढ़ने के लिये नहीं हैं, दूर से देखने के लिये हैं। और तुझे अभी पढ़ने के लिये ऐनकें नहीं खरीदनी चाहियें। महाराज जी! इन से मैं दूर से भली प्रकार देख सकता हूं। कालेज का घोड़ा अच्छा दिखाई देता है। हमारे कालेज के साहिब ने भी कहा कि जिस प्रकार तुझे वह डाक्टर कहे उसी प्रकार कर। इस लिये मैं ने अभी ऐनकें वापस नहीं कीं। आप की क्या सम्मति है॥

आप का दास तीर्थराम

(३५) ज़ाहरदारी (अर्थात् बाह्य आचार वा बर्ताव) पर आभ्यन्तर अवस्था को प्रधानता।

२४ जून १८९०

संबोधन पूर्वोक्त,

महाराज जी! आप मुझ पर क्रुद्ध (नाराज़) हैं, पर मैं जानता हूं कि इस क्रोध का कारण इस से अतिरिक्त और कोई नहीं है कि आप ने मेरे हृदय को नहीं देखा, केवल बाह्य आचरण तथा व्यवहार को देख कर ही आप मेरे विषय बुरे अनुमान कर बैठे हैं। यदि आप मेरे हृदय को देखें तो मैं आशा करता हूं कि आप क्रुद्ध न हों।

आप ने यह अनुमान न करना कि यदि मेरी ओर से किसी बाह्य सन्मान तथा सेवा में कोई त्रुटि हो गयी है, तो उस का कारण आप की ओर से मेरे चित्त का विमुख हो जाना है। यह बात कदापि नहीं है, क्योंकि मैं प्रत्येक कार्य में आप की सहायता का आकाँक्षी हूं, और अपने चित्त में सर्वदा आप का ध्यान रखता हूं। प्रथम तो अभ्यास अथवा और किसी उत्तम कार्य की ओर चित्त लगने में आप की सहायता की आवश्यकता है, फिर उस कार्य के उद्योग में आवश्यक पदार्थों की प्राप्ति के लिये आप की सहायता चाहिये। तत्पश्चात् यदि उस कार्य में परिश्रम किया जाये तो उस के सफल होने में भी आप की सहायता की आवश्यकता है। संक्षेप से यह कि प्रत्येक कार्य में आप की सहायता की आवश्यकता है।

यदि किसी बाह्य व्यवहार तथा सेवा में त्रुटि हुई है, तो उस का कारण ऐसा है:—द्रष्टान्त रूप से, यदि मैं पढ़ने में परिश्रम करूं और उस पढ़ने में केवल स्वार्थ ही दृष्टिगोचर हो और आप की ओर से चित्त हटा लूं तो निःसन्देह यह बड़ी बुरी बात है। पर मेरी ऐसी दशा नहीं है। मैं अगर परिश्रम करता हूं तो मेरे चित्त में (मैं बिल्कुल सत्य कह रहा हूं, आप ने कोई और अनुमान न करना) किञ्चित् अपना रस (स्वार्थ) भी दृष्टि में रहता है, परन्तु विशेषतः यह ख़्याल होता है कि यह पढ़ना आप का काम है। यदि मैं अच्छा पढ़ूं (अभ्यास करूं), तो मानो आप की अधिक आज्ञा पालन की है, और आप की सेवा विशेष करके की है। और आप के विरुद्ध अंशमात्र भी कोई काम नहीं कर रहा।

अब यदि पढ़ने की ओर मैं अधिक ध्यान दूं और आप की बाह्य सेवा में किसी प्रकार से यदि त्रुटि हो जाये (पर

मैं सत्य कहता हूं कि मेरा मन नितान्त पूर्ववत् है बल्कि पूर्व से भी बहुत भले प्रकार आप का आज्ञाकारी है) तो चाहे बाह्य-द्रष्टा की दृष्टि को मेरी त्रुटि का अनुमान हो, परन्तु अन्तर्द्रष्टा की दृष्टि को स्पष्ट प्रतीत होरहा है कि मैं पहिले से भी अधिक आप की सेवा कर रहा हूं। चाहे अब यह प्रतीत हो रहा है कि मेरा ख़्याल आप की (बाह्य सेवा इत्यादि की) ओर कम है, परन्तु बाह्य रूप से मेरा यह कम ख्याल आप की ओर प्रतीत होना अन्त में मुझे ऐसा योग्य कर देगा कि आप की सेवा लक्षगुणा अच्छी करूं, यदि आप मेरी बाह्य-चेष्टा पर क्रुद्ध (या असन्तुष्ट) न हो जायें और मेरे परिश्रम (जो कि आप का काम है) के सफल होने में सहायता दें, क्योंकि अन्त में मैं आप की सहायता का दीन हूं। यह कहावत प्रसिद्ध है "हिम्मते मर्दां मददे-ख़ुदा" जिस का अर्थ मैं यह करता हूं कि मनुष्यों के यत्न में ईश्वर की सहायता की आवश्यकता है॥

मेरा यह पढ़ना (अध्ययन करना) आप का बहुत बड़ा काम है। बर्ताव (सत्कार तथा सेवा आदि) के कामों को भले पुरुष इतना बड़ा काम नहीं समझते। इस लिये आप का बहुत बड़ा काम करने में (अर्थात् पढ़ने में) यदि आप के किसी छोटे (बाह्य सन्मानादिक) काम में त्रुटि हो जाये, तो क्षमा करदें॥

फिर यह कि कई पुरुष होते हैं जो केवल मन से अधिक सेवा कर सकते हैं और कई बाह्य पदार्थों से। परन्तु मैं चाहे किसी बाह्य-पदार्थ से आप की सेवा न कर सकूं, पर मन से तो आप का बड़ा आज्ञाकारी हूं।

जो विद्यार्थी घरों से पढ़ने आते हैं वे (पढ़ने में अधिक प्रवृत रहने के कारण) अपने पिता माता को पत्र तक भी

बहुत कम लिखते हैं। उनका (इस प्रकार) अपने माता पिता की ओर अधिक ख्याल होना तो दूर रहा, परन्तु उन के माता पिता भी कभी यह अनुमान नहीं करते कि हमारा पुत्र हमारे विरुद्ध हो गया है। वे समझते हैं, हमारा ही काम कर रहा है॥

यदि आप यह कहें कि एक दूसरे के बाह्य सत्कार की ओर अधिक ध्यान न देने से प्रेम में त्रुटि हो जाती है, तो यह बात मेरे विषय में नितान्त नहीं, क्योंकि मैं तो मन में आप का बड़ा ही ध्यान करता रहता हूं। प्रत्येक कठिन स्थान में आप याद रहते हैं। और यह एक प्रकार का आभ्यन्तर मिलाप होता है (चाहे बाह्य दृष्टि से आप को प्रतीत न हो)। साथ इसके मेरा आप का संबन्ध पिता पुत्र का है जिस के टूटने का प्रलयकाल (क़्यामत) में भी भय (संदेह) नहीं होता। आप और कुछ अनुमान न करें, मेरा मन तो सदा साफ़ (शुद्ध) है॥

फिर यह कि जो अनुचित काम मनुष्य से होता है, उस के कारण दो हो सकते हैं:-प्रथम मूर्खता या अज्ञानता, द्वितीय उस के मन की अपवित्रता वा मलिनता। जब मेरे से कोई अनुचित व्यवहार प्रतीत हो, तो आप यह विचारें कि उस का कारण क्या है। यदि पहिला कारण हो (केवल जो कारण मेरे अनुचित कामों में सर्वदा होता है), तो आप इस को दूसरा कारण समझ कर मुझ पर क्रुद्ध (या असंतुष्ट) न हो जाया करें। बल्कि चाहिये कि यदि किसी से कोई अनुचित चेष्टा अज्ञानता से हो जाये, तो उस पुरुष को उस की अज्ञानता का बोध करादें, पर उसे यह न कहें कि "तेरा मन शुद्ध नहीं है, और तू मलीन चित्त वाला है, या तेरा हमारी ओर चित्त बुरा है"।

अब यदि कोई और कारण आपके क्रोध (असन्तुष्टता) का है तो वह अवश्य लिखदें क्योंकि जब तक मनुष्य को कारण न बताया जाये वह क्या जाने कि कोई क्यों नाराज़ (रुष्ट) है। यह अवश्य कृपा करनी कि अपने मन का क्रोध एक पत्र में प्रकट कर भेजना, और मेरी मूर्खता पर मुझे सूचना देनी। आप अवश्य मेरे विषय में बुरा अनुमान जो आप के चित्त में है हटा दें॥

पत्र के भारी हो जाने के भय से मैं इसे समाप्त करता हूं, और विश्वास करता हूं कि आप इतने (लेख) से ही मेरी आभ्यन्तर दशा से सुबोध होजायेंगे, और कृपा पत्र लिखेंगे॥ ॐ॥

आप का दास
तीर्थराम

(३६) धार्मिक विषयों में अनुराग

४ जुलाई १८९०

संबोधन पूर्वोक्त,

अभी पंडित रघुनाथ मल जी ने रुपये नहीं भेजे। महाराज जी! आप एक दो पैसे वाले लफाफे में लिखें कि आप जब लाहौर में आये थे तो बाबा † जवाहरदास के साथ आप का क्या संवाद हुआ था, क्योंकि उसने यहां यह प्रसिद्ध कर रक्खा है कि भगत जी ने इस बात के सिद्ध करने में मेरे साथ सम्वाद किया था "कि जो मनुष्य मरता है (चाहे वह कौन हो), उसको अपने पाप पुण्य का फल कुछ नहीं मिलता, चाहे वह भले कर्म करे, चाहे बुरे, वह मुक्त हो जाता है"।

† जवाहरदास एक उदासी साधु थे जो प्रायः गुजरांवाले जिले में घूमते रहते थे और कभी कभी लाहौर आ जाया करते थे।

क्या आप ने सचमुच इस बात (विषय) के सिद्ध करने में उसके साथ संवाद किया था। परन्तु मैं आशा करता हूं कि बाबा जी ने आप के कथन का तात्पर्य नितान्त नहीं समझा होगा। इस लिये उन्होंने झूठ मूठ यह बात प्रसिद्ध करदी है, और मुझे अयोध्या दास ने कहा है कि बाबा जी ने यह बात प्रसिद्ध की हुई है*।

(३७) कुल्फी न खाने की प्रतिज्ञा।

८ जुलाई १८९०

संबोधन पूर्वोक्त

आप का कृपा पत्र कोई नहीं आया, क्या कारण है ?, आप अवश्य पत्र लिखें। आज पं० रघुनाथ मल जी के दस रुपये भेजे हुए मुझे मिले हैं, परन्तु यह बड़ी शीघ्र ही खर्च हो जायेंगे। पुस्तकों पर बड़ा खर्च आता है। मैं व्यर्थ खर्च नितान्त नहीं करता। जिस दिन आप के सन्मुख मैंने कुलफियां खाई थीं, उस दिन से मैं ने नित्य के लिये कुल्फी खानी नितान्त छोड़ दी है। आप दया रक्खा करें।

आप का दास तीर्थराम,

(३८) गुरु जी के रोष (खफगी) को दूर करने की अत्यन्त चिन्ता।

१२ जुलाई १८९०

संबोधन पूर्वोक्त

आप लिख तो दिया करें कि हम इस बात पर रुष्ट हैं

---

*भगत जी महाराज से अभी मालूम हुआ कि उन्हों ने साधारण पुरुष के विषय में ऐसा नहीं कहा था केवल इतना कहा था कि ज्ञानी को,चाहे वह किसी जाति का हो,किसी कर्म का लेप नहीं होता, वह मर कर मुक्त हो जाता है।

(जब रोष का कारण मालूम न हो और केवल इतना ही मालूम हो कि आप रुष्ट हैं, तो बड़ा खेद होता है)। मैं बारंबार आप को ध्यान दिलाता हूँ कि यदि कोई अनुचित कर्म मुझ से हुआ है, तो वह जान बूझ कर कदापि नहीं हुआ होगा। उस का कारण मेरी अज्ञानता होगी। आप क्षमा करदें। क्या वह पत्र जिस में मैं ने बाबा जवाहरदास के विषय में कुछ लिखा था आप के रोष का कारण है? यदि ऐसा है, तो आप रुष्ट न हों क्योंकि वह सारा पत्र अयोध्यादास के कहने पर था, मुझे उस से कुछ सम्बन्ध नहीं। चाहे आप कोई बात कहें मुझ को आप पर किञ्चिद् आपत्ति (एतराज़) नहीं। इस लिए अब तो एक पत्र लिखो। और भविष्य में इस प्रकार तुच्छ तुच्छ बातों पर रुष्ट होना कुछ कम करदें तो अति कृपा होगी। जब मैं आप के कहने मात्र से मान जाता हूं, तो रुष्ट क्यों होना? जब छड़ी से काम चल जाये, तो डंडे की क्या आवश्यकता है?

आप का दास तीर्थराम,

(३९) छात्रकाल में मन का उद्वेग।

१२ जुलाई १८९०

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का एक पत्र मिला, बड़ा आनन्द हुआ। हमें छुट्टीयां पहिली अगस्त या उससे दो तीन दिन पाहिले को होंगी ..... मैं परमेश्वर से या आप से प्रार्थना करता हूं कि किसी प्रकार छुट्टियों में मैं बड़ा परिश्रम करूं, किसी प्रकार से कालक्षेप न हो, और मेरा परिश्रम यथार्थ रीति से हो, और परमेश्वर उस परिश्रम को सफल करे। क्योंकि मैं अपने आप को बड़ा ही अयोग्य (नालायक़) समझता हूं, और

वास्तव में हूं भी बड़ा ही अयोग्य। इसलिये जो मेरा संकल्प है उस का तात्पर्य यही है कि किसी प्रकार से मैं परिश्रम अधिक करूं, और लक्ष्य नहीं। मैं आशा करता हूं कि मुझे ऐसे संकल्प में अवश्य सहायता देंगे। मेरी अवस्था पर अवश्य तर्स (दया) करो······· मैं चाहे यहां रहूं चाहे वहां रहूं, आप का तो दास हूं। इस समय जो मेरा संकल्प है वह मैं लिख देता हूं। यदि यह बदल गया तो भी लिखूंगा। संकल्प पढ़ा हो, आप ने यह न अनुमान करना कि आप के विरुद्ध है, क्योंकि मेरे प्रत्येक संकल्प से मुख्य उद्देश्य यह होता है कि आप के साथ प्रीती (सत्कार) और भी अधिक हो। मेरा लक्ष्य उस के विरुद्ध नहीं होता। अब संकल्प यह है:—"कि पहिले कुछ दिन अर्थात् सात या आठ दिन के लगभग तो नितान्त लाहौर में ही रहूं, और उन दिनों में अपने पिछले पढ़े हुए (अधीत पाठ) का अभ्यास (पुनरावर्तन) करूं (यदि हांसी न जाना पड़ जाये, तो)। तद्पश्चात् गुजरांवाले कुछ दिन रह कर देखूं कि पढ़ा जाता है या नहीं। पाँच चार दिन वैरोके रहने का भी संकल्प है, और कुछ दिन मुरालीवाले। साथ इसके हांसी जाने का भी विचार है, क्योंकि मासड़ (मौसा) ने लिखा था। यदि वहां एकान्त स्थान मिल गया तो वहां ही शायद अधिक दिन अर्थात् एक मास के लगभग रह पड़ूं। और पिछली (अन्तिम) छुट्टियां फिर लाहौर में आकर काटूं॥ परन्तु रघुनाथ* शरण के लिये मैंने एक अति उत्तम बात सोची है जिससे वह अच्छा भी हो जाय और अध्यापक की भी उसे कम ज़रूरत पड़े। आप से यही मांगता हूं कि मेरा किसी प्रकार से कालक्षेप न हो।······अब और बात लिखता हूं। अब तक हांसी से मैं ७०) सत्तर

*रघुनाथ शरण भगत धन्नाराम जी की बुआ का लड़का था।

रुपये मंगा चुका हूं, तीस और मंगवाने हैं। वह इस लिये नहीं मंगाये थे कि उनसे जो पुस्तकें खरीदनी थीं वह भारत वर्ष में नहीं मिल सकती थीं, परन्तु अब भारतवर्ष के ग्रन्थ विक्रेता (बुकसैलर) के पास थोड़े दिनों तक वह पुस्तकें विलायत से आ जाती हैं, और मेरी श्रेणि के सब विद्यार्थी उन पुस्तकों को छुट्टियों से पहिले खरीद लेंगे जिससे छुट्टियों में उन्हें अपने घर देखें। इस लिये मैं भी उचित समझता हूं कि रुपये मंगा लूं। योंहि पुस्तकें आयें, खरीद लूं। उन पुस्तकों पर तीस रुपये से कुछ कम लगेगा। बीस रु० के लगभग लगेंगे। बाक़ी के रुपये आप की दौलत हैं। थोड़े से मुझे भी दे देने। आप लिखें कि रुपये अभी मंगाऊँ या नहीं। ॐ॥

आप का दास
तीर्थराम

(४०) लाहौर में छुट्टियां व्यतीत करने के विषय में अति उत्तम युक्तियां और उदाहरण

१६ जुलाई १८६०

संबोधन पूर्वोक्त,

हमें छुट्टियां प्रथम अगस्त से होंगी। आज १६ जुलाई है। मैं आप का सदा आज्ञाधीन हूं। आप कोई और अनुमान कभी न करें। जिस कार्य में कोई मनुष्य नित्य प्रवृत हो, उसे कुछ काल के पश्चात् एक शक्ति प्राप्त होजाती है, जिससे उसको विना विचारे उस कार्य के संबन्ध में जो अच्छी बात हो वह सूझ जाती है। और उस अच्छी बात के अच्छा होने की जो युक्तियां हैं उनका प्रभाव तो उसके मन में पड़ जाता है, चाहे वह सिद्ध करने की युक्तियां स्वयं उसके मन में न

आयें। और बहुधा ऐसी युक्तियां मन में नहीं भी आतीं, क्योंकि युक्तियों का आना और बात है (यह पंडितों व शास्त्र वेताओं का काम है और सारे मनुष्य पंडित या शास्त्र-वेता नहीं होते), और वह शक्ति जिससे यह प्रतीत हो जाता है कि अमुक काम ठीक है, पर उस काम के होने में युक्ति मन में नहीं आती, उस शक्ति का नाम संज्ञान (Conscience या ज़मीर) है। मैं जब छोटा था, तो कविता इत्यादि पढ़ने से शीघ्र भाँप लेता था कि अमुक कविता उसी वृत्त (metre, छन्द) पर है जैसी कि अमुक दूसरी, या अमुक कविता और छन्द की है, परन्तु यह नहीं जानता था कि क्या वृत्त (छन्द) है, और उन दोनों में भेद किस बात में है, यद्यपि इतना प्रतीत होता था कि कुछ भेद उन में अवश्य है। अर्थात् अपने अनुभव के सिद्ध करने में युक्ति नहीं दे सकता था यद्यपि अनुभव नितान्त सत्य होता था। जैसे केवल दश वर्ष के अभ्यास के पश्चात् अब कविता के विषय में मैं युक्ति देने के योग्य हुआ हूं और जानता हूं कि यह युक्ति उस समय भी दी जा सकती थी, चाहे मैं युक्ति से अपरिचित था, अर्थात् युक्ति अवश्य थी यद्यपि मैं नहीं जानता था। इस से यह सिद्ध हुआ कि सच्चा मनुष्य सर्व काल युक्ति नहीं दे सकता, कोई कोई समय उस की बात बिना युक्ति सुने भी माननी चाहिये, यदि इतना हमें विश्वास हो कि "वह मनुष्य जान बूझ कर बुरा काम नहीं करने वाला, और यदि वह ऐसा काम कर रहा है कि जिस में वह युक्ति नहीं दे सकता, तो वह अपने अन्तरात्मा (ज़मीर) के अनुसार चल रहा होगा।"

(उक्त दृष्टान्त का) दार्ष्टान्त यह है कि मैं आप को निश्चय दिलाता हूं कि मैं आप का अन्तः हृदय से सेवक हूं,

और जो काम मैं करता हूं, चाहे ऊपर से मैं उस विषय युक्ति न दे सकूं, पर वास्तव में वह काम ऐसा होता है जैसा मुझे इतने वर्ष का अभ्यास दर्शाता है कि यह काम अच्छा है, और इस काम के करने में कल्याण होगा। इस लिये आप कहीं यह न अनुमान कर बैठें कि जब यह (अर्थात् मैं) युक्ति नहीं दे सकता तो इसको (अर्थात् मुझे) कोई और प्रयोजन उद्दिष्ट है, अथवा हम से तंग (उपराम) होगया है। यह बात कदापि नहीं। हाय, मैं आप को कैसे निश्चय कराऊं कि मैं आप का दास हूं।

पुनः यह कि जब मैं जानता हूं कि आप का जो विचार मेरे विषय में होता है उसका अन्तिम लक्ष्य (मूल उद्देश्य) यही होता है कि मुझको आनन्द हो, चाहे ऊपर से वह लक्ष्य या उद्देश्य कुछ अन्य ही प्रतीत होता हो। इस लिये मैं ख्याल करता हूं कि यदि मेरे अन्तरात्मा (ज़मीर) से या किसी अन्य अति पक्की रीति से मुझ को ठीक २ प्रतीत हो कि यह वार्ता मेरे लिये अच्छी है (पर जो मेरे लिये अच्छी है वह आप के लिये मुझ से भी अधिक अच्छी होगी, आप के लिये वह कदापि कदापि बुरी नहीं हो सकती), तो अवश्य आप की भी उस विषय में वही सम्मति होगी जो मेरे अन्तरात्मा (ज़मीर) की, या उस परिपक्व उपाय की जिस से कि वह वार्ता प्रतीत हुई है। और आप उस विषय में यह न कहेंगे कि उसने (मैं ने) हमारी आज्ञा भङ्ग की है, बल्कि यह कहेंगे कि उसने (अर्थात् मैं ने) हमारी पूर्ण रीति से आज्ञा पाली है। पुनः यह कि मैं चाहे किसी स्थान पर हूं, आप का तो दास हूं।

अब बात (सारांश) यह है कि आप ने लिखा था कि छुट्टियों में गुजरांवाले आ जाना। सो यह बात है कि

आऊंगा तो मैं अवश्य ही, चाहे कैसी दशा हो; पर यह बात नहीं हो सकती कि सारी छुट्टियां (गुजरांवाले) ही व्यतीत करूं। मेरा अन्तरात्मा (ज़मीर) कहता है कि "लाहौर में अधिक काल रहो" यह बात अन्तरात्मा की समझ कर मैं ने अधिक सोचा नहीं, पर तथापि दो एक युक्तियां लिखता हूं, (मैं बड़ा शोक करता हूं कि मुझे इन निकम्मी युक्तियों पर समय व्यर्थ खोना पड़ता है, पर मैं इस लिये इन पर समय खोने के लिये विवश होता हूं कि कहीं आप कुछ और समझ कर रुष्ट न हो बैठें। यदि मुझे इस बात का भय न हो कि आप रुष्ट हो जायेंगे, तो मैं इन युक्तियों पर समय व्यर्थ न खोऊं। क्या ही अच्छा हो यदि आप मुझ को अपना दास समझ कर मेरे शुद्ध निश्चय या सत्य वाक्यों में संशय न लाया करें।

इस बात (रहस्य) को मैं ने अब समझा है कि लाहौर के बिना अन्य किसी स्थान (बस्ती) में रहने से न केवल यह अवगुण (दोष) होता है कि वहां एकान्त स्थान नहीं मिलता, बल्कि एक अति कठिन और बड़ा अवगुण और भी है, वह यह कि वहां वृत्ति (चित्तावस्था) ऐसी नहीं रहती कि किसी सूक्ष्म कार्य को कर सके, वहां दीर्घदृष्टि जाती रहती है। इसका कारण यह है कि चिदात्मा (नफ़स) जो कि न स्थूल शरीर है और न स्थूल देह का अंग, वह विषयों की प्राप्ति से और भौतिक पदार्थों के संग से दुर्बल (अशक्त) और दूषित हो जाता है। और लाहौर के बिना अन्य सब स्थानों में यह दूषण (अवगुण) पाया जाता है, क्योंकि वहां सर्व साधारण के मेल जोल (संगति) से चित्त (स्वभाव) की मट्टी खराब हो जाती है।

अब यदि कोई पूछे कि लाहौर में भी तो मेल जोल होता

है, तो उस का उत्तर यह है कि लाहौर में जो मनुष्य मिलता है उस के साथ ओपरले (वाह्य) चित्त से एक बात की जाती है, जिस में मन का ध्यान उस की ओर नहीं जाता। पर और स्थानों में जो मनुष्य मिलता है, वहां बलात्कार उसकी ओर चित्त वृत्ति देनी पड़ती है, क्योंकि उससे जो मिलाप होता है, वह बहुत काल के पीछे प्राप्त होता है। साथ इसके लाहौर से अतिरिक्त अन्य स्थानों में अपने बन्धुजनों से मिलाप होता है, जिनकी ओर अधिकतम ध्यान देना अवश्य होता है। दूसरे, लाहौर में जो मेल मिलाप होता है, वह बहुधा अपने सहपाठियों से होता है, जो अधिक विक्षेप नहीं डालता।

अब यदि यह प्रश्न किया जाये कि क्या और भी कोई विद्यार्थी है जो छुट्टियों में लाहौर रहेगा? तो सुनियेः— *रुकुनदीन जो पञ्जाब में इस बार प्रथम रहा है नितान्त एक दिन भी सारी छुट्टियों में अपने ग्राम नहीं जायगा। वह स्वयं कहता है कि वह दस बारह दिन अब वहां (अपने ग्राम) से हो आया है, परन्तु छुट्टियों में वहां कदापि नहीं जायगा, आप मालूम कर लें।

संसार में कोई मनुष्य विद्या में चतुर (निपुण) हो ही नहीं सकता जब तक कि वह परिश्रम न करे। जो निपुण (चतुर) हैं, वे बहुत परिश्रम करते हैं, तब निपुण हैं। यदि हमें उनका परिश्रम विज्ञात न हो, तो वे गुप्त प्रकार से अवश्य करते होंगे, या वे पहिले कर चुके होंगे। यह वार्ता बहुत अनुसंधान की गयी है।

* रुकनदीन से अभिप्राय उस रुकनदीन साहिब ऐम, ए से है कि जो आज कल मिंटगुमरी के डिस्ट्रिक्ट जज के पद पर काम कर रहे हैं।

यह भी सत्य है कि छुटियों में कई विद्यार्थी घर जायेंगे और फिर भी वे चतुर (निपुण) हैं। किन्तु उनके विषय में और बात कारण है। उनके घरों में या उन स्थानों में जहां वे जायेंगे ऐसे निमित्त नहीं होते कि जो उनके चित्तों को अभ्यास से रोकें। वे विवाहे हुए नहीं होते, वा कोई और हेतु होता है, अथवा उनके मन बड़ी परिपक्वावस्था को प्राप्त हुए होते हैं जो बाह्य पदार्थों की ओर नहीं जाते। पर मेरा मन पक्का नहीं, यह अति दुष्ट है।

मेधा (ज़ेहन) जिस को कहते हैं,वह शक्ति भी परिश्रम से बढ़ती है। पुनः यह कि यदि संभावना से कोई मनुष्य विना परिश्रम किये किसी परीक्षा में अच्छा रह भी जाये,तो उस को पढ़ने का आनन्द कदापि नहीं आयेगा। वह मनुष्य बहुत बुरा है। वह उस मनुष्य के सदृश है जिस ने आप को एक समय कहा था कि मुझे एक सीहर्फी (कविता) बना दो और बीच में नाम मेरा रखना। अब चाहे उस ने लोगों में यह मशहूर (प्रसिद्ध वा प्रख्यात कर दिया) कि सीहर्फी मेरी है, परन्तु आप जानते हैं कि उस लेख में जो आनन्द आप को आता होगा उस मनुष्य को कदापि कदापि नहीं आसकता; अथवा वह उस मनुष्य के सदृश है जिस को और की मारी मराई (कमाई हुई विभूति) मिल जाये। अब चाहे उस के पास धन तो है, पर वह धन से आनन्द नहीं ले सकेगा, शीघ्र उस को क्षीण करदेगा। किन्तु जिस ने परिश्रम से धन कमाया है, वही लाभ उठायेगा।

आप मेरे पिता समान हैं, और पिता माता को ऐसा नहीं होना चाहिये जैसा कि वह गुजरांवाले का पाधा (पंडित), जिस के विषय आप ने एक समय सुनाया था कि उस ने अपने बड़े योग्य (निपुणमति) पुत्र को पाठशाला

में पढ़ने से बन्द कर रक्खा था, केवल इस लिये कि उस को अपने पुत्र से स्नेह [मोह] बहुत अधिक था।

किन्तु आप तो बड़े ही अच्छे हैं, आप को तो इस विषय में उस पाधे (पंडित) की सी उपमा (तुलना) त्रिकाल भी नहीं दी जासकती। आप का और उसका उदाहरण तो प्रकाश और अन्धेरे के समान है। कदाचित् आप के चित्त में यह बातें नहीं बीती होंगी, जो मैंने ऊपर लिखी हैं। तभी आप ने यह कहा कि लाहौर में मत रहना। अब दो वर्ष की बात है, अधिक काल भी नहीं। यदि अब परिश्रम न करूं तो और कब समय आयगा परिश्रम के लिये। आप मुझे दो वर्ष की छुट्टी दो, फिर सारी आयु आप के संग हूं। आप ने यह समझ छोड़ना कि हमारा पुत्र परदेश (विलायत) गया हुआ है, जब आयेगा फिर हमारा है। और मेरा ध्यान जब इस (पढ़ने की) ओर अधिक हो, तो आप ने मेरी बाह्य अपेक्षाओं (ज़रूरतों) का ऐसे ध्यान रखना जैसे कि एक महाराजा अपने योधाओं की रखता है जिस समय कि योधा युद्ध में अपने महाराजा के लिये शत्रु से लड़ रहे हों। आप ने कभी कोई और ख्याल (अनुमान) मेरे विषय में न लाना, मैं आप का दास हूं।

मैं यह जानता हूँ कि परिश्रम अति उत्तम वस्तु है (पर मैं परिश्रम इस प्रकार नहीं करने वाला कि रोगी हो जाऊं), किन्तु परिश्रम में लगने के लिये आप की (सहायता की) आवश्यकता है। आप मुझे सहायता दें कि मैं पढ़ने में परिश्रम करूं। आप की सहायता बिना परिश्रम भी नहीं हो सकता। हे परमात्मा! मेरा मन प्रयत्न (अभ्यास के श्रम) में अधिक युक्त हो, मैं अत्यन्त परिश्रम करूं, क्योंकि मेरे संकल्पों को पूरा करने वाले आप हैं। (सातवीं या आठवीं

छुट्टी के पश्चात् मैं गुजरांवाले आऊंगा, थोड़े ही काल के बाद फिर लाहौर में यदि आजाऊं तो बड़ी अच्छी बात हो)

आप ने इस लम्बे लेख से रुष्ट न हो जाना। इससे वास्तव में अभिप्राय यही था कि किसी प्रकार से आप रुष्ट न हो जायें। † रघुनाथशरण को यह कह देना कि यदि अच्छा (निपुण) होना चाहता है, तो यों करे कि पुस्तक को कण्ठस्थ कर ले। इस बात में से इतने लाभ प्राप्त होते हैं कि मैं किसी प्रकार से वर्णन नहीं कर सकता। मुझे तेरह वर्ष के पश्चात् यह बात मालूम हुई है। यह बात अत्यन्त ही अच्छी है। मैं इस को विस्तार पूर्वक फिर कभी वर्णन करूंगा, जब गुजरांवाले आऊंगा। यह बात ऐसी है कि इस से केवल अपने शिक्षक (अध्यापक) से अतिरिक्त अन्य आचार्यों की नितान्त आवश्यकता नहीं रहती+।

आप का दास तीर्थ राम,

(४१) गुरु-आज्ञा पालन निमित्त ईश्वर से प्रार्थना।

१३ अगस्त १८९०

संबोधन पूर्वोक्त,

आपका एक कृपापत्र * देवीदयाल के हाथों का लिखा

† रघुनाथ शरण भगत धन्नाराम (गुरु जी) की भूआ का पुत्र था।

* लाला देवीदयाल जी तीर्थराम जी के गुरुभाई थे, अर्थात् वह भी भगत धन्ना राम जी की संगति किया करते थे।

+नोट— इस वर्ष तीर्थ राम जी की आयु साढ़े सोलह वर्ष के लगभग थी और बी-ए श्रेणि में प्रविष्ट हुए अभी केवल अढाई मास ही हुए थे और इस छोटी सी आयु में इस उच्च श्रेणि में लिखा हुआ यह युक्त तथा नम्रता भरा पत्र उनकी योग्यता और गुणों पर भली प्रकार से रौशनी डालता है।

हुआ मिला। अत्यन्त हर्ष हुआ। "हे परमात्मन्! मुझ से कभी कोई ऐसी बात न हो जो आप की इच्छा के विरुद्ध हो" हे पिताजी! मैं अपनी ओर से तो यही ही चाहता हूं कि सदा ही आप की इच्छा के अनुसार चलूं, मगर यदि कोई चूक हो जाय तो आप क्षमा करें और उसकी सूचना दें जिस से पुनः उस से बचने का प्रयत्न करूं।

आप का दास तीर्थराम,

(४२) अपनी व्याधि के कारण स्वयं जान लेने की शक्ति।

२६ अक्तूबर १८९०

संबोधन पूर्वोक्त,

कल एक बजे से पहिले कालेज में मुझे ज्वर आरम्भ हो गया था। उस समय मैं घर चला आया, बड़ी ही कठिनता से लुहारी दरवाज़े तक पहुंचा। वहां से यक्के पर चढ़ कर घर आया। यहां पांच छे बार वमन (उलटी) आयी, और एक बार शौच (जंगल)। परन्तु अशक्ति चढ़ गयी। अन्त में निद्रा आ गयी, और रात्रि के बारह बजे जाकर होश आई, तब से अभी तक जाग रहा हूं। अब प्रकृति अच्छी है। यह तीन दिन कालेज में जाने से जो मुझे ताप (ज्वर) चढ़ा, तो उसका कारण मैं यह समझता हूं कि वहां बारह बजे के लगभग मुझे शौच और वमन (क़ै) आनेवाले मालूम होते थे, पर मैं अध्ययन में प्रवृत रहा, और इनकी ओर ध्यान तक न दिया। अस्तु! अब मैं ऐसा नहीं करूंगा। और यदि मेरा पूर्वोक्त कथन (कारण) सत्य है, तो आगे से मुझे आरोग्यता (स्वास्थ्य) रहेगी। मैं आप का दास हूं, आपने मेरे अपराध क्षमा करना।

एक बड़ी बात लिखता हूं कि हमारे गणितशास्त्र के अध्यापक (प्रोफेसर) ने कहा है कि दस बारह दिन के पश्चात् मैं दो नई पुस्तकें आरम्भ कराऊंगा, तब तक तुम पुस्तकों को प्राप्त करलेना। पर बड़े शोक की बात है कि वह पुस्तकें मेरे पास नहीं हैं, और उन का मूल्य भी बहुत बड़ा है, अर्थात् १७) सतरह रुपये। सो अब क्या मैं पंडित रघुनाथ मल जी को लिखदूं कि रुपये भेज दें (क्योंकि उन्हों ने कहा हुआ है), अथवा कोई और उपाय करना चाहिये? उत्तर अवश्य शीघ्र [इसी डाक में] भेजना।

आप का दास तीर्थ राम,

(४३) फीस की मुआफी के विषय में चिन्ता

२ दिसम्बर,

संबोधन पूर्वोक्त,

आज मैं कालेज गया था, वहां और तो सर्व प्रकार से ठीक रहा, परन्तु मेरी फीस के नितान्त मुआफ होने में कुछ संशय पड़ गया है, क्योंकि जो अध्यापक [प्रोफेसर] मेरी आधी फीस अपनी जेब से देता था अब उसने वह बन्द कर दी है। और वे [कौलिज के क्लार्क इत्यादि] कहते हैं कि "हमें केवल आधी फीस मुआफ करने का अधिकार है। और उस प्रोफेसर* ने अपने पास से आधी फ़ीस देना इस लिये बन्द करदिया है कि वह कहता है कि

---

* यहां प्रोफेसर से अभिप्राय मिस्टर गिल्बर्टसन (Gilbertson) ऐम, ए. है जो उन दिनों लाहौर मिशन कालेज में गणितशास्त्र के प्रोफेसर थे, और इस विषय में तीर्थराम जी से बहुत सेवा लिया करते थे। आज कल यह साहिब देहली के गवर्णमेण्ट हाई स्कूल में हैड मास्टर (मुख्याध्यापक) हैं (१९१२)

अब मेरे पास कोइ काम ऐसा नहीं जो तुझ से कालेज में करवा सकूं; और धर्मार्थ मैं देता नहीं "। पर हां, यदि कोई काम मेरे संबन्ध निकल पड़ा, तो मेरी फीस मुआफ रहेगी।

आप का दास तीर्थ राम,

(४४) अन्य महात्माओं के दर्शन।

१६ दिसम्बर १८६०

संबोधन पूर्वोक्त,

कल मैं और भ्राता जी और अयोध्यादास उन महात्माओं* के दर्शन को छज्जू भगत के चुबारे गये थे, दर्शन हुए, गीता का सोलहवां अध्याय थोड़ा सा उन की वाणी से सुना। आप का मत्था टेकना कहा और बात छेड़ी, बड़े प्रसन्न हुए। पर वे कहते थे कि हम शीतकाल लाहौर ही में काटने का संकल्प रखते हैं। और फिर जब मौज आयगी गुजरांवाले में आयेंगे। अब चार बजे कौलेज से आ कर पत्र लिखा है। हमारी परसों गणित और अतरसों (तीसरे दिन) अँगरेजी की परीक्षा है। मेरी तापतिल्ली [गुल्म रोग] दूर नहीं हुई, बल्कि: बढ़ गयी है। आप दया रक्खा करें।

आप का दास तीर्थराम,

सन् १८६१ ईस्वी

(इस समय तीर्थराम जी की आयु साढ़े सतरह वर्ष के लगभग थी)

---

* यह महात्मा स्वयं प्रकाश उदासी साधु थे, यह स्वभाव के बड़े स्वतंत्र (खुलासे) थे। भगत जी ने तीर्थराम जी को उन के दर्शन के लिये सूचना दी थी, जिस दर्शन का प्रभाव इस पत्र में तीर्थराम जी ने प्रकट किया है।

(४५) परीक्षा में फ़ारसी भाषा के मौक़ूफ़ होने (न रहने) पर हर्ष।

२ जनवरी १८९१

संबोधन पूर्वोक्त,

आज मैं कालेज गया था, फीस के विषय में कुछ नहीं सुना, हमारी फारसी मौक़ूफ हो गयी है। यह परमेश्वर ने बड़ी दया की है। आप अपनी अवस्था से कृपया सूचना देते रहा करें। मैं राज़ी (प्रसन्न) हूँ॥

आप का दास तीर्थराम,

(४६) फ़ीस की मुआफी पर प्रिन्सिपल साहिब का वचन।

१८ जनवरी १८९१

संबोधन पूर्वोक्त,

आज मुझे हमारे कौलेज के डाक्टर साहिब मिले थे। वह कहते हैं कि हम ने प्रिन्सिपल साहिब से कहा था और प्रिन्सिपल साहिब यह कहते हैं किः-"अगर तीर्थ राम अपनी श्रेणी में चतुर रहे और सर्व प्रकार से अच्छा वर्ताव करे अर्थात् कभी अनुपस्थित न हो, या कोई और बात ऐसी न करे, तो हम तीर्थराम से फ़ीस न लेंगे, परन्तु एक संकेत और यह है कि मुझे (तीर्थ राम को) उन का काम भी करना पड़ेगा। दृष्टान्तरूप से, इस सप्ताह में कुछ लैक्चर लिखने पड़ेंगे"। आप दयादृष्टि रक्खा करें। आप का पत्र अभी तक कोई नहीं आया, सारा हाल लिखो।

आप का दास तीर्थ राम,

(४७) संसार के लोग कैसे होते हैं।

१ फरवरी १८९१

संबोधन पूर्वोक्त,

आज आप का एक पत्र मिला, बड़ा हर्ष हुआ। जब भाई * साहिब गुजरांवाले में आयें, आप ने अवश्य ही रोक देना कि किसी बुरे कार्य में प्रवृत्त न हों, और न अपने संबन्ध बढ़ाने का यत्न करें, नहीं तो बहुत पछताना पड़ेगा। रीछ को पकड़ लेना सुगम है, पर उस से छूटना अति कठिन है। संसार के लोग कभी किसी के नहीं होते, केवल अपना स्वार्थ नित्य दृष्टि में रखते हैं। सुन्दर २ दाना देख कर जाल में न फंस जाना। और भाई साहिब से कहना कि मुझे कोई पत्र क्यों नहीं लिखा?

आप का दास तीर्थराम,

(४८) समय पर उधार लेकर भी अपने मौसा (संबन्धियों) की जरूरत पूरी करना

६ फरवरी १८९१

संबोधन पूर्वोक्त,

आज आप का पत्र मिला बड़ा हर्ष हुआ। आज मासड़ [मौसा] जी का पत्र भी आया था। उन्होंने एक डिक्शनरी (कोष) की आकांक्षा जतलाई है जो सवा रुपये १।) को आ सकती है। मेरा विचार है कि इस आदित्यवार को मैं उन्हें कोष लेकर भेज दूं। सवा रुपया किसी से उधार

---

* भाई जी से तात्पर्य तीर्थराम जी को अपने बड़े भ्राता गोस्वामी गुरुदासजी से है जो आजकल अपने ग्राम में ब्राह्म वृत्ति का काम करते हैं।

लेलूं। और इस समय उन से कुछ मांगना भी उचित नहीं समझता।

हमारे कालेज के डाक्टर साहिब ने मुझे इस सप्ताह एक लैक्चर नक़ल करने (लिखने) को दिया है। इस शनिवार को हमारी गणित की परीक्षा है। दूसरे शनिवार को अँग्रेजी की। आप मुझे पत्र लिखते रहा करें और दया रक्खा करें। मैं आप का दास हूं।

आपका सेवक तीर्थ राम,

(४६) प्रतिदिन व्यायामार्थ प्रिन्सिपल साहिब का विद्यार्थी नियत करना।

२० फरवरी १८६१

संबोधन पूर्वोक्त,

.................आज मासड़ (मौसा) जी ने मुझे तापतिल्ली (प्लीहा रोग) की और गोलियां भेजी हैं। दो तीन दिन से प्रिन्सिपल साहिब ने मुझ पर एक विद्यार्थी (रुकनदीन) नियत किया है कि वह मुझे प्रति दिन छुट्टी के पश्चात् आधा घंटा तक व्यायाम किये विना घर न आने दिया करे, क्योंकि मैं इन दिनों बहुत ही दुर्बल और रोगी सा हो चला था।

आप का दास तीर्थराम

(५०) (विश्वविद्यालय की ओर से) वार्षिक परीक्षा में गणित शास्त्र में थोड़े नम्बर किये जाने का विचार (तजवीज़)

२ एप्रिल १८६१

संबोधन पूर्वोक्त,

महाराज जी! अब पंजाब विश्वविद्यालय में यह विचार

(तजवीज़) हो रहा है कि गणित-शास्त्र की परीक्षा में उसके नम्बर १५० के बदले १३० किये जायें, और कई अन्य विषय जिनके नम्बर वर्तमानकाल में १०० या १२० हैं उन विषयों के नम्बर भी १३० किये जायें, अर्थात् और कई विषयों को भी गणित शास्त्र के समान पदवी दी जाये। यह बात बहुत बुरी है। यह तो मानो परिश्रम और अपरिश्रम (अथवा प्रयत्न और अप्रयत्न) के भेद को उठा देना है। हमारा गणितशास्त्र का प्रोफैसर कहता था कि मैं इसके विरुद्ध यत्न करूंगा। आगे देखिये क्या होता है। आप पत्र लिखते रहा करें।

आप का दास
तीर्थराम

(५१) तीर्थराम जी के घर में चोरी।

७ एप्रिल १८६१

संबोधन पूर्वोक्त,

आज प्रातःकाल छे बजे मैं किंचित् काल के लिये महाराजा साहिब की *समाधि तक फिरने गया था। अधिक से अधिक पंद्रह मिनट लगे होंगे। वापस आया तो मकान का ताला (जन्दरा) बिल्कुल गुम (लुप्त) और द्वार आधा खुला था। अन्दर गया तो भीतर की कोठड़ी जो पौड़ियों (सोपान) के नीचे है खुली पड़ी थी।

धन्यवाद परमेश्वर को है कि मेरी पुस्तकें और वस्त्र उसी प्रकार पड़े हैं यद्यपि गड़वी गलास और पतीला नहीं हैं। एक टोपी चोर की यहां रह गयी है। आप दया रक्खा करें।

---

* समाधि से तात्पर्य महाराजा रंजीत सिंह की समाधि से है जो लाहौर में किले (गढ) के समीप है।

(५२) नवीन चारपाई [खट्वा] पर हर्ष ।

११ मई १८६१

संबोधन पूर्वोक्त,

मेरी चारपाई (खट्वा) अब नितान्त ही टूट गयी थी, दो दिन तो मानो पृथिवी पर ही सोता रहा। कल मैं पाँच आने का बान मोल ले आया था, आज चारपाई (खट्वा) नई उना ली है। पाँच पैसे उनाने में लगे हैं। मैं अब नवीन उनी हुई चारपाई को देखकर बड़ा खुश हुआ हूं। आज हमें छुट्टी (अनध्याय) थी। किराया का रुपया कल बावा जी को दे दिया था। अब मेरी प्रकृति अच्छी है।

आप का दास तीर्थराम

(५३) तीर्थराम जी का कालेज बोर्डिङ्ग (आश्रम) में जाने का विचार।

१६ मई १८६१

संबोधन पूर्वोक्त,

आज कालेज में आप का पत्र मिला था। बड़ा हर्ष प्राप्त हुआ। यदि आप आ जाते तो बड़ी ही अच्छी बात होती। क्योंकि मुझे वैसी चिन्ता न होती जो इस समय किंचित् हो रही है।

इस समय चिन्ता यह है कि जब आज प्रातः साढ़े पाँच बजे मैं कालेज पहुंचा, तो उसी समय बोर्डिङ्ग के सारे विद्यार्थी मुझे आकर कहने लग पड़े कि:—"अब आप को (अर्थात् मुझे) बोर्डिङ्ग में अवश्य रहना पड़ेगा। अब प्रिन्सिपल साहिब का आदेश होगया है।" फिर जब दो तीन घंटे बीते,

तो कालेज के *डाक्टर साहिब मुझे मिले और कहने लगे किः—"तू ने प्रिन्सिपल साहिब का आदेश सुना है या नहीं? मैं ने कहा कि सुना तो है, पर पहिले मैं अपने घर लिखकर अपने वाल्दैन (जिससे तात्पर्य आप से था) की आज्ञा लेना चाहता हूं। वह डाक्टर साहिब कहने लगे कि "प्रिन्सिपल का आदेश सब अवस्था में मानना पड़ेगा।" फिर जब कालेज बन्द होगया, अर्थात् पढ़ाई समाप्त कर चुके, तो प्रिन्सिपल साहिब ने कहा कि "तेरे लाभ कारण मैं ने यह आदेश दिया है"। अब इस सारी बात की जड़ (मूल) मैं लिखता हूं:—

एक दिन जब हमें छुट्टी थी तो मैं अपने डेरे (स्थान) में बैठ कर पढ़ रहा था। हमारे कालेज के लगभग सारे विद्यार्थी (आश्रमस्थ, तथा उनसे अतिरिक्त) मेरे मकान (स्थान) के सामने से गुज़रे। वे चले तो और जगह थे, पर मुझे साथ लेजाना चाहते थे। उन्हों ने मेरा मकान देखा और मुझ से सारी अवस्था पूछी। (मेरे साथ सारे विद्यार्थी अच्छा वर्ताओ करते हैं)। मैहरे (जलवाह) की दुकान से रोटी और मकान (स्थान) की कालेज से दूरी, और मकान का हवादार न होना इत्यादि सब अवस्था देख कर कहने लगेः—हम तुम्हारे इस मकान में रहने पर राजी (प्रसन्न) नहीं हैं। हमारे विचार से यही कारण है कि तुम बार २ रोगी हो जाते हो। और फिर रोगावस्था में तुम्हारी यहां खबर लेने वाला (अर्थात् सहायता करने वाला) भी कोई नहीं। हम चाहते हैं कि तुम बोर्डिङ्ग (आश्रम) में चले आओ। वहां आपके पढ़ने (अभ्यास) में नितान्त कोई विघ्न नहीं होगा, इत्यादि"।

---

* यह डाक्टर आर्बिसन साहिब थे जो उस समय मिशन कालेज में साइन्स के प्रोफेसर थे।

मैं तो तूष्णी (चुपका) हो रहा, पर वे (विद्यार्थी) कहने लगे कि हम प्रिन्सिपल साहिब को कह देंगे। सो उन्हों ने कह दिया। और प्रिन्सिपल साहिब ने मुझे उक्त आज्ञा दे दी।

अब महाराज जी! आप देखते हैं मेरा किसी प्रकार का अपराध नहीं है। अब वहां जाना पड़ा है। आप मुझ पर किंचित् रुष्ट न होना। मैं आप का दास हूं। मुझ पर दयादृष्टि रक्खें। आपके वस (वश) में सब कुछ है। बोर्डिङ्ग में एक कोठड़ी (कुटिया) सब से अलग है। वह हमारी श्रेणि के विद्यार्थी ने ली हुई है। पर वह विद्यार्थी अभी यहां नहीं है। यदि वह स्वीकार करले कि वह कुटि मुझ को देदे और आप अन्य विद्यार्थियों के साथ किसी और कमरे (कुटी) में रहे, तो बड़ी अच्छी बात हो। तीन रुपये और नौ आने (३॥~) प्रत्येक मास (वहां) देने पड़ते हैं। रोटी, मकान, पानी, चूहड़ा (भंगी) इत्यादि सर्व व्यय (खर्च) के लिये।

महाराज जी! मैं जानता हूं कि सब अपने मन के अधीन है। यदि हम चाहें तो मन को चाहे कहां एकाग्र करलें, यद्यपि बड़े परिश्रम और प्रयत्न की आवश्यकता है। जितना हम मन को अधिक एकाग्र करेंगे, उतना ही लाभ होगा चाहे कहां हों, जैसा कि बोर्डिंग के विद्यार्थी भी तो कई बार प्रथम या द्वितीय रहते हैं।

मैं आप से सहायता मांगता हूं कि मैं मन को वहां इस स्थान से भी अधिक एकाग्र कर सकूं। आपने मुझ को पहिले से अधिक सेवक समझना। आप अब यहां कब आयेंगे। आप यदि वहां बोर्डिङ्ग में मेरे पास आकर रहें तो किसी प्रकार का डर नहीं, क्योंकि और विद्यार्थियों [आश्रमस्थों] के संबन्धी भी तो सदा आते जाते रहते हैं।

अब क्योंकि वहां (बोर्डिंग में) जाना अवश्य हो गया है

और वह भी बहुत शीघ्र (जल्दी),इस लिये मैं ने यह संकल्प किया है कि इस वीरवार या शुक्रवार वहां चला जाऊं। मैं आप की स्वीकारता, प्रसन्नता और कृपा चाहता हूं, क्योंकि मैं सब के स्थान में आप ही को समझता हूं, और मेरा बड़ा भरोसा (आश्रय) आप ही पर है।

बारह आने की चार पुस्तकें अंग्रेज़ी भाषा की अति लाभदायक ली थीं। अब मेरे पास खर्च (व्यय) नितान्त समाप्त होगया है। अस्तु (खैर) लाला अयोध्यादास से मैं ले लूंगा। आप ने इस पत्र का उत्तर तत्काल कृपया कालेज में भेजना। और मुझे पत्र भेजने में कभी विलम्ब न करना। मेरे पर कृपादृष्टि रखनी।

यदि आप के विचार (मति) में मेरा वहां (बोर्डिंग में) न जाना उचित हो, तो आप लिखें कि उन को क्या उत्तर दूं।

आप का दास तीर्थ राम,

(५४) एक ही दम एकान्त अभ्यास छोड़ने से हानि की संभावना।

२३ मई १८६१

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं आज भी बोर्डिंग नहीं गया। अब अगले वीरवार या शुक्रवार पर बात जा पड़ी है, क्योंकि तब तक पहिली तारीख भी समीप आ जायगी। परन्तु एक उपाय दृष्टि में आता है जिस से वहां (बोर्डिंग में) न जा सकूं। कि वह पृथक कुटी बोर्डिंग वाली जो मैं ने आप को लिखी थी वह मिलनी अब कठिन है, और मैं यह कहूं कि जब तक वह कोठड़ी (कुटी) मुझे न मिले मैं नहीं आता, क्योंकि यक-

लख़त [एक ही दम] नितान्त एकान्त अभ्यास के स्वभाव को हटा देना मेरे लिये अति हानिकारक होगा।

आप का दास तीर्थराम,

(५५) मकान में पुनः सर्प।

२३ मई १८६१

संबोधन पूर्वोक्त,

आज कौलेज से मैं आया, तो मकान का द्वार खोलते ही एक सर्प कौड़ियों वाला मेरी ओर पड़ा। जो सर्प मैं ने प्रथम देखा था (जब पहिले मकान में आया ही था) उस से यह सर्प आधा था। कदाचित् उस का बच्चा हो। मैंने लोगों को बुलाया, उन्हों ने मार दिया।

कौलेज के सब लोग मेरे बोर्डिंग में न जाने के अत्यन्त विरुद्ध हैं। वे कहते हैं कि यदि अब तुम यह स्वभाव न डालोगे कि लोगों के बीच में भी पढ़ सको, और प्रत्येक स्थान में मन को एकाग्र कर सको, तो तुम्हें फिर कभी भी यह स्वभाव नहीं पड़ेगा। जैसे जो मनुष्य तैरना तो चाहे, पर पानी में न जाये, तो उसे कभी तैरना नहीं आता।

और आयु में जब मनुष्य बड़ा हो जाता है, तो उसे अलग मकान (स्थान) और समय मिलना अति कठिन होता है। क्योंकि कभी कोई मित्र मिलने आ जाता है, कभी कोई सम्बन्धी ही, इत्यादि। इस लिये यदि मनुष्यों के बीच में भी पढ़ने का स्वभाव न हो, तो पिछली आयु में उन्नति करना कठिन हो जाता है।

मैं ने डाक्टर* साहिब को वह बात कही थी, जो मैं ने

---

* डाक्टर साहिब से अभिप्राय डाक्टर आरविसन है जो साइन्स के प्रोफेसर थे।

पिछले पत्र में आप को लिखी थी। वह कहने लगे, प्रथम तो तुम्हारे मन में किञ्चित् भी फर्क़ (विपरीतता या विक्षेप) आएगा ही नहीं, और यदि आये भी तो पहिले दो तीन दिन कष्ट होगा, फिर तुम्हारा मन पढ़ने में अच्छा लग जाने लग पड़ेगा। और (इस से अतिरिक्त) बाह्य लाभ तो निःसन्देह वहां सब हैं।

तात्पर्य यह कि मेरा अब बोर्डिंग में न जाना किसी रीति से दिखाई नहीं देता। अब यह यत्न करना चाहिये कि बोर्डिंग में जाकर मन पहिले से भी अधिक लगे, क्योंकि अब वहां न जाने का यत्न करना व्यर्थ है। इस लिये इस वीरवार (गुरुवार) या शुक्रवार को मैं वहां जाने का संकल्प रखता हूं। आप इस वीर वार से पहिले यहां एक दिन हो जायं तो बड़ी कृपा हो, आप ने दास पर किसी प्रकार से दोष न आरोपना। मैं सर्व प्रकार से आप का आज्ञाकारी (सेवक) हूं।

आप का दास,
तीर्थराम।

(५६) बौर्डिंग का मासिक व्यय।

२५ मई १८९१

संबोधन पूर्वोक्त,

आज मैं ने सब बातें दर्याफत की हैं।

(१) ग्रीष्म ऋतु की छुट्टियों में हम को किराया इत्यादि नहीं देना पड़ता।

(२) जितने दिन हम रोटी खायें उतने दिनों का हसाब देना पड़ता है, और यदि कोई अतिथि हो तो जितने दिन

वह खाये उतने दिन हमारे हसाब में दाम अधिक किये जाते हैं।

(३) बोर्डिङ्ग की फीस (अर्थात् मासिक किराया) ॥-) नौ आने पहिली १ तारीख से लेकर बीसवीं (२०) तारीख तक चाहे कब दे दें। परन्तु भोजन का दिनों के हसाब से गिन कर मास के अन्त में दिया जाता है।

(४) मैं ने लाला *शिवराम को कहा था कि इतना खर्च मेरे रक्षक (पिता माता) नहीं दे सकते, वह हसाब करके कहने लगा कि लगभग एक रुपया यहां अधिक लगेगा। उस में कुछ बड़ा कष्ट नहीं है। यदि भोजन अच्छा मिल जाये तो तुम ने और खर्च कम कर देना। और यदि इसमें कष्ट भी हो तो केवल नौ मास, परीक्षा तक। और फिर यह भी कहने लगा कि प्रथम तो हम अधिक खर्च नहीं होने देंगे, और द्वितीय यहां तुम्हें अधिक पुस्तकों के खरीदने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी, क्योंकि तुम औरों से ले सकते हो। तृतीय यदि यहां प्रतिकूलता हो तो छुट्टियों के पश्चात् चले जाना।

आप का दास
तीर्थराम

(५७) विद्यार्थी अवस्था में सहपाठियों को प्रोफैसर के स्थान पर पढ़ाना।

२५ जून १८६१

संबोधन पूर्वोक्त,

हमारा गणित शास्त्र का प्रोफैसर बीमार था, इसलिये

---

*लाला शिवराम उस समय कौलेज बोर्डिंग के अध्यक्ष (सुपरिण्टैण्डैण्ट)थे।

एक घंटा प्रतिदिन उसके बदले में पढ़ाता रहा हूं। कल हमें (अर्थात् गणित शास्त्र के विद्यार्थियों को) पहिले छुट्टी हो गयी थी। मैं कालेज बोर्डिङ्ग आया। एक रुपया तुड़वाने के लिये सन्दूक़ से बाहर रक्खा (अपने बैठने के स्थान पर), मेरे कमरे का साथी दीना नाथ अभी नहीं आया था। परन्तु एक दो लड़के और बोर्डिङ्ग में आये हुए थे। मैं रोटी खाने रसोई में गया, किन्तु रुपया बाहर ही पड़ा रहा, और कमरे (कोठी) का ताला (जन्द्रा) भी मारा नहीं। रोटी (भोजन) खा कर जब आया तो रुपया नहीं था। दीना नाथ ने बहुत पूछा पाछा, पर मिला नहीं। न मालूम, किसने लिया। कदाचित् नौकर ने लिया, या किसी विद्यार्थी ने ही उठा लिया हो। कल से मुझे एक बड़ा संदूक मिल गया है, इससे बड़ा सुख है।

चार पाँच दिन से मुझे प्रत्येक दिन नकसीर (नाक से रुधिर बहना) आती थी, परन्तु कल रात को तो इतनी आई कि प्रायः (लगभग) अचेत (बेहोश) होगया। आज कालेज में भी नहीं गया, क्योंकि उस समय मस्तिष्क में अशक्ति अधिक थी। परन्तु सात बजे प्रातःकाल से लेकर अब तक प्रकृति अत्यन्त कुशल रही है। विद्यार्थी सब मेरे साथ सहानुभूति (हमदर्दी) करते हैं, और विशेष करके दीना नाथ बड़ी टैहल (सेवा) करता है। आज मैं ने बादाम और चार मग़ज़ घुटवा कर पीये हैं। इस समय सर्व प्रकार से कुशल है। आप दया रक्खा करें। मुझे पत्र लिखते रहा करें।

आप का दास
तीर्थराम

(५८) तीक्ष्ण (गरम) वस्तुओं का नितान्त असेवन (परहेज़)

२६ जून १८६१

संबोधन पूर्वांक,

मैं ने जो लफाफा (पत्र) लिखा था उस में एक बात लिखनी भूल गया था कि लाला शिवराम बोर्डिंग के व्यवस्थापक (मोहतमिम) को आप पर बड़ा विश्वास हो गया है। हम दोनों सोने से पहिले भजन किया करते हैं। मैं ने आप की बातें सुनाई थीं। वड़ा खुश हुआ। मैं अब तीक्ष्ण (गरम) वस्तुओं का नितान्त असेवन (परहेज़) करता हूं।

आपका दास तीर्थराम

(५६) अति परिश्रम मस्तिष्क की निर्बलता का कारण होता है।

१० जुलाई १८६१

संबोधन-पूर्वांक,

यहां अत्यन्त दर्जे की गर्मी पड़ती है, और मैं (जिस की प्रकृति पहिले ही गर्मी वाली है) बहुत ही तंग हूं। मेरा दमाग़ (मस्तिष्क) काम नहीं कर सकता। इस से आज बहुत ही कम पढ़ सका हूं। मेरा चित्त अब यह चाहता है कि छुट्टियां लेकर २५ जुलाई से पहिले ही आप के पास आजाऊं और कुछ आराम करूं। यदि मेरा दमाग़ ठीक होगया तब तो नहीं आऊंगा, और यदि न हुआ तो आप लिखो कि मेरा आना उचित है कि नहीं। यदि उचित हो तो आऊं, नहीं तो न आऊं।

दमाग़ की निर्बलता का कारण यह भी है कि पिछले दिनों अति परिश्रम करना पड़ा था आप मेरे पर दया रक्खा करें।

आप का दास तीर्थराम

(६०) तीव्र गुरु भक्ति और सेवा।

२ औक्टूबर १८६१

संबोधन पूर्वोक्त,

परमेश्वर के वास्ते एक पत्र लिखो। आप ने वृक्ष को अब तक पाला है, और पानी दिया है, अब अकस्मात् (एक दम ही) उस वृक्ष का ध्यान छोड़ना नहीं चाहिये। आप चाहे मुझे चाहें अथवा न चाहें, मैं तो आप का सेवक हूं। पर इतना अवश्य चाहता हूं कि आप (यदि अधिक नहीं तो) इतना ध्यान तो मेरी ओर भी रक्खा करें जितना कि अपने पानी भरने वाले मेहरे (जलवाह) या किसी अनुचर की ओर रखते हैं।

आप का दास
तीर्थराम

(६१) संसार के सुख रात के पक्षी का साया (छाया) हैं।

४ दिसम्बर १८६१

संबोधन पूर्वोक्त,

कल आप का पत्र मिला था, अति हर्ष प्राप्त हुआ। मैं ने कल से आप की ओर लिखने के लिये यह कार्ड अपने पास रक्खा हुआ था। परन्तु (गणित शास्त्र के) एक कठिन प्रश्न को हल करने में प्रवृत था। लिखने को अवकाश नहीं मिला। कल से कौलज का शेष काम भी अभी तक

और कुछ नहीं किया। अब आठ पहर के पीछे वह प्रश्न निकला (सिद्ध हुआ) है। अब और काम करूंगा।

परमात्मा का स्वरूप अद्भुत चमत्कारों का समूह है, संसार के सुख ऐसे हैं जैसे *उस रात के पत्नी का साया (छाया) जिस को कभी किसी ने देखा नहीं, किन्तु उस के आने की आवाज़ ही केवल सुनी है।

आप का दास
तीर्थराम

(६२) प्लीहा (तापतिल्ली) से आरोग्य प्राप्ति।

डिसैम्बर १८६१

संबोधन पूर्वोक्त,

हमारे कालेज के डाक्टर साहिब ने मुझे एक अंग्रेज़ी दवाई (औषधि) दिलवाई थी, अब कुछ तो व्यायाम के कारण और कुछ उसकी औषधि के कारण से मेरी तिल्ली (प्लीहा) नितान्त दूर हो गयी है। परमेश्वर की और आप की बड़ी कृपा हुई है। आप दया रक्खा करें।.......काम बहुत बड़ा होता है और परिश्रम चाहता है। आप कृपादृष्टि रक्खा करें जिस से मैं परिश्रम (उद्यम अथवा अभ्यास) करता रहूं और सदा बड़ी अच्छी रीति से सारा काम करूं।

आप का दास
तीर्थराम

---

*भगत धन्ना राम जी से विदित हुआ कि प्रत्येक रात्रि वह सब नियत समय पर एक पक्षी के उडने की आवाज सुना करते थे, परन्तु बहुत यत्न करने पर भी वह पक्षी रात्रि के समय किसी को दिखाई नहीं देता था, यद्यपि उस के उडने की आवाज अवश्य सब को सुनाई देती थी। उस पक्षी के दृष्टान्त से तीर्थराम जी ने संसार के सुखों को दर्शाया है।

ला० झगडूमल हलवाई ।

देहिली १६१२

सन् १८९२ ईस्वी

[इस वर्ष तीर्थराम जी की आयु साढ़े अठारह वर्ष के लग भग थी]

(६३) चोरी और दूसरों की हमदर्दी (सहानुभूति)

११ फरवरी १८९२

संबोधन पूर्वोक्त,

बोर्डिंग में अभी तक जाने का अवसर नहीं मिला। शायद आज जाना हो जाय। परसों रात को गुमटी बाज़ार वाले मकान से मेरा नुक्सान हो गया है। एक लिहाफ़ तथा तोशक [तूला, शयन सामग्री अर्थात् विस्तरा], एक थाली, गड्वी और कौल [कटोरा] चोर ताला [जन्दरा] तोड़ कर ले गये हैं। जो कपड़ों का जोड़ा धोना देने के लिये विस्तरे में रक्खा हुआ था वह भी ले गये हैं। पुस्तकें सब बच रही हैं। लाला ज्वाला प्रसाद* और झंडूमल† कहते हैं "कि हम

---

* लाला ज्वाला प्रसाद जी उस काल उसी कालेज में पढते थे और घर पर तीर्थराम जी से गणित पढा करते थे। केवल एक कक्षा उनसे पीछे थे। आजकल यह साहिब फीरोजपुर में वकील हैं।

† लाला झंडूमल उसी मिशिन कालेज में हल्वाई (मिष्ठान बनाने वाला) था। इस पुरुष ने तीर्थराम जी की उनके अध्ययन काल में तन मन धन से सहायता की। तीर्थराम जी के भविष्य के पत्रों से स्पष्ट प्रतीत होता है कि यदि किसी ने अपना स्वार्थ छोडकर तथा बिना शारीरिक संबन्ध के होने पर भी केवल सहानुभूति तथा धर्म से और पितृ वत् प्रेम से तीर्थराम जी की (उनकी अत्यन्त निर्धनता, दीन और तंग अवस्था में) सर्व प्रकार से सहायता की, तो वह यह झंडूमल हल्वाई था। इसने उनको अपना मकान रहने के लिये मुफ्त दिया। बडे प्रेम और सहानुभव से अपने घर पर उनको कई मास तक लगातार भोजन बिना किसी प्रकार का दाम इत्यादि लिये खिलाया। जब उसका अपना

नये वस्त्र [कपड़े] सिलवा देंगे और कि गुसाईं जी ! ज़रा भ्रम न करो, आप की सब ज़रूरतें हम पूरी कर देंगे। महाराज जी ! आप ने भ्रम न करना। मुझ पर प्रसन्न रहना।

आज सायंकाल बोर्डिंग को चले गये हैं।

(६३) बी. ए. की वार्षिक परीक्षा।

२४ मार्च १८९२

संबोधन पूर्वोक्त,

आज मैं एक विषय (गणित) की परीक्षा दे आया हूं। एक पर्चा अति कठिन आया था। पर मैं आशा करता हूं कि *आप ने मेरे लिये ख़्याल किया होगा। अब कल दूसरे प्रकार के गणित की परीक्षा है। मुझे उसका अत्यन्त भय है। आप ने अवश्य प्रार्थना करनी। परसों ओरल (मौखिक या वाचक) परीक्षा है जिसका मुझे सब से अधिक भय है, क्योंकि यदि कोई उस (वाचक) परीक्षा में उत्तीर्ण न हो, तो सारी परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं होता। कदाचित् कल तो आप यहां स्वयं ही आजावें।

आप का दास तीर्थराम

मकान टूट गया, अथवा न रहा, तो तीर्थराम जी को और पुरुषों से मकान बिना किराया के दिलाया और सर्व प्रकार के दुःख तथा क्लेशों के दूर करने में जहां तक बन सका इस पुरुष ने तीर्थराम जी की अत्यन्त सहायता की। संक्षेप से यह कि जिस चित्त, प्रेम और हित के साथ इसने तीर्थराम जी की सहायता की, वह लेखनी की सीमा से बाहर है, और अति प्रशंसनीय है।

* इन दिनों में भगत धन्नाराम जी अपनी वाणी की सिद्धि में बड़े प्रसिद्ध थे, जो कुछ शाप तथा वर किसी को देते थे वह शीघ्र पूरा हो जाया करता था। तीर्थराम जी को इनकी संकल्प सिद्धि से भी पूरी २

(६४) बी. ए. श्रेणि में पुनः प्रविष्ट होना।

२ मई १८६२

संबोधन पूर्वोक्त,

†आज मैं कालेज में प्रविष्ट हो गया हूं ....
कई बार हमारे कालेज का जो हलवाई (झंडूमल से अभिप्राय है) है उस ने मुझ को पहिले भी कई वार बड़ी प्रीति से कहा था कि मैं रोटी उसके घर खा लिया करूं और आज पुनः उसने हाथ जोड़ कर कहा था। मैं ने आज उसको कह दिया कि "अच्छा खा लिया करूंगा"। दो तीन दिन खा कर देखूंगा, यदि उचित समझा, तो फिर भी खाता रहूंगा, नहीं तो छोड़ दूंगा।

(६५)

६ मई १८६२

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र इस सप्ताह कोई नहीं मिला।

खबर थी, इसलिये तीर्थ राम जी अपने विषय में नित्य शुद्ध तथा उत्तम संकल्प की उनसे प्रार्थना करते हैं और उनकी वृत्ति को अपने हित की ओर प्रार्थना द्वारा आकर्षित करते रहते हैं।

† इस पत्र से प्रतीत होता है कि तीर्थराम जी इस वर्ष बी-ए-की परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं हुए, जिससे पुनः बी-ए में प्रविष्ट हो गये। सुना जाता है कि यद्यपि संकलित नम्बरों के विचार से तीर्थराम जी अपने प्रान्त के विश्वविद्यालय में प्रथम थे। पर दैवयोग से अंग्रेजी विषय में नियत नम्बरों से उनके कुछ नम्बर कम आये इस वर्ष किसी न किसी निमित्त से अनेक विद्यार्थी अंग्रेजी भाषा में रह गए थे जैसाकि उन के पत्रों से स्पष्ट होरहा है, और विशेष करके योग्य और निपुण विद्यार्थी तो रह गये, परन्तु निकृष्ट अथवा अयोग्य विद्यार्थी जिनके विषय में अध्यापकों को भी कोई आशा नहीं थी उत्तीर्ण हो गये।

मैं परसों का उस पुरुष (झंडूमल) के घर रोटी (भोजन) खाया करता हूं। बड़ी प्रीति का भोजन होता है। जब आप आयेंगे तब आप ने यदि वहां मेरा रोटी (भोजन) खाना उचित न समझा तो मैं छोड़ दूंगा। मैं अनुमान करता हूं कि आप का मेरे विषय में ऐसा ही संकल्प था, इस लिये इस प्रकार का प्रबन्ध हो गया।

(६६) बी, ए में एक अति अयोग्य विद्यार्थी का अंग्रेजी भाषा की परीक्षा में प्रथम निकलना।

१४ मई १८६२

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं आप को एक अद्भुत बात लिखता हूं कि पहिले इतना तो आप को किञ्चित् विदित ही है कि इस वर्ष बी.ए. की परीक्षा में बहुत से योग्य और निपुण विद्यार्थी अँग्रेजी में रह गये हैं। अब जौन सा विद्यार्थी अंग्रेज़ी की परीक्षा में प्रथम रहा है वह इतना अयोग्य (नालायक़) था कि अंग्रेज़ी का प्रोफेसर भी उसे परीक्षा में कदापि भेजना नहीं चाहता था। सब लोग आश्चर्य हैं कि यह प्रथम क्योंकर रह गया?

आप का दास तीर्थराम,

(६७) तीर्थराम जी के विषय में युनीवर्स्टी में कहा सुनी।

१६ मई १८६२

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं ने एक रीति से अपना सारा वृतान्त लिख कर साहिब

को दिखा दिया था। वह परचों के पुनः देखे जाने की संमति नहीं देते। इस को (अर्थात् मुझे) रियायत मिल जानी चाहिये (अर्थात मेरा पक्ष किया जाना चाहिए), किन्तु उस की कोई बात मानी नहीं गयी। आज विश्वविद्यालय ने यह विज्ञापन दिया है कि जिन्हों ने बी-ए, एम-ए, पास किया हो और आयु उनकी २१ वर्ष से अधिक न हो और गणित अथवा विज्ञान शास्त्र (साइन्स) में विलायत का एम, ए, उत्तीर्ण करना चाहते हों, वे प्रार्थना पत्र भेजें। जिस का सब से अधिक अधिकार होगा, उस को उपर्युक्त (काफ़ी) छात्र वेतन देकर विलायत भेजा जायगा। और जब वह विलायत से उत्तीर्ण होकर आवे, उस को बड़ी ऊंची पदवी दी जायगी। अब यदि मैं इस बार उत्तीर्ण हो जाता, तो मुझ को यह छात्रवेतन अवश्य मिलजाना था। प्रथम मेरी आयु के विचार से, द्वितीय मेरे गणित-शास्त्र में नम्बरों के कारण से, तृतीय मेरे आचरण (सदाचार) के संबन्ध से। पर अब क्या हो सकता है। आप दया रक्खा करें।

आपका दास तीर्थराम,

(६८) निर्धनता के कारण पाठ्य पुस्तकों का बेचना।

८ जून, १८९२

संबोधन पूर्वोक्त,

सरदार † नारायण सिंह न मुझे कल मिला था और न

† सरदार नारायण सिंह जी रामनगर के निवासी हैं। इन दिनों में यह गुसांई तीर्थ राम जी से एक कक्षा पीछे थे और उसी मिशिन कालेज में पढतेथे। इसी कालेज से उन्हों ने बी, ए, पास किया।

आज, न कौलेज में, न मकान पर। पंडित द्वारका दास जिस ने पुस्तकें खरीदने को मुझ से कहा था मुझे इन तीन दिनों में नहीं मिला, यद्यपि मैंने सुना है कि यहां आया हुआ है। मेरा विचार है कि कल तीन चार रुपये की पुस्तकों के नाम एक पत्र पर लिखकर विज्ञापन की रीति से कालेज की एक भित्ति (दीवार) पर लगा दूं जिस से वह पुस्तकें बिक जायें। हमारा गणित शास्त्र का प्रोफेसर बीमार पड़ा हुआ था, दस बारह दिन के पश्चात् आज कालेज में आया था। हमारी श्रेणी का एक चतुर (योग्य) विद्यार्थी थोड़े दिनों के तप के बाद कल सायंकाल को कालवश हो गया। अन्य सर्व प्रकार से कुशल है।

आपका दास तीर्थराम,

(६६) मकान दिलाने में भण्डुमल की प्रशंसनीय सहायता।

६ जून १८६२

संबोधन पूर्वोक्त,

जहां मैं रोटी खाया करता हूं, उस घर के साथ एक और घर लाला गणपतराय बैरिस्टर का है। यह घर लाला साहिब का नितान्त खाली पड़ा हुआ है। उन का विचार है कि इस घर को नये सिरे से बनवाया जाये। झंडूमल हलवाई ने (जिस के घर में रोटी खाया करता हूं) बैरिस्टर

और गवर्णमैण्ट कालेज से एम, ए, पास किया था। तदपश्चात् थोडे काल तक वकालत की वृत्ति ग्रहण की। फिर उसे ना पसन्द करके खालसा हाई स्कूल अमृतसर की हैडमास्टरी (मुख्य अध्यापकता) स्वीकार की, आज कल इसी पदवी पर वे काम कर रहे हैं। (१९१२)

साहिब के भाई को मेरे लिये कहा था कि वह अपने उस मकान (घर) में मुझे (अर्थात तीर्थराम को) इन ग्रीष्म ऋतु के दिनों के लिये मुफ्त रहने दें, और उन्हों ने स्वीकार कर लिया था। पर मैं ने अभीतक वह मकान (घर) भीतर से नहीं देखा। बाहर से कोई बड़ा सुन्दर नहीं प्रतीत पड़ता और न बहुत बड़ा ही है। मेरे इस मकान से बहुत समीप है। गली (कूंज) में है, परन्तु वहां आस पास कोई बड़ा शब्द (शोर) होता नहीं दिखाई देता।

यह बैरिस्टर साहिब का भाई (लाला दुनीचंद) उन के काम का मुख़तार है। ऐफ़ ए. में मेरा सहपाठी था। बी. ए. की शिक्षा (अभ्यास) गवर्णमैण्ट कालेज में पाता रहा। इस वर्ष पास (उत्तीर्ण) नहीं हुआ था, और फिर किसी कालेज में अबतक प्रविष्ट नहीं हुआ।

झण्डू मल को मैं ने नहीं कहा था कि वह मेरे लिये लाला * दुनीचंद को कहे, परन्तु उस ने स्वयं ऐसा कहा था जिस से मुझे इन दो मास का किराया न देना पड़े। जब आप लिखेंगे तब मैं उस मकान में जाने का कोई विचार करूंगा। अभी कोई विचार नहीं।

आपका दास तीर्थराम,

(७०) निर्धन अवस्था के होते हुए भी संतोष वा तृप्ति।

११ जून १८९२

संबोधन पूर्वोक्त,

आज एक मनुष्य ने हमारे प्रिन्सिपल साहिब को मेरे

* यह लाला दुनीचंद नहीं हैं जो आज कल लाहौर में अपने भाई की तरह बैरिस्टर हैं।

लिये त्रेपन ५३) रुपये दिये हैं। साहिब ने मुझ को बुलाया था और कहने लगे कि यह ले लो। मैं ने कहा कि किस ने दिये हैं, वह कहने लगे कि हम नाम नहीं बतायेंगे। (मैं अनुमान करता हूं कि शायद वह अपनी गांठ से ही दे रहे हों)। फिर मैं ने कहा कि आधे इनमें से आप कालेज के कामों में खर्च करदें और आधे मुझे दे दें। यह भी न माना फिर मैं ने कहा कि अच्छा! मिस्टर गिल्वर्टसन साहिब जो हमें गणित पढ़ाते हैं और मेरी आधी फीस देते हैं, उन को व्यर्थ कष्ट में नहीं देना चाहता, उनके बदले वह आधी फीस परीक्षा तक मुझ से ले लो। वह कहने लगे कि इस बात का निर्णय गिल्वर्टसन साहिब से करना होगा। सो मैं ने रुपये लाकर लाला अयोध्या प्रसाद को दे दिये हैं। चाचा जी के रुपये अभी मुझ को नहीं मिले। आप अब अवश्य ही यहां आजायें।

आपका दास तीर्थराम,

(७१) तीर्थराम जी का जनानी जुत्ती पहन कर कालेज में जाना

५ जुलाई १८९२

संबोधन पूर्वोक्त,

कल रात को जब मैं दूध पीने गया, तो मेरी जुत्ती का एक पग (पैर) शायद किसी की ठोकर से बदर रौ (गट्टर) में जा पड़ा। जब दूध पीकर जोड़ा पहनने लगा तो एक पग (पैर) तो पहन लिया, दूसरा इधर उधर देखा, कहीं न मिला। हलवाई दीपक लेकर सारी बदर रौ (गट्टर, मोरी) तिलाश कर आया, न मिला। दो बालकों को पैसा देना करके कहा कि ढूंढो, उन को भी न मिला।

पानी बड़े ज़ोर से (गट्टर में) चल रहा था, शायद कहीं का कहीं चला गया होगा। मेरे मकान में एक पुरानी ज़नानी (जुती) पड़ी हुई थी। प्रातः काल को एक अपनी जुत्ती का पग (पैर) और एक उस पुरानी ज़नानी जुत्ती का पग पहन कर कालेज में गया। यह मेरी जुत्ती अब अत्यन्त पुरानी हो गयी थी। सो आज मैंने सवा नौ आने (॥~)।) की एक नई जुत्ती खरीद कर पहनी है। मेरा आप की ओर बड़ा ध्यान रहता है। आप ने मुझ पर सदा खुश रहना।

आपका दास तीर्थराम,

(७२) तीर्थराम जी का घर पर पढ़ाने का विचार।

६ अक्तूबर १८९२

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र मिला, बड़ा हर्ष हुआ। आज हमारा कालेज खुला, पर किसी प्रोफ़ैसर के आगे वह कथन करने का अवसर नहीं मिला। अलबत्त † बहादुर चंद मिला था, वह कहता था कि हीरामंडी में राजा ध्यान सिंह की हवेली (गृह) के समीप एक बाबू लधाराम ऐग्ज़ैक्टिव इन्जनियर हैं उन के लड़के को यदि दो घंटे पढ़ाओ, तो पन्द्रह रुपये मासिक मिला करेंगे। परन्तु वह कहता था कि कल रविवार में तुमको उन के पास लेजाऊंगा। मैं ने स्वीकार कर लिया था। अब आगे देखिये, क्योंकि आप का मेरी ओर ध्यान (ख़्याल) है, मैं आशा करता हूं, कि अवश्य कोई न कोई अच्छा अवसर मिल जायगा।

आप का दास तीर्थराम,

† बहादुर चंद जी उन दिनों में एम. ए. में पढते थे, जब तीर्थराम जी बी. ए. में थे। आजकल यह महाशय वकील (प्लीडर) हैं॥

(७३) झंडू मल जी की अमुल्य सहायता

६ अक्तूबर १८६२

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं कल यहां पहुंच गया था। जिस मकान में मैं पहिले रहता था वह वर्षा के कारण गिर पड़ा था। परन्तु मेरा अस्बाब (वस्त्रादि) झंडूमल ने बचा लिया था। अभी तक कोई और मकान नहीं मिला। कल रात को झंडूमल के घर पर सो रहा था। और रोटी भी उसी के घर खाता हूं। बैठने के लिये लाला अयोध्या दास के मकान में आ जाता हूं।

आप का दास तीर्थराम,

(७४) बाज़ार के तन्दूर से रोटी खाना।

१२ अक्तूबर १८६२

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र कोई नहीं मिला। अब झंडूमल की घर-वाली (अर्धङ्गा) कहीं गयी हुई है, इस लिये मैं रोटी तन्दूर (कंडु, उखा, आपाकः) से खाया करता हूं। अभी-तक कोई विद्यार्थी पढ़ने वाला नहीं मिला। जब कालेज खुलेगा, किसी प्रोफ़ेसर को कहूंगा। शायद वह कोई इत्तफ़ाक़ बना दें। आप सब हाल लिखें।

आप का दास तीर्थराम,

(७५) विद्यार्थियों को पढ़ाने के काम से तीर्थराम जी को प्रोफ़ैसरों का रोकना।

१८ अक्तूबर १८६२

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं ने प्रोफैसरों को कहा था, सब के सब कहने लगे, अब परीक्षा काल समीप आया है। अब अपना काल व्यर्थ

न खो और जिस तरह हो सके ऐसा काम मत कर। तेरा समय अब दस पंद्रह रुपये से अधिक प्रियतम है। इत्यादि।

अस्तु, महाराज जी! मैं प्रत्येक दशा में प्रसन्न हूं और आप ने मुझ पर सर्वप्रकार से आनंदित रहना। जैसा होगा निर्वाह करलूंगा॥

अब मैं अति शोक की बातें लिखता हूं कि दो छुट्टियों में मेरे दो मित्र मर गये हैं। एक तो खलीलुलरहमान्; उस ने इस बार बी. ए. पास किया था, दूसरा लाला शिव राम† जिस से आप भी परिचित थे और जो मेरा अत्यन्त कृपालु था। उन के वंश में अब कोई पुरुष नहीं रहा, सब विधवा होगयी हैं। परमेश्वर अपनी दया करें। आपने पत्र शीघ्र २ लिखना।

आप का दास तीर्थराम,

(७६) कालेज के पंडित वेदान्ती

२३ अक्तूबर १८९२

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं ने पत्र तो पहिले लिखना था। पर देर इस लिये हो गयी है कि मैं ने कहा कि कोई ठीक परिणाम निकल ले, तो पत्र लिखूं। अब बात यह है कि अभी कोई पढ़ाने का अवसर बनता दिखाई नहीं देता। आप मुझ पर सदा प्रसन्न रहना। मैं प्रत्येक अवस्था में खुश हूं। आगे जैसा होगा, वैसा विदित करूंगा।

हमारे कालेज के पंडित साहिब पहले दर्जे के (अति निपुण) वेदान्ती हैं। उन को मैं ने अपना निश्चय बताया था, इस लिये मुझ पर अति प्रसन्न हैं।

आप का दास तीर्थराम,

---

† यह लाला शिवराम वही हैं जो मिशिन कालेज बोर्डिंग हौस के सुपूर्णटैंडैण्ट थे और जिन का वर्णन पहिले भी हो चुका है।

(७७) तीर्थराम जी का एक सहपाठी को पढ़ाना

३१ दिसम्बर १८९२

संबोधन पूर्वोक्त,

मेरा बड़ा ही जी (चित्त) आप के दर्शन करने को चाहता है। तदनुसार मैं ने कल संकल्प किया था कि एक रात के लिये गुजरांवाले हो ही आऊं। साथ इस के अब हमारी श्रेणि के एक † विद्यार्थी ने मुझ से गणित पढ़ना आरम्भ किया है, पर वेतन के विषय में न मैं ने कोई बात कही है न उस ने ही। पर वह मनुष्य बड़ा ही अच्छा है। उपकार को जानने वाला है। आप ने शीघ्र मुझे अपना हाल लिखना। आप ने मुझ पर दया रखनी।

आप का दास तीर्थराम

———:o:———

सन् १८९३ ईसवी।

(इस वर्ष तीर्थराम जी की आयु साढ़े उन्नीस वर्ष के लगभग थी)

(७८) सहपाठी से ज़रूरतों की पूर्त्ति का विश्वास।

२ जनवरी १८९३

संबोधन पूर्वोक्त,

आपका कृपा पत्र मिला, अत्यन्त हर्ष प्राप्त हुआ। सरदार सुन्दर सिंह की परीक्षा थोड़े दिनों तक समाप्त हो

† सुना जाता है कि यह विद्यार्थी जो तीर्थराम जी का सहपाठी था, और उन दिनों उन से पढ़ा करता था, लाला ज्वाला प्रसाद अगरवाल वैश्य था। आज कल यह लाला साहिब फीरोजपुर में वकील हैं॥

जायगी। जिस सहपाठी को मैं गणित पढ़ाया करता हूं, वह मेरे पढ़ाने से अति प्रसन्न है। और कम से कम वह इतना अवश्य दे दिया करेगा कि जिससे मेरी सारी जरूरतें (अर्थात् दूध किराया इत्यादि) पूरी हो जायेंगी, और चाहे कितनी पुस्तकें अपनी पढ़ाई के संबन्ध में खरीद लूं।

साथ इसके सरदार सुन्दर सिंह मुझे कहता है कि मैं उनके मकान (घर) में चल रहूं। अस्तु, जब आप यहां आवेंगे, तो जैसा आप कहेंगे, किया जायेगा। मैं ने आप का वर्णन (ज़िक्र) इस अपने सहपाठी से किया था। आपके दर्शनों की जिज्ञासा रखता है।

आप का दास तीर्थराम

(७९) अपने अध्यापकों के सन्मान की चिन्ता।

२० जनवरी १८९३

संबोधन पूर्वोक्त,

कल प्रातः हमारे दाखले *(परीक्षा का प्रवेश-शुल्क) लिये जाने हैं। मैं ने तीस रुपये लाला अयोध्यादास से अब लिये हैं। यदि आप मेरे विषय में कहीं कुछ कहें तो यह ध्यान रखना कि मेरे अध्यापकों की ओर कोई बुरा संकेत न हो जाय बल्कि उनकी अत्यन्त कीर्ति वर्णन हो। मैं उन जैसा संसार में किसी अन्य को योग्य नहीं समझता।

आपका दास तीर्थराम

---

* बी-ए, की पुनः परीक्षा के दाखले (प्रवेश-शुल्क) से यहां अभिप्राय है।

(८०) गणित-शास्त्र के प्रोफ़ेसर की सहायता और तीर्थराम जी की धन से उदारता का उदाहरण।

२३ जनवरी १८९२

संबोधन पूर्वोक्त,

आज आप का कृपा पत्र कालेज जाते जाते मिला, अति हर्ष हुआ। जब मैं कालेज पहुंचा, तो चपरासी मुझे बुलाकर प्रोफ़ेसर *गिल्बर्टसन साहिब (गणित शास्त्र का प्रोफ़ेसर) के पास ले गया। उन्हों ने मुझे एक बहुत तहों (पोटलियों) में बन्द दर बन्द कागज़ की पुड़ी दी। और कहा "जाओ"। उस समय घंटा बज गया और मैं उस पुड़ी को जेब में डाल कर पढ़ने में प्रवृत हो गया। परन्तु आज मेरे पास एक पैसा भी खर्चने को न था, तीन घंटे के पीछे मैं ने अलग जाकर उस पुड़ी को खोला, उसमें तीस रुपये थे। मैं तत्काल (तत्क्षण) प्रोफैसर साहिब के पास गया और कहा "मुझे इतने रुपये की आवश्यकता नहीं है। आप बीस रुपये वापस ले लें।" किन्तु उन्हों ने न माना। अब आप यह पत्र देखते ही तत्क्षण यदि यहां आकर इन में से बीस रुपये ले जायें, तो अति

---

* इस पत्र से ऐसा प्रतीत होता है कि इस समय प्रोफैसर गिल्बर्टसन साहिब ने केवल बी. ए. की परीक्षा के प्रवेश-शुल्क के लिये तीस रुपये दिये हैं। परन्तु तीर्थराम जी दूसरों से रुपया उधार लेकर परीक्षा का प्रवेश-शुल्क दे चुके थे और केवल दो मास की कौलेज फीस ही देनी अब शेष रहती थी, इस लिये वह उस कालेज फीस से अधिक रुपये प्रोफैसर साहिब को वापस करने की प्रार्थना पुनः २ करते हैं। और उनके न मानने पर फिर गुरू जी की भेंट कर देते हैं, परन्तु अपने पास जरूरत से अधिक एक पैसा भी नहीं रखते हैं।

कृपा हो। यदि आप उचित समझें तो इन बीस में से थोड़े से मेरी नें वे (माता जी) को भेज दें। डाक में इस कारण से नहीं भेजता कि यदि आप आयेंगे, तो मिल भी तो जायेंगे। अपने पास दस १०) रुपये इस लिये रखता हूं कि भविष्य में दो मास की फ़ीस भी देनी है। अपने अन्य खर्च के लिये लाला ज्वालाप्रसाद से ले लिया करूंगा।

आप का दास तीर्थराम

(८१) तीर्थराम जी को झंडूमल का अधिक ध्यान !

७ फरवरी १८९३

संबोधन पूर्वोक्त,

आज हमारे *प्रोफैसर साहिब ने मुझे वह पुस्तक ले दी है, जो मैं ने उन्हें कही थीं। साथ इसके उन्हों ने मुझे एक मनुष्य (लाला चंदूलाल साहिब) से पढ़ने के लिये वह †पुस्तक भी ले दी है जो भारतवर्ष में गणितशास्त्र के सूर्य ने लिखी है। इस पुस्तक की प्रस्तावना इंग्लैण्ड के एक गणितशास्त्र के निपुण वेत्ता ने लिखी है। उस प्रस्तावना में हमारे देश के पुराने ज्ञान तथा विज्ञान शास्त्र की इतनी उपमा की है कि जिसका कोई अन्त नहीं। आप मुझे लिखते रहा करें।

यदि आप को कष्ट न हो, तो ‡झंडूमल के लिये एक थाल बनवा छोड़ना।

आपका दास तीर्थराम

---

*प्रोफैसर से तात्पर्य गणित शास्त्र के प्रोफैसर गिल्बर्टसन साहिब से है।

† यह पुस्तक "मैक्सिमा ऐंड मिनिमा" (Maxima and Minima) थी जो गणित शास्त्र के प्रसिद्ध सूर्य प्रोफैसर रामचन्द्र ने लिखी थी।

‡ झंडूमल वही मिशिन कालेज का हलवाई है जिसका वर्णन अनेक बार पूर्व हो चुका है।

(८२) अपने ग्राम का नाम बदलना।

१२ फरवरी १८९२

संबोधन पूर्वोक्त,

हम कल सायंकाल से बोर्डिंग में आगये हुए हैं। प्रातः भोजन बोर्डिंग में खाया करूंगा और सायंकाल को झंडूमल के घर। मेरा प्रातः भोजन बोर्डिंग में खाना भी झंडूमल ने अति कठिनता से स्वीकार किया है। आप ने मुझ पर दया रखनी। अब से लेकर अपने ग्राम को मैं मुराली वाला के बदले मुरारी वाला कहा करूंगा। मुरारी के अर्थ परमेश्वर के हैं।

आपका दास तीर्थराम

(८३) झंडूमल मल से पुनः सहायता।

१८ फरवरी १८९२

संबोधन पूर्वोक्त,

झंडूमल ने मुझे दो कुर्ते और एक पाजामा बनवा दिया है, और लाला ज्वाला प्रसाद के कपड़े [वस्त्र] में सब वर्त सकता हूं। और सर्व प्रकार से कुशल है, आप मुझ पर दया रक्खें।

आप का दास तीर्थ राम,

(८४) बी, ए, की आज़मायशी परीक्षा (Trial Examination) का परिणाम।

११ मार्च १८९२

संबोधन पूर्वोक्त,

आज हमारे रोल नम्बर आ गये हैं। मेरा नम्बर ८७ है

हमारी (आज़मायेशी प्रमाण) परीक्षा का परिणाम भी निकला है। मुझे परमेश्वर ने सर्वोपरि उत्तम रक्खा है। जितने नम्बर प्रथम दर्जे (वर्ग) में रहने के लिये चाहियें उस से मेरे ६० अधिक हैं। अंग्रेज़ी में भी बड़ा ही अच्छा रहा हूं। और एक गणित शास्त्र के पर्चे में १५० में से १४८ नंबर मिले हैं। पर मैं जानता हूं यह सब आप की ही कृपा-दृष्टि का फल है। आप ने मुझ पर दया दृष्टि रखनी।

आप का दास
तीर्थराम,

(८५) बी, ए, की पुनः वार्षिक परीक्षा।

२१ मार्च १८९३

संबोधन पूर्वोक्त,

मेरा प्रतिक्षण आप के चरणों में ध्यान रहा है, आप अभी तक नहीं आये। बड़ा शोक लगा हुआ है। परसों [गुरुवार] और अतरसों (शुक्रवार) हमारी गणित की परीक्षा है। अंग्रेज़ी की परीक्षा हो चुकी है। महाराज जी! यदि मेरी ६० (साठ) रुपये छात्र वृत्ति लग जाये, तो पहिले तीन मास की छात्रवृत्ति (वज़ीफा) सारी आप ने रख लेनी, और जो उपहार मिले वह भी आप ही का। और वैसे तो आप जानते ही हैं कि मैं स्वयं सारा ही आप का हूं। यदि मैं गणित-शास्त्र के चारों पर्चे ही सारे के सारे कर आऊं, तब मुझे तसल्ली होगी। यदि आप की दया हो, तो यह बात (परिणाम) किञ्चित् भी कठिन नहीं।

आप का दास
तीर्थराम,

(८६) बी, ए, की वार्षिक परीक्षा के परिणाम संबन्धी एक सहपाठी का प्रेम पत्र ।

१७ अप्रैल १८९३

बाबू तीर्थराम साहिब,

दाम अनायतहु [अर्थात् नित्य कृपालु रहें],

धन्यवाद (मुबारकबाद) देता हूं, आप पंजाब भर में प्रथम रहे हैं । आप के नंबर ३१० हैं, और प्रथम खंड (डिवीज़न या वर्ग) में रहे हो और आप को वैसे ही दो छात्र वृत्ति (वज़ीफे) भी मिलेंगी । द्वितीय लक्ष्मण दास, तृतीय गुलाम सरवर और चतुर्थ टोपन राम रहे हैं । सारे विद्यार्थी हमारे कालेज से २१ के लगभग उत्तीर्ण हुए हैं । और समस्त विद्यार्थी सारे पंजाब भर में ५० (पचास) के लगभग उत्तीर्ण हुए हैं । यह सेवक आप को अवश्य तार द्वारा सूचना देता, परन्तु इस दास का अपना चित्त बहुत व्याकुल है, इसलिये क्षमा रक्खें ।

(लिखने वाले का नाम पत्र में दर्ज नहीं)

(८७) गुरु जी की जरूरत और कष्ट का ख्याल ।

२६ मई १८९३

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का पांच रुपये का मनीआडर पहुँचा, पर जब मुझे यहां से रुपये मिल सकते थे, आप ने व्यर्थ क्यों कष्ट उठाया ? क्या आप की ज़रूरतें मेरी ज़रूरतें नहीं हैं ? यदि आप आज्ञा दें, तो आप को मैं लाला सोहनलाल से या मौसा से या किसी अन्य स्थान से जितने रुपये अवश्यक

एँ लेकर भेज दूं। आप ने यह कष्ट क्यों उठाया? पर इस में अपराध मेरा है, कि इस से पहिले मैं इस विषय में आप को लिखना भूल गया। अब आप आयेंगे कब? मनीआर्डर के बाद आप का एक और पत्र आया.........हमें छुट्टियां तो हैं पर काम भी बहुत है, इस लिये अगर आप ही आजायें तो अच्छा होगा। नहीं तो जैसा मुझे आज्ञा करो मैं वैसा करने को उद्यत हूं।

आप का दास
तीर्थराम,

(८८) झंडूमल की अत्यन्त प्रेरणा।

२६ जून १८९३

संबोधन पूर्वोक्त,

कल जिस समय आपको रेल पर छोड़कर आया, तो उस समय झंडूमल मिला। और उसने आपके विषय में पूछा। उसका यह विचार (संकल्प) था कि उसने जो अपना मकान (घर) खरीदा हुआ है, वह आपके दृष्टिगोचर कर के आप से स्वीकार कराये और उसमें मुझ को रक्खे। यह मकान केवल परसों खाली हुआ था। झंडूमल अत्यन्त दर्जे की प्रेरणा करता है कि मैं उसके मकान में विना किराया देने के रहूं। आगे जैसी आप आज्ञा देंगे वैसा ही करूंगा। यह मकान झंडूमल की अपनी गली में है, परन्तु पुराना है, और अधिक हवादार भी नहीं। दो छत्ता है, आप ने उत्तर से शीघ्र कृपा करनी।

आपका दास
तीर्थराम,

(८९) गुरु जी के लिये परमेश्वर से प्रार्थना।

९ जुलाई १८९३

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं ने अभी परमेश्वर से प्रार्थना की थी कि आप को भीतर तथा बाहर से सर्व प्रकार से परमानन्द रहे, कभी भी कोई कल्पना और विशेष दुःख न दे।

महाराज जी ! आप मुझे याद रक्खा करें।

आपका दास तीर्थराम

(९०) जीविका की अन्वेषणा (तलाश)

७ जुलाई १८९३

संबोधन पूर्वोक्त,

आज मैं ने कुछ २ समाचार सुना है कि वैदिक कालेज लाहौर का गणित-शास्त्र का प्रोफेसर (मुख्य अध्यापक) छुट्टी लेना चाहता है। यदि आप परमात्मा से कहकर मुझे उसके स्थान पर अभी नियत करादें, तो यह मेरे और आप के लिये अति हर्ष का कारण हो। शायद सारी छात्र-वृत्ति से पिछले मास का कट कटा कर केवल चार रुपये आठ आने (४॥) मुझे मिले। आप ने किसी प्रकार से कदापि तंग न रहना। जिसको मैं पढ़ाया करता हूं, वह मुझ से अत्यन्त प्रसन्न है।

आप का दास तीर्थराम

(९१) प्राकृतिक दृश्य का मूर्ति बांधना।

१९ जुलाई १८९३

संबोधन पूर्वोक्त,

यहां कल बड़ी वर्षा हुई थी। आज मैं कालेज से पढ़कर

सैर करता हुआ डेरे (घर पर) आ रहा हूं। इस वक्त बड़ा सुहाना समय है। जिधर देखता हूं या जल दृष्टि में आता है या वनस्पति (सब्जी)। ठंडी २ पवन हृदय को बड़ी प्रिय लगती है। आकाश में बादल कभी सूर्य को छुपा लेते हैं, कभी प्रकट कर देते हैं। नाले नालियों (जलवाहों तथा प्रणालों) से पानी बड़े वेग से बह रहा है। गोलबाग के वृक्ष फलों से भरे पड़े हैं। टैहिनियां (शाखायें) झुक कर पृथिवी से आ लगी हैं। यही प्रतीत होता है कि अनार, आड़ू, आम, इत्यादि अभी गिरे कि गिरे। कबूतर, काक (कव्वे) और चीलें बड़ी प्रसन्नता से वायु की सैर कर रहे हैं। वृक्षों पर पक्षी बड़े आनन्द से गायन कर रहे हैं। तरह २ (नानाप्रकार) के पुष्प खिले हुए ऐसे प्रतीत होते हैं कि मानो मेरा आगमन देखने के लिये आँखें खोले मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। पृथिवी पर हरियावल (हरित) क्या है मानो मखमल का तल (फर्श) बिछा है (या मानो मखमल से भूमि आच्छादित है)। सरू और सपेदा (लम्बे २ वृक्ष) अभी स्नान करके सूर्य की ओर ध्यान करके एक टांग से (इकटंगे) खड़े हैं, मानो संध्या उपासना में मग्न हैं। आकाश की नीलता और सफेदी (शुक्लता) ने अद्भुत बहार बनाई है (अथवा अद्भुत समय बांधा है)। मेंडक वर्षा की खुशियां मना रहे हैं। प्रत्येक दिशा से झंकारें [ह्लाद] बज रहे हैं, मानो पृथिवी और आकाश का विवाह होने वाला है, जिस की सन्तान कार्तिक और मार्गशीर्ष [मंगसर] के सतोगुणी मास होगी। इस समय मुझे आप याद आते हैं। क्योंकि मैं आप को यह सब वस्तुएं दिखा नहीं सकता, इसलिये लिख देता हूं।

अब मैं डेरे [घर पर] आ पहुंचा हूं। आप का पत्र मिला है, अत्यन्त हर्ष प्राप्त हुआ है। अब मैं अपने अध्ययन

का काम आरम्भ करने लगा हूं क्योंकि परसौं बुद्धवार हमारी *परीक्षा है। यह पत्र चलते २ रास्ते में पैन्सिल से लिखा गया था, और घर पर आकर इस कार्ड पर उसकी नक़ल करता हूं।

(९२) अपने विद्यार्थी के पास हो जाने पर खुशी।

११ जुलाई १८९३

संबोधन पूर्वोक्त,

भाई †सुन्दर सिंह जो मुझ से पढ़ा करता था और जिस ने इस वार चीफ कालेज से मिडिल क्लास की परीक्षा दी थी और जो फेल (अनुत्तीर्ण) होगया था, उस के पर्चे पुनः देखे जाने से वह पास (उत्तीर्ण) हो गया। हर्ष की बात है॥

आप का दास तीर्थ राम,

(९३) मिस्टर वैल प्रिन्सिपल गवर्नमैंट कालेज के अकस्मात् दर्शन (मिलाप)

१७ जुलाई १८९३

संबोधन पूर्वोक्त,

आज मैं नदी (दरया रावी) की सैर को गया था। किश्तियों (नौकाः) के पुल पर फिर रहा था, कि मिस्टर

* यहां परीक्षा से तात्पर्य गुसाईं जी की एम-ए की मासिक परीक्षा से है क्योंकि बी-ए श्रेणि को उत्तीर्ण करने के पश्चात् वह गवर्णमेंट कालेज लाहौर की एम, ए श्रेणि में प्रविष्ट हो गये थे। यद्यपि इस विषय का पत्र उनकी लेखनी का नहीं मिला।

† भाई सुन्दर सिंह मजीठा के जमीन्दार व रईस हैं जो उन दिनों गुसाईं तीर्थ राम जी से घर पर पढा करते थे।

वैल गवर्नमेंट कालेज के प्रिन्सिपल (बड़े साहिब) वहां आ निकले। भले प्रकार से मिले। कई प्रकार की बातें हुईं, मेरी ऐनक (उपनेत्र) के विषय में, और इस विषय में कि मैं छाता क्यों नहीं लगाता, क्योंकि उस समय बादल आया हुआ था, और छोटी २ बूंदें पड़ रही थीं, इत्यादि २।

फिर मुझे अपनी गाड़ी में बिठा लिया और गाड़ी शहर (बस्ती) की ओर लाये। रास्ते में मेरी पढ़ाई के विषय बात हुई। और मुझे लगभग सौ पद (शेर) अंग्रेज़ी भाषा के कण्ठस्थ थे. मैं ने वह सुनाये। और गणित शास्त्र के संबन्ध में कहा कि मैं इस की प्रत्येक शाखा की कम से कम चार या पांच पुस्तकें अवश्य पढ़ा करता हूं। और जो अंग्रेज़ी साहित्य की पुस्तकें आज कल मैं देखता हूं, वह मैं ने बताईं। बड़े प्रसन्न हुए। फिर उन्हों ने मेरे पिता माता के विषय में पूछा कि वह धनाढ्य हैं या नहीं। मैं ने उत्तर दिया, नहीं। फिर उन्हों ने पूछा कि मेरा विचार एम, ए की परीक्षा के पश्चात् क्या करने का है? मैं ने उत्तर दिया कि मेरा अपना कुछ संकल्प (विचार) नहीं, जो ईश्वरेच्छा होगी उसी के अनुसार मैं अपना संकल्प कर लूंगा। और ऐसे यदि मेरी कोई इच्छा है तो यह है कि वह काम करूं जिस से मैं अपने जीवन का श्वास २ परमात्मा की सेवा में अर्पण कर सकूं। और परमात्मा की सेवा लोगों की सेवा करने में होती है, और लोगों की सेवा मैं सब से अच्छी तरह गणित पढ़ाने से कर सकता हूं। इत्यादि।

उन्हों ने भी बहुत सी बातें मेरे अनुसार कीं, और यह भी कहा कि हम तुम्हारे लाभ में जितना भी हो सकेगा यत्न करेंगे। (अब यह साहिब पंजाब विश्वविद्यालय के कायमुकाम रजिस्ट्रार भी होगये हैं)।

इतने में उन की कोठी जो कालेज के ठीक समीप है आ गयी। पर वह मुझे उस जगह लाये जहां विद्यार्थी व्यायाम किया करते हैं, और उन्होंनें मुझे व्यायाम करते हुए विद्यार्थी दिखाये। फिर उन्हों ने पूछा कि "तुम किस प्रकार का व्यायाम किया करते हो। मैं ने चारपाई वाली वर्ज़िश (व्यायाम) कथन करी। उन्हों ने एक चारपाई (खाट) मँगवाई। मैं ने एक सौ साठ वार (१६०) उसे ऊपर उठाया और नीचे रक्खा। फिर उन्हों ने और विद्यार्थियों से कहा कि चारपाई से व्यायाम करें, उन में से कोई भी बीस से अधिक वार न कर सका। इसी प्रकार अन्य विद्यार्थियों का दूसरी विधि का व्यायाम देखने के पश्चात् वह सब को सलाम (अर्थात् नमस्कार) करके अपनी कोठी की ओर चल दिये। और मैं ने किञ्चित् आगे बढ़ कर कहा कि जी! मैं आपकी कृपा का अत्यन्त अनुगृहीत (अभारी) हूं। फिर मुझ को नमस्कार (सलाम) करके अपनी कोठी में प्रवेश हो गये।

अब महाराज जी! यह सब आप की कृपा का फल है। जब मैं आऊंगा, पंडित जियालाल जी से मासिक वेतन ले आऊंगा॥...........

आप का दास तीर्थराम,

(६४) एक दरिद्री (ग़रीब) विद्यार्थी से सहानुभूति।

२७ जुलाई १८९३

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र कोई नहीं आया, क्या कारण है? हमें आज कालेज से छुट्टियां हो गयीं हैं। मिशन कालेज भी

में आज गया था। वहां के साहिब अत्यन्त सत्कार से मिले। वहां भी आज छुट्टियां हो गयी हैं। आज मैं कायस्थ बोर्डिङ्ग हौस में गया था। वहां एक अति दरिद्र विद्यार्थी को देख कर (जिस ने छुट्टियों में, लाहौर रहना है) मेरे चित्त में विचार उठा कि जब मैं † मिण्टगुमरी जाऊं, इस विद्यार्थी को अपने पीछे अपने मकान (स्थान) में छोड़ जाऊं, और जब एक मास के पीछे मिंटगुमरी से वापस आऊं, तब उस को कहूं कि बोर्डिङ्ग में चला जाये। जिस से उसको बोर्डिङ्ग की आधी फीस मासिक न देनी पड़े और मेरा मकान (स्थान) खाली न पड़ा रहे। आगे आप जैसी आज्ञा देंगे वैसा किया जायगा। यदि आप का उत्तर शनिवार से पहिले २ न आया तो उस समय जैसा मुझे विचार आयेगा मैं समझूंगा कि यही आप की आज्ञा है। और तदनुसार चलूंगा। क्योंकि शनिवार को मैं ने लाला जियालाल के साथ जाना है। वहां से मैं शीघ्र आ जाने का यत्न करूंगा।

आप का दास तीर्थराम

(६५) अनाहत शब्द का श्रवण।

मिंट गुमरी
४ अगस्त १८६२

संबोधन पूर्वोक्त

मेरा ध्यान नित्य आप के चरण कमलों में रहता है। आप दया रक्खा करें। ....यहां अनाहत (अनहद) शब्द बहुत सुनाई देता है और स्थान सतोगुणी है। जब छुट्टियों से पहिले मैं मिशिन कालेज के प्रोफैसरों से मिलने

† एक नगर का नाम है, इस में गुसाईं जी के मौसा पं० रघुनाथमल जी कर्मचारी थे।

गया था, तब उन्हों ने मुझ से कहा था कि अगले वर्ष एक विद्यार्थी को विलायत का छात्र-वेतन देना है। यदि तुम जाना चाहो, तो तुम्हारा सब से बढ़कर अधिकार है। परन्तु महाराज जी! मैं आप का आज्ञाकारी हूं।

आप का सेवक
तीर्थराम

(९६) मिंटगुमरी में भैंस का अभाव।

मिंटगुमरी
१४ अगस्त १८९३

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का एक पत्र परसों मिला था, अत्यन्त हर्ष का कारण हुआ। यहां की एक अद्भुत बात मैं आपको लिखता हूं कि यहां किसी मनुष्य के पास कोई भी भैंस नहीं है। केवल गौवों का दूध ही वर्ता जाता है। जी! आप मुझ पर सर्व प्रकार से खुश रहा करें। मैं आप का दास हूं। यहां मन अन्तरमुख बड़ा रहता है।

आप का दास
तीर्थराम

(९७) योगवासिष्ठ का अभ्यास।

मिंटगुमरी
१८ अगस्त १८९३

संबोधन पूर्वोक्त:

आपका कृपा पत्र आये देर होगयी है, और मुझे भी पत्र लिखने में देर होगयी है। क्षमा करें। मैं योगवासिष्ठ बहुधा पढ़ा करता हूं।

आप का दास तीर्थराम

(९८) दादाभाई नौरोजी का आगमन।

लाहौर
२५ दिसम्बर १८९३

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र कोई नहीं मिला, चाचा जी (पिताजी) का हाल आप ने नहीं लिखा।

आज यहां दादा भाई नौरोजी (जो भारतवर्ष का मनुष्य पारलीमेंट का मैम्बर है) तीन बजे की गाड़ी में आया है। इतने ठाटबाट (आडम्बर) के साथ उसका स्वागत किया गया है कि जिसका कुछ अन्त नहीं। कांग्रेस वालों ने मानो उसको ब्रह्मा और विष्णु की पदवी दे दी है। कई सुनैहरी द्वार बनाये गये हैं। उस की गाड़ी नगर में अभी तक फिरा रहे हैं। लाखों मनुष्य साथ जा रहे हैं। उसके चारों ओर (इर्द गिर्द) दीपमाला है। और बड़े ज़ोर के जंकारे (उच्चह्लाद) बज रहे हैं। साधारण लोगों के चित्तों में अत्यन्त जोश आ रहा है। इतना जोश कि जिसका कुछ अन्त नहीं। पर मेरे चित्त पर इन सब बातों से किञ्चित् मात्र प्रभाव (असर) नहीं हुआ। यह बड़े शुकर (धन्यवाद) की बात है।

आपका दास तीर्थराम

(९९) गुरु जी का क्रोध और तीर्थराम जी की क्षमा याचना।

३० दिसम्बर १८९३

संबोधन पूर्वोक्त,

गर कुशी वर जुर्म बख़शी, दस्तो सर बर आस्तानं।
बन्दः रा फरमां चेः बाशद, हर चेः फरमाई बर आनं॥

अर्थः—चाहे आप मारें चाहे क्षमा करें, मेरा सिर और हाथ दोनों आप की देहली (दैहलीज़) पर हैं। दास का आदेश क्या हो सकता है, जैसी आप आज्ञा दें वैसा वर्ताओ में लाऊं।

महाराज जी! आप का पत्र मुझे मिला, अत्यन्त खुशी हुई, परन्तु पत्र पढ़कर चित्त अति शोकातुर हुआ, क्योंकि आप दास पर रुष्ट (ख़फ़ा) हैं। आप अब क्षमा करियेगा, क्योंकि मेरे जैसे अनुभवहीन (ना तजरुबेकार) से भूल चूक बहुधा हो जाती है। "मनुष्य गिर२ कर सवार होता है," और कई वार बड़े स्याने (बुद्धिमान) भी चूक जाते हैं। "तारू डूबते आये हैं"। आप अब यहां कब पधारेंगे? जब तक आप का कुशल-पत्र या आप स्वयं यहां न आयेंगे, मुझे बड़ी चिन्ता रहेगी। मुझे प्रतीत होता है कि इन दिनों आप को तंगी होगी, इसलिये यदि आप आज्ञा दें तो मैं यहां से कुछ अर्ज़*करूं [अर्थात् सेवा में कुछ भेजूं]। आप दास पर किसी प्रकार से रुष्ट न होवें। इस वर्ष मैं ने ऐसी एक भी पुस्तक नहीं ख़रीदी जो मेरी वार्षिक परीक्षा में उपयोगी न हो। पहिले यह स्वभाव मुझे था, पर अब आपकी दया से दूर हो गया है। खर्च मुझ से निःसन्देह अधिक होजाता है, और मैं प्रयत्न करता हूं कि कम हो। खर्च दूध इत्यादि में होता है। मैं जब कांग्रेस का उत्सव देखने गया था, तो इस उद्देश्य से गया था कि वहां जो बङ्गाल, मद्रास, बम्बई, मध्य प्रान्त, दक्षिण इत्यादि के अति उत्तम प्रकार के वक्ता (Lecturers) आये हुए हैं उनके व्याख्यान की विधि आदि देखूं। नौरोजी

* गुरु जी की भेंट में जब कुछ रुपये भेजना हो तो उसे "अर्ज़करूं" का संकेत गुसाईं जी ने बना रक्खा था, उसी संकेत को यहां गुसाईं जी ने वर्ता है।

के आने के दिन म ने इस बात का धन्यवाद किया था कि लोगों को जोशखरोश [उत्साह] में देख कर मुझे जोश नहीं आया: सो अब भी मैं आप के चरणों को धन्यवाद देता हूं कि इन सब बोलने वालों [वक्ताओं] को सुन कर मुझे जोश न आया।

आप का दास तीर्थराम

सन् १८६४ ईस्वी।

(इस वर्ष गुसाईं जी की आयु लगभग साढ़े बीस वर्ष के थी और ऐम. ए. में पढ़ते थे।)

(१००) गौन की चिन्ता।

१० जनवरी १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

आप के दो पत्र मिले, एक सात जनवरी का लिखा हुआ, दूसरा आठ का। आप खर्च की कुछ परवाह न करें, कोई डर नहीं। परमेश्वर दया करेगा। आप मुझे शीघ्र लिखें कि मैं वह चोगा (गौन) इत्यादि बनवाऊं या किसी से उधार मांगने का यत्न करूं। मैं ने एक दो से अब तक मांगा है, उन्हों ने इन्कार किया है। इस वर्ष से पहिले एक मनुष्य (दरज़ी) यूनीवर्सिटी से ठेका ले लिया करता था और उस से बने बनाये चोगे (गौन) मिल सकेत थे। इस बार उसने ठेका नहीं लिया। आप बनवाने में बीस रुपये के लगभग खर्च होते हैं। यदि विश्वविद्यालय के वार्षिक उत्सव के निकटस्थ समय पर बनवाया जायगा तो खर्च अधिक पड़ेगा। क्योंकि उस प्रकार का गौन (चोगा) बनाने वाले कारीगर लाहौर में एक या दो से अधिक नहीं। और उन दिनों उन को काम बहुत विशेष होगा और मज़दूरी बहुत

मांगेंगे। इस वार मुझ से भी खर्च बहुत अधिक हुआ है, परन्तु भविष्य में आप देखेंगे कि मेरा खर्च दूध इत्यादि पर बहुत कम हुआ करेगा। अपनी भगनी* (वहन अथवा बहिन) (तीर्थों) के विषय में मुझे कल ही मालूम होगया था। (उसकी मृत्यु से) जो मुझे शोक हुआ है उसका न लिखना अच्छा है। मैं बड़ा ही रोया हूं। मेरी उसके साथ अत्यन्त प्रीति थी।

आप का दास तीर्थराम

(१०१) एक प्रोफ़ैसर साहिब का अपना गौन देने के लिये तैयार होना।

१४ जनवरी १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

आज +लक्ष्मण दास मिला है, चोग़ा (गौन) किसी विद्यार्थी से हाथ नहीं लगा। क्योंकि बहुतों ने तो बनवाया ही नहीं हुआ, और जिन्हों ने बनवाया हुआ है उन से औरों ने पहिले ही से मांग रक्खा हुआ है। यदि हो सके तो आप

* तीर्थराम जी की एक ही भगनी थी जिसका नाम तीर्थों था, जिस के साथ उनको अत्यन्त प्रेम था और जिसकी मृत्यु पर उन्हें अत्यन्त दुःख हुआ था।

+ लाला लक्ष्मणदास चाहिल कुहना के रहने वाले हैं। गुसाईं तीर्थराम जी के साथ इनकी बड़ी प्रीति थी। उनके एक बड़े भ्राता लाला सोहन लाल हैं जो कई वर्षों से लाहौर रहते हैं। उन्हों ने तीर्थराम जी को समय २ पर धन से सहायता दी, और अपने पुत्र लाला बालमुकन्द को विद्यार्थ उन (तीर्थराम जी) के सुपुर्द कर रक्खा था। आज कल यह लाला बालमुकन्द जी बंगाल प्रान्त में असिस्टैंट इन्जीनियर के पद पर नियुक्त हैं।

†हाकिमराय से ‡चाहिल संदेशा भेजकर उसका गौन गुजरान-वाले से मंगवा लेना, और वहां से जब यहां पधारो तो साथ लेते आना। नहीं तो मेरे प्रोफेसर साहिब ने फरमाया था कि "तुम ने गौन तो मेरा ले लेना, परन्तु यह गौन विलायत का है और उसमें तथा यहां के गौन इत्यादि में थोड़ा सा भेद (फरक़) है। यह फरक़ दुरुस्त कराने पर तुम्हारे चार पाँच रुपये खर्च होंगे क्योंकि एक हुड (फ़ण) तुमको नया बनवाना पड़ेगा"।

आप का दास तीर्थराम

(१०२) गवर्णमेंट कालेज के प्रिन्सिपल साहिब की सहानुभूति व कृपा।

५ फरवरी १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

आज मैं गवर्णमेंट कालेज के *बड़े साहिब जी को मिलने गया था, उन्हों ने मुझे एक पुस्तक उपहार की रीति से दी है, और वह कहते हैं कि "तुम्हारे उधर (विलायत) भेजने के लिये यदि हमें आकाश और पाताल भी एक करने पड़ जायें तो किञ्चित् संकोच (झंजक) नहीं" इत्यादि। अब मैं कल परसों यह पूछूंगा कि वह †छात्रवेतन किस मिति(तारीख) से मिलेगा। पूछ कर सूचना दूंगा। ....

† लाला हाकिम राय भी लाला लक्ष्मण दास के सम्बन्धी हैं।

‡ यह ग्राम ज़िला गुजरांवाले में है।

* मिस्टर बैल प्रिन्सिपल गवर्णमेंट कालेज से यहां अभिप्राय है।

† यह छात्र वेतन विलायत का वह है जिसका वर्णन ४ अगस्त १८६३ के पत्र में हुआ है।

में रात के समय उस ‡वले के साथ भी (जो मेरे मकान में लगा हुआ है) व्यायाम किया करता हूं।

आप का दास तीर्थराम

(१०३) गुरु जी से सीखा हुआ उपदेश अब गुरु जी की ओर।

७ फरवरी १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

आप अपने वास्तव स्वरूप की ओर ध्यान करने का यत्न करें। संबन्धियों की किञ्चित् मात्र चिन्ता न करें। सत्संग, उत्तम पुस्तक, एकान्त सेवन के द्वारा अपने स्वरूप में निष्ठा होती है। और अपने स्वरूप में निष्ठा होने से सारा संसार दास बन जाता है। आप अपने सेवक को कभी न भुलायें, सर्वदा कृपादृष्टि रक्खा करें।

आप का दास तीर्थराम

(१०४) तीर्थराम जी का समय क्रम।

९ फरवरी १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का एक कृपापत्र इस समय और मिला। अत्यन्त हर्ष हुआ। मैं आजकल कोई पाँच बजे प्रातःकाल उठता हूं और सात बजे तक पढ़ता रहता हूं। फिर शौच इत्यादि जाकर स्नान करता हूं, और व्यायाम करता हूं, तद्पश्चात्

‡ पंजाब के लोग घरों की आमनी साहमनी दीवारों में एक लकड़ी स्तंभ के आकार की गाड रखते हैं जो वस्तुओं के लटकाने का काम देती है। उसे लोग् वला कहते हैं।

पंडित जी की ओर जाता हूं। मार्ग में पढ़ता रहता हूं। वहां एक घंटे के पश्चात् भोजन पाकर उनके साथ गाड़ी में कालेज जाता हूं। कालेज से घर आती वार रास्ते में दूध पीता हूं। घर कुछ मिनट ठेहर कर नदी (रावी दरिया) को जाता हूं। वहां जाकर नदी तट पर कोई आध घंटे के लगभग टहलता रहता हूं। वहां से वापस आती वार सारे नगर के इर्द गिर्द (चारों ओर) बाग़ में फिरता हूं। वहां से घर आनकर कोठे (छत) पर टहलता रहता हूं। इतने में अन्धेरा (अन्धकार) हो जाता है, (परन्तु स्मरण रहे कि मैं चलते फिरते पढ़ता बराबर रहता हूं)। अन्धेरा पड़ने पर व्यायाम करता हूं। और लैम्प (दीपक) जलाकर सात बजे तक पढ़ता हूं, फिर भोजन पाने जाता हूं और *प्रेम की ओर भी जाता हूं। वहां से आकर कोई दस बारह मिनट अपने मकान के चले के साथ व्यायाम करता हूं। फिर कोई साढ़े दस बजे तक पढ़ता हूं। और लेट जाता हूं। मेरे अनुभव में यह आया है कि यदि हमारा उदर ठीक अरोग्यावस्था में हो, तो हमें अत्यन्त हर्ष, प्रसन्नता, एकाग्रता, ईश्वरस्मरण और अन्तःकरण की शुद्धि प्राप्त होते हैं। बुद्धि और स्मृति का बल अति तीव्र होजाता है। प्रथम तो मैं खाता ही बहुत कम हूं, द्वितीय जो खाता हूं पचा लेता हूं।

परसों मुझे प्रेमनाथ का पिता बाबू चंद्रनाथ मित्र के घर ले गया था। पर आज मैं अकेला बाबू चंद्रनाथ मित्र (जो पंजाब विश्वविद्यालय के सब-रजिस्ट्रार हैं) की ओर दफ़तर में गया था, बड़े सम्मान से मिले। कहते हैं कि वह छात्रवेतन इस वर्ष में दिया जाना है और २५०) (दो सौ पंचास रुपये)

* प्रेम से तात्पर्य प्रेमनाथ है।

का मालिक है। वहां (विलायत) जाकर चतुर विद्यार्थी और भी वृत्ति ले सकते हैं। अप्रेल मास में प्रार्थना पत्र दृष्टि-गोचर किये जायेंगे। इस बात को आप ने अभी और किसी मनुष्य से भी प्रकट न करना। वहां वार्तालाप में उन्हों ने कहा था कि गुजरांवाले के प्रान्त में पहिले एक †ब्राह्मण महात्मा पुरुष थे जो जम्मू की ओर भी जाया करते थे, उनकी यह बात प्रसिद्ध थी कि वह कई प्रकार की सच्ची २ भविष्य वाणी कहा करते थे। क्या अब भी कोई ऐसे (महात्मा) हैं। मैं ने फिर आप का वर्णन बड़े अच्छे प्रकार से किया। और कहा कि जब वह (अर्थात् आप) लाहौर में पधारेंगे, मैं दर्शन कराऊंगा, इत्यादि।

आज कल राय मेला राम का *पुत्र जो एफ. ए. में पढ़ता है मुझे कई संदेशे भेज चुका है कि मैं उसे पढ़ाना स्वीकार करूं। पर मैं ने अभी कोई उत्तर नहीं दिया। समय कहां से लाऊं? कठिन यह है कि जिन को पढ़ाने लगता हूं वह फिर छोड़ते बिल्कुल नहीं। कोई न कोई उपाय से मुझे रख लेते हैं। प्रेम से और मैत्री से बांध लेते हैं।

आप का दास तीर्थराम

(१०५) संसार की निःसारता।

१८ फरवरी १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

संसार की कोई वस्तु विश्वास और आश्रय करने के योग्य

---

† सुना जाता है कि ब्राह्मण महात्मा मथ्या दास थे जो लगातार १४ वर्ष तक एक चुबारे में रहे थे, फिर अपनी वाणी की सिद्धि में प्रसिद्ध होगये थे। उन से लोग बहुत भय खाते थे।

* रायमेलो राम के सुपुत्र राय बहादुर लाला रामशरण दास से यहां अभिप्राय है।

नहीं। अत्यन्त कृपा परमेश्वर की उन लोगों पर है जो अपना आश्रय और विश्वास (निश्चय) केवल एक परमात्मा में रखते हैं। और चित्त से सच्चे साधु हैं। ऐसे महापुरुषों के चरणों में परमेश्वर की सारी सृष्टि सेवा करती है (अर्थात् आज्ञाधीन रहती) है।

आप का दास तीर्थराम

(१०६) विलायत जाने निमित्त छात्र-वेतन का विज्ञापन।

२० फरवरी १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का एक कृपा पत्र आया। बड़ा हर्ष प्राप्त हुआ। आज यहां भारी धूप निकली थी। विश्वविद्यालय वालों ने आज ही से उस छात्र-वृत्ति (वज़ीफे) के विषय में यह विज्ञापन दे दिया है कि जो विद्यार्थी वह छात्र-वृत्ति लेना चाहते हैं, वह आज से लेकर मई मास से पहिले २ अपने २ प्रार्थना पत्र भेजें। आप ने कृपा-दृष्टि रखनी। आप स्वयं भी पत्र लिखने का अभ्यास करें। धैर्य और प्रीति से वह काम करना, पर शीघ्र से। आप ने किसी प्रकार की चिन्ता न करना।

आप का दास रामतीर्थ,

(१०७) व्यायाम और व्रतों से रोग दूर करना।

२५ फरवरी १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

महाराज जी! अब आप की प्रकृति कैसी है? आप से जितना हो सके व्यायाम का प्रयत्न करें, और एक दो बार

व्रत रक्खें तो मैं निश्चय करता हूं कि आप को निः सन्देह अरोग्यता प्राप्त हो जायगी। मेरे अनुभव में आया है कि खाने पीने वाली औषधियों का अधिक सेवन करना भी हमें तंग करता है। परमेश्वर आप को शीघ्र कुशल करे, आप ने अपना हाल अत्यन्त शीघ्र अपने हाथ (हस्त) से लिखना। आप के चरणों की ओर ध्यान है। इन दिनों लाहौर में करनल अलकाट और मिसिज़ विसेंट आये हुये हैं।

आप का दास तीर्थराम,

(१०८) साधुसेवा और पुस्तकों से लाभ।

२७ फरवरी १८६४

संबोधन पूर्वांक,

करनल अलकाट और अनीविसेंट आज चले गये, वे पक्के सनातन धर्मी हैं और वेदान्त में बड़ा विश्वास रखते हैं। आज आप की कृपा से मुझे डाक्टर का सारटीफिकेट बड़ा अच्छा मुफ्त मिल गया है। अब आप की ओर से कसर (न्यूनता) है। आप पुस्तकें निःशंक होकर खरीदें। जो कुछ साधु सेवा और पुस्तक इत्यादि पर लगे, वही लाभ है। आप की कुशलता पढ़ कर बड़ी खुशी हुई।

आप का दास तीर्थराम,

(१०९) काम का रहस्य।

४ मार्च १८६४

संबोधन पूर्वांक,

आज मैं देर के बाद विनय पत्र भेजने लगा हूं। इन दिनों मुझे अत्यन्त काम रहा है। बल्कि आज मैं सोया भी पाँच घंटे से कम हूं। प्रोफ़ैसरों का काम भी करने वाला है। सरटीफिकेट अत्यन्त उत्तम मिले हैं। आप सर्व प्रकार से प्रसन्न

रहा करें। किसी प्रकार की चिन्ता न करें। यदि हम किसी काम को करना चाहें, तो मेरे विचार में हम को चाहिये कि अपने मन को किञ्चित न डोलने दें (उस को अडोल, अचल, और निष्क्रिय रक्खें,) परन्तु उस काम के करने के लिये अपनी इन्द्रियों को किञ्चित स्थिर (निष्क्रिय) न होने दें। उनको हिलाते और चलाते रहें और कर्म में अत्यन्त लगाते रहें। इस प्रकार से हमको अवश्य और अत्यन्त शीघ्र ही सिद्धि प्राप्त होती है। कृष्ण जी ने भी ऐसा ही कहा है।

आप का दास तीर्थराम

(११०) बहुत काम में बड़ा आनन्द।

६ मार्च १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

मुझे काम बहुत बड़ा रहता है, परन्तु काम से बहुत अधिक आनन्द रहता है। यह सब आप के चरणों की कृपा है। लाला *रामशरण दास ने एक घंटा के २०) बीस रुपये) मासिक कर दिये हैं, किन्तु समय अधिक खर्च होता है, क्योंकि मुझे स्वयं पढ़ाने में आनन्द आता है।

आप का दास तीर्थराम

(१११) ऐम० ए० में तीर्थराम जी के वस्त्र।

८ मार्च १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

.... पिछले दिनों मुझे कपड़ों (वस्त्र) की बड़ी तंगी रही। धोबी ने मास भर तक कपड़े नहीं दिये थे, इस

* यहां राये बहादुर लाला मेला राम साहिब के सुपुत्र राय बहादुर लाला रामशरण दास से अभिप्राय है।

लिये मैं ने पड़ोसी दरज़ी से एक चोगा, एक कुरता, और एक पाजामा मोल ले लिया था। दाम दो रुपये से दो पैसे कम लगे थे। आप अपनी कुशलता के विषय में लिखें। आप के चरणों की ओर ध्यान रहता है।

आप का दास तीर्थराम

(११२) तीर्थराम जी का केवल दूध पर निर्वाह।

११ मार्च १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

महाराज जी! मैं इन दिनों वास्तव में केवल दूध पर निर्वाह करता हूं। और मेरा दमाग़ (मस्तिष्क) बहुत अच्छी प्रकार से काम करता है। बदन (शरीर) में बल किसी से कम नहीं। मन भी शुद्ध रहता है। यदि आप भी इसी प्रकार केवल दूधादि पर निर्वाह करने का स्वभाव डालें तो मुझे बड़ी खुशी हो। खर्च की कुछ चिन्ता न करें। दूध पीना व्यर्थ खर्च नहीं है। दूध अधिक वर्तने से खर्च कदापि अधिक नहीं होता, और यदि अधिक हो भी तो भी कुछ चिन्ता नहीं है।

आप का दास तीर्थराम

(११३) सत्संग और कुसंग के फल।

१८ मार्च १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

..........सत् संग, उत्तम ग्रन्थ, और भजन कीर्तन (अथवा उपासना) यह तीन चीज़ें तीन लोक का राजा बना देती हैं। और हमारा कुसंग परमेश्वर को हमसे कुपित (रुष्ट) करवा देता है। जिसके कारण हम पर नाना प्रकार के कष्ट

आते हैं। एकान्त सेवन और थोड़ा खाने से परमात्मा आप आकर हमारा संग अंगीकार करते हैं।

आप का दास तीर्थराम,

(११४) निर्धन और धनी पुरुषों में तुलना।

११ एप्रैल १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं ने इन दिनों एक नया पद्य (शेर) पढ़ा है:—

"तहीं दस्तों का रुतवा पेहले-दौलत से ज्यादा है।
सुराही सर झुकाती है जब पैमाना आता है॥"

अर्थः—खाली हाथ (अर्थात् निर्धन) पुरुषों की पदवी धनाढ्य पुरुषों से अधिक है, अर्थात् निर्धन पुरुष धनी पुरुषों से अच्छे हैं; जैसे जब खाली पात्र (भरी हुई) सुराही (घटिका) के सन्मुख आता है, तो सुराही (उस पात्र को भरने के लिये) अपना सिर नीचे झुकाती है, मानो उस खाली पात्र के आगे प्रणाम करती है और उस को अपने से अच्छा समझती है।

आप का दास तीर्थराम,

(११५) मिशिन कालेज में अपने प्रोफेसर के स्थान पर काम करना।

२८ अप्रैल १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

जुलाई के मास में मिशिन कालेज के (गणित शास्त्र के) बड़े प्रोफेसर ने अपने घर विलायत छुट्टी पर जाना है। उन्हों ने मुझे अपने स्थान पर अपने पीछे काम करने के लिये कहा है और लिखा है। और मैंने स्वीकार कर लिया

है। वेतन के विषय अभी कुछ वार्ता नहीं हुई। साथ इस के उन के कहने पर मैंने प्रार्थना पत्र आज विश्वविद्यालय के दफ्तर में दिया है। आगे जो परमात्मा की और आप की इच्छा। आप कृपा दृष्टि रक्खा करें*।

आप का दास, तीर्थराम,

(११६) बुरे पड़ोसियों से परहेज़ (निवृत्ति)

३० अप्रैल १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का पुत्र केवल एक ही आज तक मिला है। लाला रामशरण दास ने मुझे बहुत कहा है कि मैं उस की कोठी पर चल रहूं। चुनाचिः (तदनुसार) उन्हों ने मुझे आज चार पांच कमरे एकान्त और सुरक्षित (महफूज़) दिखलाये भी हैं कि उन में से चाहे कौन सा मैं पसन्द कर लूं। पर मैंने उत्तर दिया था कि महाराज जी आन कर जैसे आज्ञा देंगे, वैसे मैं करूंगा। आप लाला साहिब घर पर सोया करते हैं, पर कोठी में उन के बहुत से नौकर रक्षा के लिये रहते हैं। उन का स्वभाव निरा साधुवों वाला है। कोठी भाटी दरवाज़े के समीप है। जिस मकान में अब मैं रहता हूं उस के सन्मुख तीन मकानों में वेश्या रहती हैं, इस लिये बारियां (खिड़कियां) सदा बन्द रखनी पड़ती हैं। आप शीघ्र पधार कर निर्णय करजावें तो अच्छा हो।

आप का दास तीर्थराम,

---

* इस समय गुसाईं जी एम, ए श्रेणि में पढते थे परन्तु अपने भूतपूर्व प्रोफेसर के कहने पर अपना अध्ययन काल छोड कर उन के बदले मिशन कालेज में पढाते रहे। तिस पर भी वह एम, ए की परीक्षा में सारे पंजाब भर में गणित शास्त्र में प्रथम निकले।

(११७) अंग्रेज़ शिष्य का वी. ए. पास होना।

३ मई १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

आज मैं आप का बड़ा इन्तज़ार (प्रतीक्षा) करता रहा हूं। आप नितान्त नहीं आये। महाराज जी ! आप दास पर सर्व प्रकार से प्रसन्न रहा करें, किसी तरह से भी रुष्ट न होना। मैं नितान्त आप का आज्ञाधीन हूं। मेरा अंग्रेज़ शिष्य वी. ए. पास होगया है।

आप का दास तीर्थराम,

(११८) निष्काम कर्म।

१० मई १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र मिला। इस संसार में कोई वस्तु हमारी नहीं है। यदि हम सुख चाहते हैं, तो हमें चाहिए कि संसार के काम काज करते समय इस शरीर इत्यादि को केवल परमात्मा का समझ कर विचरें और इस में राग द्वेष न करें।

आप का दास तीर्थराम,

(११६) सत्वगुणी आहार।

२८ मई १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

यहां सर्व प्रकार से कुशल है। आप अपना हाल (स्वास्थ्य) शीघ्र लिखते रहा करें। थोड़े और सत्वगुण आहार से चित्त बड़ा प्रसन्न रहता है। गरम और बहुत देर में पचने वाली वस्तुओं से प्रकृति सदा तंग रहती है।

आप का दास तीर्थराम,

(१२०) कुसंग के परिणाम।

२६ मई १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

कुसंग जिसे "कोहे-संग" अर्थात् पाषाण का पर्वत कहना ठीक है हमारी उन्नति की ओर उड़ने वाले पंखों (बाजुओं) पर पड़ कर हमें शववत् (मुरदा सा) बना देता है। और हमें मानो आकाश में से अपने भार के कारण अपने साथ नीचे ही नीचे लिये जाता है। यदि आप भगवद्गीता के अर्थों का एक भोग शनैः २ विचार संयुक्त इन दिनों में पायें, तो मुझे अत्यन्त ही खुशी होगी। आप ने दास पर कृपा दृष्टि रखनी। किसी प्रकार से भी रुष्ट न होना।

आप का दास तीर्थराम,

(१२१) नंगे और लम्बे आँचल (पल्ले) वालों से सुख असम्भव।

२ जून १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं पत्र अपने नियमानुसार (अथवा यथापूर्वक) निरन्तर भेजता रहा हूं। शायद आप को देर से मिलता होगा। या मेरा नौकर डाक में डालना भूल जाता होगा। वास्तव में जगत् की कोई वस्तु भी स्थायी नहीं। जो मनुष्य इन वस्तुओं पर आश्रय करता है (वह अपने आनन्द का आधार परमात्मा पर नहीं रखता), वह अवश्य हानि उठाता है। संसार के धनाढ्य पुरुष खाली और लम्बे आँचल वाले पुरुषों के सदृश हैं। अर्थात् यह लोग हैं तो नितान्त नग्न और कृपण, पर अपने आप को बड़े लम्बे आँचल वाला अर्थात् वस्त्रों वाला अनुमान

करते हैं। ऐसे नग्न व लम्बे आँचल (पल्ले) वालों से क्या सुख मिल सकता है (अर्थात् कुछ भी नहीं)।

आप ने दास पर सदा कृपा-दृष्टि रखनी और उसे अपना आज्ञाकारी सेवक निश्चय करना। कोई चिन्ता न करना। आप ने सर्व प्रकार से आनन्द रहना। किसी प्रकार से भी रुष्ट न होना। मैं आप का टहलिया (किंकर, अनुचर) हूं।

आप का दास, तीर्थराम

(१२२) कीड़ियों की मनोहर बात चीत।

५ जून १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

महाराज जी! परमेश्वर बड़ा ही चँगा (अच्छा) है, मुझे बड़ा ही प्यारा लगता है। आप उस के साथ सुलह (मैत्री) रखा करें। आप के साथ जो कभी २ किञ्चित् कठोरता वर्तता है यह उस (ईश्वर) के विलास हैं। वह आप के साथ हंसना खेलना चाहता है। हमें चाहिये कि हंसने वालों से रुष्ट न होजायें। किसी अन्य पत्र में मैं आप की सेवा में उसकी कई बातें लिखूंगा (या वर्णन करूंगा)। वास्तव में वह (ईश्वर) बड़ा ही मोतियों वाला है।

यह पत्र मैं मेज़ पर रखकर लिख रहा हूं। यहां प्रातः थोड़ी सी चीनी (खाँड वा शक्कर) गिरी थी। उस खाँड के पास मेज़ पर चार पाँच कीड़ियां एकत्र हो रही हैं, और वह सब मेरी लेखनी की ओर और अक्षरों की ओर तक रही (देख रही) हैं, और परस्पर बड़ी बातें कर रही हैं। जितनी बातचीत मैं ने उनसे सुनी है वह विनय पूर्वक लिखता हूं।

(परन्तु पहिले मैं इतनी विनय करना चाहता हूं कि चाहे मेरे अक्षर बहुत ही बुरे और निषिद्ध तथा कुरूप हैं, पर उन

कीड़ियों की दृष्टि में तो चीन देश के नक़शोनगार—सुंदर तथा आकर्षणीय चित्रों—से कम नहीं)। जो कीड़ी सब से पहिले बोली, वह बड़ी अनजान और निर्दोष बच्ची थी। अभी बहुत छोटी बच्ची थी।

पहिली कीड़ी कहती हैः—"देख, बैहन! इस लेखनी की चित्रकारी। पत्र (कागज़) पर क्या गोल २ घेरे (चित्र या वृत्त) डाल रही है। इसकी डाली हुई लिकीरों (अर्थात् अक्षरों) को सब लोग बड़ी प्रीति से अपने नेत्रों के पास रखते हैं (अर्थात् पढ़ते हैं), और जिस कागज़ (पत्र) पर यह (लेखनी) चिन्ह करदे (अर्थात् लिख दे), उस कागज़ को लोग हाथों में लिये फिरते हैं। कागज़ पर मानो मोती डाल रही है, क्या रंगामेज़ियां (चित्रकारियां) हैं। अमुक २ (बाज़े २) अक्षर तो विशेष करके हमारी और हमारी मौसी के पुत्रों (कीड़ों) के रूपों के समान दिखाई देते हैं। क्या ही सुंदर हैं।

कलम गोयद कि मन शाहे-जहानं।
कलमकश रा बदौलत मे रसानम॥

अर्थः—लेखनी कहती है कि मैं जगत् की अधिष्ठात्री (या जगत् की विधाता) हूं और लेखक को कुवेर भंडारी बना देती हूं।

'इस लेखनी में प्राण नहीं हैं, परन्तु हमारे जैसे प्राणियों को बीसियों बार उत्पन्न कर सकती है।" इतना कहकर पहिली कीड़ी चुप हो गयी।

अब दूसरी बोली, यह कीड़ी पहिली की अपेक्षा से कुछ बड़ी थी और अधिक दीर्घ दृष्टि रखती थी।

दूसरी कीड़ी बोलीः—"मेरी भोली बैहन! तू देखती नहीं है कि लेखनी नितान्त निर्जीव वस्तु है; वह तो नितान्त कुछ

काम नहीं कर सकती। दो अंगुली उसे चला रही हैं। जितनी प्रशंसा तू ने लेखनी की की है वह सब अंगुलियों के योग्य है।"

अब एक इन दोनों से बड़ी और स्यानी कीड़ी बोलीः—"तुम दोनों अभी अनजान हो। अंगुलियां तो पतली२ रस्सियों के सदृश हैं, वह क्या कर सकती हैं। वह मोटी बाँह (भुजा) इन सब से काम ले रही है"।

अब इन कीड़ियों की माता बोलीः—"यह सब लेखनी, अंगुलियां, कुहनी (वंक), भुजा इत्यादि इस बड़े मोटे धड़ के आश्रय से काम कर रहे हैं। यह सब प्रशंसा उस धड़ के योग्य है।"

इतना कह कर कीड़ियां सब चुप हो गयीं। तो मैं ने उन को यह कहाः—कि "ऐ मेरे दूसरे स्वरूपो! यह धड़ भी जड़ रूप है। इस को भी एक और वस्तु का आश्रय है, अर्थात् प्राण का। इस लिये यह सब प्रशंसा उस प्राण के ही योग्य है।"

मैं ने इतना कहा तो मेरे चित्त में (हृदय में) आप की ओर से यह आवाज़ आई। और वह आप के वचन भी मैं ने उन कीड़ियों को सुनाये। उन का सार मैं लिखता हूं।

"मनुष्य के प्राण से परे भी एक वस्तु है, अर्थात् परमात्मा। उस वस्तु के आश्रय सर्व भूत चेष्टा करते हैं। संसार में जो कुछ होता है, उसी की इच्छा से होता है। पुतलियां विना तार वाले (पुतलीगर) के नहीं नाच सकतीं। बांसरी (मुरली) विना बजाने वाले के नहीं बज सकता। इसी प्रकार संसार के लोग विना उस (ईश्वर) की आज्ञा के कोई काम नहीं कर सकते। जैसे तल्वार का काम यद्यपि मारना है, तथापि वह विना चलाने वाले के नहीं चल सकती, इसी प्रकार से चाहे कुछ मनुष्यों का स्वभाव कितना

अत्यन्त बुरा क्यों न हो, पर जब तक उन्हें परमेश्वर न उकसाय (प्रेरणा करे), वह हमें कष्ट नहीं पहुँचा सकते। जैसे महाराजा के साथ संधि (सुलह) करने से सब राज्याधिकारी (अमला) हमारा मित्र बन जाता है, इसी प्रकार परमात्मा को प्रसन्न रखने से सारी सृष्टि हमारी अपनी हो जाती है"।

महाराज जी ! आप का कृपा पत्र मिला था, अत्यन्त हर्ष का कारण हुआ। महाराज जी ! यदि आप यहां रहना चाहें, तो बड़े हर्ष की बात है। और यदि यहां आप एक पुरुष रखना चाहें, तो आप (अपनी सेवा के लिये) निःसन्देह रख लें। जहां इतना खर्च हो रहा है, वहां एक अन्य पुरुष का खर्च भी परमात्मा बड़ी अच्छी तरह से दे देंगे। मेरी ओर से कोई फ़र्क़ (कमी या रोक) नहीं। जिस प्रकार से जी (चित्त) चाहे, आप करें।

मुझे किसी पर किञ्चित क्रोध नहीं है। मैं बड़ा खुश हूं। बहुधा क्रोध में आकर मनुष्यों के मुख से कई बातें निकल जाती हैं, हमें सब क्षमा कर देनी चाहियें, आप भी क्षमा करदें। आप उन से मेल (सुलह) करलें। भोजन चाहे आप उन का खायें, चाहे न खायें, पर सुलह (संधि) अवश्य करलें, और सब अपराध क्षमा करदें। साधुवों का क्षमा भूषण होता है।

आप इन दिनों कुछ अचाह (इच्छा रहित) हुए थे, इस लिये आप के पिता जी आप के पास आये थे। यह पत्र स्वतः इतना लम्बा हो गया। क्षमा करना। परमेश्वर आप को बड़ी खुशी देगा।

आप का विनीत दास तीर्थराम,

(१२३) गीता पढ़ने का लाभ।

६ जून १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र मिला, आप के चित्त की अवस्था पढ़ कर अत्यन्त खुशी हुई। थोड़े दिन हुए मैं ने भी गीता का एक भोग पाया था। अत्यन्त ही उत्तम ग्रन्थ है। इस को समझ कर पढ़ने से परमेश्वर पर इतना विश्वास हो जाता है जितना संसारी लोगों का अपने शरीर पर होता है। ·······

मैं आशा करता हूं कि मैं इस शनिवार आप के चरणों में उपस्थित हूंगा। पहिले इस कारण से नहीं आ सकता कि प्रथम तो कोई छुट्टी (अनध्याय) नहीं है, द्वितीय शिष्यवृत्ति (छात्र वेतन) अभी नहीं मिली। और विना रुपयों के यदि वहां जाया जाये तो सब को निराशा होती है, और न वह खुश होते हैं, और न हम को ही अधिक खुश करते हैं। तृतीय मैं आशा करता हूं कि तब तक उस बड़े वज़ीफे (शिष्यवृत्ति) के विषय में निर्णय हो जायगा। और इस विषय के निर्णय हुए विना जाने से यह डर है कि शायद वहां मेरी हाज़री (उपस्थित) की आवश्यकता हो और मैं उस दिन लाहौर में न मिलूं।

यह सब समागम दैवयोग से बने हैं, मेरा इनमें कुछ दखल (हाथ) नहीं है। पर यदि आप आज्ञा देंगे, तो मैं इन सब कारणों के होते हुए भी आप की सेवा में उपस्थित हो सकता हूं। आगे जैसी आप की इच्छा।

महाराज जी! आप दास पर सर्व प्रकार से खुश रहा करें। जो आप की सम्मत्ति (राये) है, मेरी सम्मति उसके

विरुद्ध कदापि नहीं हो सकती। दास को आप ही के चरणों का आश्रय है।

आप का दास,
तीर्थराम,

(१२४) दूसरों के आगे गुरु की महिमा।

८ जून १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

महाराज जी ! आप का कृपा पत्र आये देर हो गयी है। आज लाला राम शरण दास से आप की बहुत बातें कही गयीं। वह अत्यन्त प्रसन्न हुआ। और दर्शनों का अभिलाषी हुआ। महाराज जी ! आप की अति कृपा है। अत्यन्त हर्ष और आनन्द रहता है। आशा है कि शीघ्र दर्शन करूंगा॥

आर्ज़ू दारम कि ख़ाके-आँ क़दम।
तूतियाये-चश्म साज़म दम बदम॥

अर्थः—मेरी यह याचना (अथवा अभिलाषा) है कि आप के चरणों की रज को मैं नित्य अपने नेत्रों का सुरमा बनाऊं।

आप का दास,
तीर्थराम,

(१२५) विलायत के छात्रवेतन का न मिलना

१० जून १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

परमेश्वर की इच्छा नहीं थी कि इस वर्ष में विलायत जाऊं। सविस्तर हाल मुख से वर्णन करने योग्य है।

आप का दास
तीर्थराम,

(१२६) गुरु के पद्य की उपमा।

१२ जून १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं शायद बुद्धवार सेवा में उपस्थित हूंगा। आप का पद्य (शेर) बहुत अच्छा है। लग भग इसी विषय के कुछ पद्य मैं नीचे लिखता हूं।

१—बगिरदे-खुद हमें गरदम् चो गरदूं।
यूं अज़ खुद खरामीदन नदारम॥

२—हर दम अज़ नाखन खराशम सीनाए-अफ़कार रा।
ता ज़-दिल बेरूं कुनम ग़ैरे-ख्याले-यार रा॥

३—दिल के आईने में है तस्वीरे-यार।
जब ज़रा गर्दन झुकाई, देख ली॥

अर्थः—१—अपने चारों ओर आकाश के सामान मैं घूमता हूं, अपने से बाहर मैं नहीं टहलता (फिरता)।

२—मैं सदा शोक परायण (चिन्तामय) हृदय को नखों से छीलता रहता हूं (अर्थात् शोकों को हृदय से बाहर करता रहता हूं) जिस से अपने स्वरूप (अथवा प्यारे) के बिचार से अतिरिक्त अन्य विचारों को हृदय से बाहर निकाल दूं।

३—अन्तःकरण के दर्पण में अपने प्रियतम की मूर्ति है। जब भी किञ्चित् सिर झुकाया, तब उसे देख लिया।

आप का दास,
तीर्थराम,

(१२७) अभ्यासी और शुद्धचित्त मनुष्यों के मिलाप का कारण।

२६ जून १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

अभ्यासी और शुद्ध अन्तःकरणी पुरुषों का मिलाप (सम्मेलन) बड़े ही उत्तम कर्मों का फल है।

आप का दास तीर्थराम,

(१२८) तीर्थराम जी की अत्यन्त प्रवृत्ति।

३ जुलाई १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं कल बड़ा ही काम में प्रवृत्त रहा हूं, अतएव रात के दो बजे सोया हूं। और आज प्रातः पांच बजे फिर काम के लिये उठ खड़ा हुआ हूं। इस लिये पत्र कल नहीं लिख सका। क्षमा करियेगा। मिशिन कालेज के विद्यार्थी बड़े ही खुश होते हैं। यह सब आप की दया है।

आप का दास,
तीर्थराम,

(१२९) एकान्त का आनन्द।

३१ अगस्त १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

यहां मैं एकान्त में हूं। और जो मुझे एकान्तता में आनन्द है, उस का वर्णन करना अत्यन्त कठिन है। यदि आप जितना भी हो सके कोठे (छत) पर रहने का स्वभाव डालें, तो आप को पूर्ण आनन्द होगा, और मुझे भी इस से बड़ी खुशी होगी। एक स्वभाव को बदल कर दूसरा स्वभाव डालना

कठिन तो है, पर आप यदि यह स्वभाव कोठे (छत) पर रहने का डाल लेंगे, तो आप बड़े ही खुश रहा करेंगे। कोठे पर रह कर तत्व विचार के पुस्तक, वासिष्ठ आदिक, पढ़ने से लाभ होगा। नीचे यह पुस्तक विचारे ही नहीं जा सकते।

(१३०) ईश्वर भक्त के सम्बन्ध में कविता।

२० सितम्बर १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

और कोई बात लिखने के योग्य नहीं। निम्न पद्य ही लिख देता हूं।

(१) आशिकां दर बेनवाई खुसरविहां मे कुनंद।
शाही-ए-कोनीन दारद बे सरो सामने-इशक़॥
(२) बदिल्के फ़क्र, शाही मे कुनम अज़ खूबियें-ताले।
न जम दारद न कैये ईं ताला-ए-गरदूं स्वारे-मन॥
(३) हुबाब आसा किया है कार इस्तग़ना तमाम अपना।
रक्खा महरूम में क़तरह से इस दरया में जाम अपना॥

अर्थः-(१) ईश्वर भक्त निर्धन तथा अन्य सामग्री रहित अवस्था में भी बादशाहियां करते हैं [अर्थात् आनन्द भोगते हैं]। द्रव्य इत्यादि से रहित प्रीति दोनो लोकों [लोक परलोक] का अधिपति बनाती है॥

(२) प्रारब्ध की उत्तमता से मैं कंथा में भी राज्य करता [आनन्द भोगता] हूं। ऐसी आकाश पर स्वारी करने वाली मेरी प्रारब्ध न बादशाह जमशेद रखता है और न कैकाऊस [अर्थात् ईरान देश के बादशाह की भी ऐसी उत्तम प्रारब्ध नहीं)।

(३) बुदबुदा के सदृश हम ने अपना काम तमाम कर दिया है (अर्थात् निजानन्द के समुद्र में हम ने अपने तुच्छ अहंकार रूपी बुदबुदे को फोड़ दिया है), और इस आनन्द समुद्र में अपने शरीर रूपी प्याले (पात्र) को अहंकार रूपी बिन्दु (अर्थात् बुदबुदा) से रहित कर दिया है।

आप का दास तीर्थराम

(१३१) चित्त अभ्यास करने से वश में आता है।

२७ सितम्बर १८६५

संबोधन पूर्वोक्त,

..................परमात्मा बड़ा ही कारसाज़ (काम सिद्ध करने वाला) और सब पर अत्यन्त कृपालु है। हमारे चित्त की सब दुर्वृत्तियां (अथवा कुरीतियां) हैं कि परमात्मा पर विश्वास न लाकर हमें दुःखी पड़ा करती हैं। यह चित्त अभ्यास करने से वश में आता है। अच्छे, उत्तम पुस्तक वासिष्ठ, आदिक ऐसे समय पर विचारने चाहियें। और सर्वोपरि अत्यावश्यक यह बात है कि आहार अल्प कर देना चाहिये, अथवा व्रत रख लेना चाहिये। यह ऋतु बड़ी सत्वगुणी है। यदि आप योगवासिष्ठ पढ़ें, तो मुझे बड़ी खुशी हो।

तुलसीदास जी लिखते हैं:—"जब दाँत न थे तब दूध दियो। अब दाँत भये क्या अन्न न दे है।

झंडूमल की गागर (जल के बर्तन) का बहुत ध्यान रखना। आप दास पर सदा प्रसन्न रहें।

आप का दास तीर्थराम

(१३२) कबीर जी का वाक्य ।

३० सितम्बर १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का एक कृपा पत्र मिला, बड़ी खुशी हुई। कबीर जी का यह वाक्य (वचन) क्या ही अच्छी अवस्था को प्रकट करता है:—

मन ऐसो निर्मल भयो जैसे गंगा नीर।
पीछे २ हर फिरें कहत कबीर कबीर॥

आप का दास,
तीर्थराम

(१३३) जीवन से बेज़ारी (व्याकुलता)

७ अक्तूबर १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

थोड़ी देर हुई आप का पत्र मिला। पत्र पढ़ने से कुछ ताप सा चढ़ गया है। न अब पढ़ा लिखा जाता है और न बैठा ही जाता है। चित्त (प्रकृति) जीवन से और संसार से व्याकुलता होगया है। मैं अपनी ओर से अन्तःहृदय से यत्न करता हूं कि कोई काम आप की इच्छा के विरुद्ध न हो जाये। फिर भी काल की गति कुछ न कुछ करा देती है, या किसी ऐसे मनुष्य ने जो मेरे और आप के संबन्ध से ईर्ष्या रखता होगा आप को कुछ सिखा दिया होगा। पँचतंत्र और अन्वार सहेली में एक कथा है, वह सुनने योग्य है। चित्त अत्यन्त व्याकुल है।

आप का दास,
तीर्थराम

(१३४) धन संबन्धी कठिनाइयां।

१३ नवम्बर १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

चाचा जी (अर्थात् पिता जी) का पत्र आया था। वह लिखते हैं कि पच्चीस २५) रुपये तुम को छोटे वज़ीफे (शिष्य-वृत्ति) के मिलने हैं, वह रख छोड़ने और पांच ५ रुपये और जोड़कर (संग्रह करके) दस रुपये परीक्षा-प्रवेश फीस (दाखला) देने के समय तक (अर्थात् डेढ़ या पौने दो मास तक) बना लेने। इस प्रकार से पैंतीस ३५) रुपये हुए। और पन्द्रह १५) रुपये हम से लेकर ५०) (पचास) रुपये पूरे करके परीक्षा प्रवेश-फीस दे देनी। अब विनय यह है कि यह पच्चीस जो चाचा जी छोटे वज़ीफे (छात्र-वेतन) के लिखते हैं, इन में से सवा बारह १२।) रुपये तो एक मास की फीस के काटे जाने हैं, और छे रुपये ६) के लगभग उन दिनों के काटे जाने हैं जब मैं ताप के कारण कालेज में अनुपस्थित रहा। और गरम कपड़े (वस्त्र) भी मैं ने बनवाने हैं, और कुछ खाना पीना भी है। और फीस काटकर थोड़े से रुपये जो मिला करेंगे उन में से पांच ५ रुपये जोड़ना (संग्रह करना) भी कठिन है।

कल मैं गरम कपड़े ले आया हूं, डबलज़ीन का पाजामा, एक कुर्त्ती, और एक कशमीरे का कोट लिये हैं, सब पर पौने आठ ७॥।) रुपये लगे हैं। पर अब मैं चाचा जी (पिता जी) को इस विषय में कुछ विशेष लिखूंगा नहीं। केवल अपनी दशा जतला दूंगा [वर्णन कर दूंगा]। आशा है कि मासड़ (मौसा) जी सहायता कर देंगे। जो परमात्मा अब तक सहायता करता रहा है अब भी कर देगा।

आप का दास तीर्थराम,

(१३५) तीर्थराम जी के पास एक पैसे का भी न होना।

१६ नवम्बर १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

आपका कृपा पत्र कल मिला, अत्यन्त आनन्द हुआ। आप के चित्त की दशा पढ़ कर हृदय बड़ा प्रसन्न हुआ। आप को परमेश्वर सदा ऐसा ही खुश रक्खे। मेरे इस वार पत्र देर से लिखने का कारण यह है कि मेरे कार्ड पूरे (समाप्त) होगये थे और न मेरे पास कोई पैसा था, न काले (नौकर) के पास। शिष्य-वृत्ति की प्रतिदिन वाट ताकता था, पर मिलती नहीं थी। कल दस बजे रात के लाला (रामशरण) साहिब के दफ्तर से ठाकुर को कह कर यह कार्ड नकलवाया था। उत्तर आप को भेजता हूं। कपड़े मैं ने सिले सिलाये लिये हैं। एक पुरुष को साथ ले गया था। कपड़े बहुत अच्छे हैं।

आप का दास तीर्थराम।

(१३६) धनाढ्य पुरुषों का वर्ताव।

१६ नवम्बर १८६४,

संबोधन पूर्वोक्त,

आजकल यहां कोई उत्सव होने के कारण इस मकान में कोई बड़े पुरुष आने वाले हैं। उन के लिये मेरे वाला कमरा और बीच (मध्य) का कमरा नियत किये गये हैं। और मुझे उस कमरे में आना पड़ा है जिस में लाला हरिकृष्ण (प्रसिद्ध नाम डाक्टर साहिब) रहते थे। आज उस में अस्वाब ले आया हूं। आज मुरालो वाला का एक युवक यहां

तार की पाठशाला में प्रविष्ट होने को आया है। युवक (लड़का) भला मानस और मेरे कहने पर चलने वाला है। यदि आप आज्ञा दें तो उसे मैं अपने मकान में रहने दूं। नहीं तो निकाल दूं। आप ने उत्तर से शीघ्र कृपा करनी। यहां नीचे के लगभग सब कमरों में कपास डाली गयी है। और प्रतिदिन कपास के छकड़े के छकड़े आते जाते हैं। उनका विचार है कि जिन कमरों में दफ्तर लगते हैं, वहां भी कपास भर दें, और दफ्तर ऊपर की छत में (अर्थात् जहां मैं रहता हूं) लगाया करें। अब देखिये मेरे रहने का क्या प्रबन्ध होता है।

आप का दास तीर्थराम,

(१३७) मासड़ (मौसा) जी की अमूल्य सहायता और गुसाईं जी का संकट हरण।

२१ नवम्बर १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

मासड़ जी का पत्र आया था, वह लिखते हैं कि परीक्षा-प्रवेश-फीस के लिये हमारे से अतिरिक्त और किसी से रुपये न लेने। परमात्मा की प्रशंसा कोई किस वाणी से करे। चित्त तो आप के दर्शनों को करता है, पर अभी कोई ऐसा प्रसंग दिखाई नहीं देता।

आप का दास तीर्थराम,

(१३८) उधार लेकर कार्ड लिखना।

७ दिसम्बर १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

इस वार पत्र लिखने में देर का कारण यह है कि पास

कोई पैसा नहीं था। पहिले कार्ड खर्च हो चुके थे। शिष्य-वृत्ति के मिलने की आशा पर किसी से उधार नहीं लिया था। सो छात्र-वेतन तो अभी तक मिला नहीं। आज अन्त में निराश होकर उधार ले कर कार्ड लाया हूं॥

आप का दास तीर्थराम,

(१३६) धन की तंगी के दिन।

६ दिसम्बर १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

मेरे विचार में पुस्तक खरीदने में हमें रुपये का ख्याल कभी नहीं करना चाहिये। उस लाभ की अपेक्षा से जो हमें पढ़ने से प्राप्त होता है, पुस्तक का मूल्य चाहे कितना ही अधिक क्यों न हो, कुछ भी नहीं होता। एक वह भी दिन थे जब छोटी २ पुस्तकों के लिखाने पर लोग बीसियों रुपये खर्च कर देते थे। अब से दो सप्ताह तक हमें बड़े दिनों की छुट्टियां (अनध्याय) होंगी। आप का लिखना अब पहिले से उत्तम है। बारीक लिखने का यत्न करें।.........छात्रवेतन (वज़ीफा) अभी नहीं मिला। आज कल पहिले की अपेक्षा से धन की तंगी (खैंच) के दिन हैं। कारण आप जानते ही हैं।

आप का दास तीर्थराम,

(१४०) बद्धकोष्ठ (कब्ज़) का परिणाम।

१६ दिसम्बर १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

आज आप का क्रोध से भरा कृपा पत्र मिला। न मालूम, मेरे दिन कैसे आ गये हैं। मैं अपनी ओर से तो अत्यन्त यत्न (एहत्यात) के साथ प्रत्येक काम करता हूं, पर फिर भी आप किसी न किसी बात पर क्रुद्ध हो ही जाते हैं। बहुधा

मैं तीसरे दिन पत्र भेजा करता हूं, पर कई बार चौथे दिन भी भेजा जाता है। इस बार काम की विशेषता के कारण चौथे दिन भेजा गया। कोई असाधारण (अपूर्व) बात नहीं थी, परन्तु आप रुष्ट हो गये। पहिले भी कई बार मेरा विनय पत्र देर के पीछे गया, पर तब आप ने क्षमा कर दिया, और कुछ अनुमान न किया। अच्छा, महाराज जी! आप का रुष्ट होना भी ठीक उचित बल्कि मेरे हाल (अवस्था) पर अनुग्रह है।

जवाबे-तलख मे ज़ेबद, लबे-लाले-शकर खारा।

भावार्थ—मधुर २ (मिठास भरे) ओंठों पर कटु शब्द भी युक्त हो जाते हैं।

आप के मुखारविन्द से कटु वचन भी मुझे अमृत समान हैं, मुझे आप के क्रोध से भी कई प्रकार के लाभ मिलते हैं, कई उपदेश मिलते हैं। मैं सर्व अवस्था में आप का आज्ञाधीन [अनुचर] हूं।

"सरे-तस्लीम खम है जो मिज़ाजे-यार में आए"

भावार्थः-आप के चरणों में मेरा सिर झुका पड़ा है; आप की जो इच्छा हो, करें।

१—राज़ी हैं हम उसी में जो कुछ दिलरुबा करे।
ख्वाह वह जफ़ा-ओ-जौर करे या वफ़ा करे॥

२—आं रा कि बिजाये तुस्त हरदम करमे।
उज़रश बिनेह अरकुनद ब उमरे सितमे॥

भावार्थः-१—जो हमारा प्रियतम प्राणेश हमारे साथ करे, चाहे वह सत्कार करे चाहे तिरस्कार, हम उसी में प्रसन्न वा सन्तुष्ट हैं।

२—जिस की कि तेरे ऊपर नित्य कृपा रही है, यदि वह

सारी आयु में कोई उपद्रव तथा अपराध भी करे, तू उसे क्षमा कर दे।

महाराज जी! आप इतने रुष्ट हुए, और मैं जानता हूं कि मेरे चित्त में राई का दाना भर भी किसी प्रकार का बुरा विचार (ख्याल) नहीं था, इस लिये मैं अब अपने चित्त को व्यर्थ चिन्ता में नहीं लगाता (चिन्ता करने से मुझ से एक अक्षर नहीं पढ़ा जाता)। और पूर्ववत् आप के चरणों में चित्त को अधिक खुश रखता हूं। मैं जानता हूं कि मेरे चित्त की निर्मलता आप पर प्रकट हुए बिना नहीं रहेगी और आप मुझ पर पहिले से भी अधिक प्रसन्न रहेंगे।

अदावत से तिरी प्यारे! ज़रर होवे तो मैं जानूं।
मुझे तुम ज़हर दे देखो, असर होवे तो मैं जानूं॥

(भावार्थः—हे भगवन्! आप यदि शत्रुवत् मेरे साथ वर्तें तो भी मुझे कोई हानि नहीं होगी, और यदि मुझे आप विष भी दे दें तो भी मुझे कुछ बुरा असर नहीं होगा; आप चाहे वर्त के देख लें, यदि मेरे पर निश्चय न हो)

जिस कारण से आप मुझ पर रुष्ट हुए हैं उसी से आप का चित्त इन दिनों पढ़ने में भी भले प्रकार नहीं लगता। मैं अपने अनुभव की सहायता से प्रतिज्ञा के साथ कह सकता हूं कि वास्तव कारण इन दोनों बातों (रुष्ट होना, और पढ़ने में चित्त न लगना) का आप के उदर में रोग होने से अतिरिक्त और कुछ कदापि नहीं है। जब उदर में रोग हो या शौच बद्ध हो कर आवे, तो चित्त अशान्त रहता है, पढ़ा जाता नहीं। और व्यर्थ संकल्प वा चिन्ता और मिथ्या (निर्मूल) अनुमान वा विचार मनुष्य की मति को भ्रष्ट कर देते हैं। जब शौच सुगमता से ठीक आवे और

उदर नितान्त अरोगी हो, तब किसी प्रकार के शोक अथवा चिन्ता का आना ऐसा है, जैसा कड़कती दुपैहर (प्रचंड मध्यान काल) में अर्ध रात्रि का पड़ जाना। मासड़ (मौसा) जी मेरे लिये एक औषध (नुसखा) बना कर लाये थे, उस का मैं ने सेवन किया था। बड़ा ही लाभ प्राप्त हुआ। उस औषधि विधि (नुसखा) की अंग्रेजी और देशी वैद्यों ने अति प्रशंसा की है। यूनानी वैद्यों की सम्मति का मुझे पता नहीं। मैं भी उसे बनवाना चाहता हूं। यदि आप उस का सेवन करें तो बड़ी अच्छी बात हो। इस से उदर, मस्तिक और नेत्रों को अत्यन्त लाभ प्राप्त होता है। यद्यपि आप इसे जानते होंगे, तथापि मैं पुनः लिख देता हूं। "हरड़ (हरीतकी) बहेड़ा, आम्ला (आमलक), सौंठ, सौंफ, सरना", इन सब का एक समान लेकर, कूट छान कर इन सब के बराबर सैंधिया लून मिला दो। प्रत्येक मात्रा नौ माशा से एक तोला तक होनी चाहिये।

आप का दास तीर्थराम,

(१४१) प्रसन्न चित्त के सामने संसार के सारे पदार्थ व्यर्थ हैं।

१७ दिसम्बर १८९४

संबोधन पूर्वक,

इस समय आप का एक प्रसन्नता भरा पत्र मिला, अत्यन्त हर्ष हुआ। धन्य है परमात्मा का कि जिस ने आप को पहिली आनन्दमयी अवस्था पुनः दिखाई। यह बड़े हर्ष का स्थान है। मेरा मन भी आप के चरणों की दया से आनन्द में है। ऐसी अवस्था के आगे संसार के सब पदार्थ तुच्छ हैं। ख्वाजा हाफ़िज़ लिखते हैं कि:—

दमे बा ग़म बसर बुर्दन जहां यकसर नमे अर्ज़द ।
बमय बिफरोश दल्क़े-मा कज़ीन् बेहतर नमे अर्ज़द ॥

भावार्थः—ऐ प्यारे ! तेरे प्रेम के शोक में एक श्वास भी लिया हुआ सारे जगत् के मूल्य के तुल्य नहीं (अर्थात् संसार उस श्वास के आगे तुच्छ है) । हमारा बाह्य सर्वस्व इस प्रेममद्य के बदले बेच दे, क्योंकि इस से बढ़ कर इस का मूल्य नहीं ।

आप का दास तीर्थराम,

(१४२) अधिक अहार का परिणाम ।

१८ दिसम्बर १८६४

संबोधन पूर्वोक्त,

भजन करने से निः सन्देह पूर्णानन्द प्राप्त होता है । और परमात्मा पर सच्चा विश्वास होने से किसी वस्तु की कमी नहीं रहती । पर जब परिमाण (अन्दाज़े) से अधिक खाया जाये, तो यह विश्वास परमात्मा पर नहीं रहता और वृत्ति विषयों और शोक तथा चिन्ता में आसक्त हो जाती है । दूध का सेवन बड़ा अच्छा है । खर्च की कुछ बात नहीं । शेख सादी लिखता है कि:—

अन्दरूं अज़ तुआम खाली दार,
ता दर आं नूरे-मार्फत बीनी ।
तही अज़ हिकमती ब इल्लते-आं,
कि पुरी अज़ तुआम ता बीनी ॥

भावार्थः—उदर को भोजन से खाली रख, जिस से तू उस में ईश्वर का प्रकाश अनुभव कर सके, क्योंकि भरे हुए पेट वाला अपनी वृत्ति को ईश्वर ध्यान में ठीक नियुक्त नहीं

कर सकता। तुझे यह ज्ञान तथा बोध नहीं है इसी लिये तू ने उदर को भोजन से नाक तक भरा हुआ है।

आप का दास तीर्थराम,

(१४३) चूर्ण कलां

२१ दिसम्बर १८९४

संबोधन पूर्वोक्त,

एक पत्र मैं ने आज प्रातः भेजा था, संभावना है मिला होगा। *हांसी से मैं एक पीपा घी का लाया हूं। और परीक्षा-प्रवेश-फीस के लिये रुपये की जब मुझे आवश्यकता पड़ेगी, वह तत्क्षण भेजदेंगे। मैं अपने साथ नहीं लाया। इसके कई कारण थे। प्रथम तो वह मुझे यह रुपया औरों से गुप्त हो (छुपा) कर देना चाहते थे। द्वितीय मुझे यहां लाकर भी तो किसी के पास जाकर रखना ही पड़ता था, इत्यादि। केवल आती वार रेल का टिकट उन्हों ने ले दिया था। बड़ी प्रीति और सत्कार से मिले थे, और अन्य कई भले पुरुषों का मिलाप हुआ। आप को मौसा जी (मासड़ जी) बड़े सन्मान से स्मरण करते थे। और कहते थे कि वैसे तो आप की कृपा से यहां बहुत कुछ है, पर केवल आप की कृपादृष्टि चाहिये। साधारण आरोग्यता के लिये उस चूर्ण (हड़, बहेड़ा, आमला, सौंठ, सौंफ, सरना, सेन्धियालून) की, जिस का नाम उन्हों ने चूर्ण कलां बताया है, बहुत प्रशंसा की है।

रेयोन्द (चीनी) की गोलियों के बनाने की यह विधि हैः—"एक ड्राम या चार माशे रयोन्द चीनी लेकर उसे बहुत पीस लो, और पानी के साथ उसकी ३० तीस गोलियां

* हांसी नगर का नाम है, यहां गुसाईं तीर्थराम जी के मौसा (मासड़) पंडित रघुनाथ मल जी असिस्टैंट सर्जन की पदवी पर थे।

बना लो"। प्रत्येक मात्रा एक या दो गोली से सात गोली तक। यदि हो सके तो उस चूर्ण (सफ़ूफ) में पाँच बूंदें पेपरमिंट तेल की भी डाल लो। थोड़ा सा मैग्नेशिया मिलाने से गोली अच्छी तरह से बन जायगी। आप ने दास पर कृपादृष्टि रखनी।

आप का दास तीर्थराम

सन् १८९५ ईस्वी।

इस वर्ष गुसाईं तीर्थराम जी की आयु साढ़े इक्कीस वर्ष के लगभग थी और इसी वर्ष के आरम्भ में गुसाईं जी ने गणित शास्त्र में एम. ए. पास किया।

(१४४) मिस्टर गिल्बर्ट सन का एक उत्तम घड़ी उपहार में देना।

३ जनवरी १८९५

संबोधन पूर्वोक्त,

आज मुझे गिल्बर्टसन साहिब (मिशिन कालेज वाले) ने बुला कर एक उत्तम घड़ी उपहार में दी है सहित ज़ञ्जीरी के। यह सब आप की कृपा का फल है और यह सर्वस्व आप की ही है। चाहे आप यह घड़ी अपने पास रक्खें चाहे मेरी टाईम पीस आप ले लें।

आप का दास, तीर्थराम

(१४५) संसार किसी का नहीं।

४ जनवरी १८९५

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपापत्र मिला, बड़ी खुशी हुई।

जहाँ पे आदर, नमानद वकस।
दिल अन्दर जहां आफरीं बन्दो बस॥

भावार्थः—पे भाई! संसार किसी का नहीं होगा, इस लिये चित्त ईश्वर में लगा, और बस।

....................मैं ने सुना है कि *लाला साहिब का विचार है कि अंग्रेज़ी और फ़ारसी के दोनों दफ्तर बहुत शीघ्र ऊपर ले आयें, और मुझे कहें धुर ऊपर (सब से ऊपर की छत पर) बरसातियों (परछत्तियों) में रहो। जैसा आप आज्ञा पत्र भेजेंगे, वैसा करूंगा। आप कहें तो बरसातियों में जा रहूं, नहीं तो नगर (बस्ती) में चला जाऊं। मुझे बरसाती में रहने में किञ्चित भी क्लेश नहीं बल्कि प्रसन्न हूं। केवल परीक्षा तक ही रहना है। उत्तर सोच विचार कर देना। यह भी संभव है कि और कोई स्थान रहने को दे दें।

आप का दास तीर्थराम

(१४६) राय राम शरण दास के घर भोजन का प्रबन्ध।

२१ फरवरी १८९५

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र मिला, अत्यन्त हर्ष हुआ। अब आज से लेकर काला (नौकर) के आने तक मेरा भोजन लाला (राम शरण) जी के घर से आ जाया करेगा। आज आया था। उन्हों ने अपने आप ऐसा प्रबन्ध किया है। यह आप

* लाला साहिब से अभिप्राय लाला रामशरण दास रईस लाहौर (अर्थात् अपने शिष्य) से है, या उनके पिता राये मेलाराम साहिब बहादुर से है।

का संकल्प पूरा हुआ है। मेरा अपना विचार तो थोड़ा बहुत था। आप के आने की सूचना पढ़ कर खुशी हुई। शीघ्र पधारिये।

आप का दास,
तीर्थराम,

(१४७) गुरु जी से अभेदता।

१८ अप्रैल १८६५

संबोधन पूर्वोक्त,

आप ने जो एम, ए, की परीक्षा दी हुई है, उस का परिणाम अभी नहीं निकला। जब आप के उत्तीर्ण होने की सूचना आयेगी, मुझे बड़ी खुशी होगी। यह सब आप ही का काम है। मुझे कोई शीघ्रता नहीं, जिस दिन यह सूचना निकालने की आप की इच्छा हो, उसी दिन सही।

आप का दास,
तीर्थराम,

(१४८) एम ए उत्तीर्ण होने के पीछे (श्रेणि) क्लास खोल कर पढ़ाने का संकल्प।

६ मई १८६५

संबोधन पूर्वोक्त,

लाला साहिब और सेठ साहिब अभी नहीं आये। मैं ने अभी तक कोई विचार नहीं किया। कोई दिन परमेश्वर के रंग देख कर क्लास (श्रेणि) खोलूंगा। शायद कल कुछ भेंट कर सकूंगा। आप दया रक्खा करें।

आप का दास,
तीर्थराम,

(१४९) गणित शास्त्र की क्लास खोलने का विज्ञापन।

१० मई १८९५

संबोधन पूर्वांक;

कल आशा है यहां से कुछ रुपये हाथ लगेंगे। तत्क्षण भेंट की जावेगी, लाला साहिब व सेठ साहिब अभी नहीं आये। कई सम्मतियों के पश्चात् आज गवर्णमेंट कालेज के प्रिन्सिपल साहिब ने मेरी ओर से यह विज्ञापन (नोटिस) छपवाना भेजा है कि पेफ. ए. श्रेणि के विद्यार्थी दस रुपया मासिक और बी-ए श्रेणि के विद्यार्थी पन्द्रह रुपया मासिक फीस देकर मुझ से (अर्थात् तीर्थराम से) आकर गणित पढ़ें। जब विद्यार्थियों की संख्या दस से अधिक हो जायगी, तब काम आरम्भ किया जायगा। आप दास पर दया रक्खा करें।

आप का दास तीर्थराम

(१५०) उदासी का नाम तक नहीं।

१२ मई १८९५

संबोधन पूर्वांक,

कल आप की सेवा में भेंट की गयी थी, आप का कृपा पत्र भी कल मिला, बड़ी खुशी हुई। आप की दया से मुझे बड़ा आनन्द रहता है। उदासी का नाम तक भी कभी नहीं आता और पढ़ने लिखने का काम भी बहुत रहता है। आप का यहां पधारना मुझ पर अति कृपा करना है। लाला साहिब और सेठ साहिब अभी नहीं आये। कल विज्ञापन (नोटिस) छप कर आ गये थे। आज नगर के द्वारों और

कालेजों में लगाये जायेंगे। और कल पञ्जाब प्रान्त के अन्य नगरों में जहां जहां भी कालेज हैं भेजे जायेंगे। ऐफ. ए श्रेणि के दस रुपये और बी-ए श्रेणि के पन्द्रह रुपये फीस मेरे प्रोफैसरों ने नियत की है। आप ने दास पर कृपा-दृष्टि रखनी और कभी रुष्ट न होना।

आप का दास तीर्थराम

(१५१) एक प्रोफैसर को गणित शास्त्र पढ़ाना।

२१ मई १८६५

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का एक कृपा पत्र आज मिला, अत्यन्त आनन्द हुआ। आप की दया से मुझे कोई किसी प्रकार की चिन्ता किञ्चित मात्र भी नहीं है। इस वीर (गुरु) वार को एक साधारण (पब्लिक) व्याख्यान गणित-शास्त्र के लाभों पर देना चाहता हूं। और शुक्रवार को एक प्रोफैसर साहिब को गणित पढ़ाना आरम्भ किया है। और भविष्य सोमवार को अपनी क्लास की पढ़ाई आरम्भ करने का विचार है। काम सब परिश्रम माँगता है, आप निश्चिन्त पधारिये। बड़ी कृपा होगी।

हमारे ग्राम का सुन्दरदास कल सायंकाल का मेरे पास आया हुआ है। अभी तक वह मेरा किसी प्रकार से प्रतिबन्धक (विघ्न कारिक) नहीं हुआ। आगे, उस को साथ रखने या न रखने के विषय जैसी आप आज्ञा देंगे किया जायगा। बरकत राम के समान यह भी अलग बैठ कर अपना कार्य करता रहता है।

आप का दास,
तीर्थराम

(१५२) केवल एक विद्यार्थी का पढ़ने आना।

९ जून १८९५

संबोधन पूर्वोक्त,

अब केवल एक ही विद्यार्थी पढ़ने आता है। मैं पढ़ाता अति ही उत्तम हूं। पर कोई अवसर ही ऐसा बन गया है। किसी के तो पिता माता आज्ञा नहीं देते। कोई धूप के कारण रुक जाता है। किसी को कोई और विघ्न पड़ जाता है। अच्छा (अस्तु), परमेश्वर सब कुछ ठीक ही करेगा। आप ने कोई चिन्ता न करनी।

आप का दास तीर्थराम

(१५३)

१४ जून १८९५

संबोधन पूर्वोक्त,

(१) खुदा खुद खानसामानस्त अस्बावे-त्वक्कल रा।

(२) दरे-फैज़स्त मिनशीं अज़ कुशायश ना उमेद ईंजा।
मसाले-दानः अज़ हर कुफ़्ल मे रोयद कलीद ईंजा॥

भावार्थः—(१) ईश्वर पर भरोसा करने वाले (अथवा विश्वास रखने वाले) पशुओं के लिये परमेश्वर आप रसोईया (भंडारी) बना रहता है।

(२) ईश्वर-कृपा का द्वार खुला हुआ है। कठिनाईयों के दूर करने से यहां त्यक्ताशा (आशा हीन) होकर मत बैठ। बीज (दाना) के समान प्रत्येक रहस्य की ग्रन्थि यहां उत्पन्न भयी है।

आप की दया से चित्त बड़ा आनन्द में है। आप इसी प्रकार कृपा-दृष्टि रक्खा करें।

(१) भीखा भूखा कोई नहिं, सब की गठड़ी लाल।
गृह खोल नहीं जान दे, इत विधि भये कंगाल॥

सात गांठ कौपीन में, साध न माने शंक।
राम अमल माता फिरे, गिने इन्द्र को रंक॥

(२) खिशत ज़ेरे-सरो बर तारक हफ़्त अख़तर पा।
पाये रिफ़अत निगरो-मन्ज़िले-साहिब जाही॥

भावार्थः—(१) कोई प्राणी भी नंगा भूखा नहीं है, सब के भीतर घड़े जितना बड़ा रत्न (लाल) धरा पड़ा है, केवल उस की ग्रन्थि खोलना नहीं जानते, इस लिये कंगाल बने हुए हैं।

निर्धन पुरुष को कंगाल (दीन या कृपण) नहीं कहते, क्योंकि मस्त साधु के पास एक कौड़ी नहीं होती बल्कि उस की कौपीन भी फटी पुराणी सात आठ गांठो वाली होती है, तथापि वह देवताओं के मालिक इन्द्र को भी कुछ नहीं गिनता। इस लिये जो अपने आत्मा से विमुख और मूढ हैं, वही दीन वा कृपण हैं, निर्धन पुरुष नहीं।

(२) ईंट तो जिस का सरहाना हो और पाओं सातों आकाशोंके ऊपर, ऐसे ब्रह्मवित् मस्त की पदवि तुम अनुभव करो।

मैं हरैड़ नहीं सेवन करा करता। खर्च इत्यादि का निर्वाह होता जायगा। आप ने किसी को न लिखना।

आप का दास,
तीर्थराम

---

(१५४) गुरु जी के लिये निज-खर्च का कम करना।

१८ जून १८६५

संबोधन पूर्वोक्त,

आप के दो पत्र मिले, अत्यन्त खुशी हुई आप ने मेरे देर से पत्र आने का कुछ अनुमान न करना। इन दिनों दौड़ धूप बहुत रही है। और प्रकृति ज़रा ठिकाने नहीं रही। इस लिये पत्र में विलम्ब होता रहा। आप ने क्षमा करना। मैं ने अपना निज का खर्च बहुत कम कर दिया है। पर चित्त पहिले से भी अधिक प्रसन्न है और सर्वप्रकार से आनन्द है। आप ने अपना खर्च पहिले से भी निःशंक अधिक कर देना, कुछ चिन्ता नहीं। आप ने कोई चिन्ता न करना, मेरी चाहे कैसी ही दशा क्यों न हो, आप को किञ्चित् तंगी नहीं दी जायगी। मैं कल चरणों तक कुछ भेंट कर सकूंगा। पंडित * गोपीनाथ को मैं मिला था, वह क्या कर सकता है। लाहौर में रहने से आशा है कि कोई न कोई सूरत [उपाय] निकल आवे। ढूंड (तालाश) में हूं। इस सप्ताह में किसी दिन विलायत वाले † वज़ीफे (छात्र-वेतन) का निर्णय होना है। इस लिये यहां लाहौर में इन दिनों स्थित रहना उचित है। और अभी चरणों में उपस्थित नहीं हो सकता।

आप का दास तीर्थराम,

---

* पंडित गोपीनाथ जी वही हैं जो कई वर्ष तक लाहौर सनातन धर्म सभा के प्रसिद्ध मंत्री रहे। और आज कल महाराज दरभंगा के पास नौकर (कर्मचारि) हैं।

† यह छात्रवेतन वही है जो एम. ए. की परीक्षा में प्रथम उत्तीर्ण

(१५५) गुरु जी की दृष्टि पर सारे संसार का उद्धार।

१४ जून १८९५

संबोधन पूर्वोक्त,

महाराज जी ! परसों सोमवार कोई दस बजे के लगभग विलायत वाले वज़ीफे (छात्र-वेतन) का निर्णय होना है। आप ने दास के अपराध क्षमा करके अवश्य दया-दृष्टि करनी। आप की कृपा-दृष्टि पर सब कुछ सारा संसार निर्भर है।

आनांकि खाक रा ब नज़र कीमिया कुनन्द।
आया बुवद कि गोशाए चश्मे-बमा कुनन्द॥

(भावार्थः—जो महाशय कि अपनी एक दृष्टि-मात्र से भस्म को सुवर्ण बना देते हैं, आशा है कि वह एक बार कृपा-दृष्टि हमारी ओर भी करेंगे।

मेरा मन अब आप की दया से अच्छी अवस्था में है।

आप का दास तीर्थराम

(१५६) अपने बन्धु जनो की आजीविका का ख्याल।

१८ जून १८९५

संबोधन पूर्वोक्त,

आज कोई निर्णय नहीं हुआ। आज हम से केवल यह पूछा गया है कि हम ने मिडिल और ऐण्ट्रेन्स (मध्यमा और

होने वाले पुरुषों को मिलना है। गत वर्ष के पहिले पत्रों में जो शिष्य-वृत्ति का वर्णन था वह बी-ए की परीक्षा में प्रथम उत्तीर्ण होने वालों के संबन्ध में था।

प्रवेश) परीक्षा किस २ वर्ष में दी थी; आशा है कि इस सप्ताह में अवश्य निर्णय हो जायगा। यदि मैं (विलायत) गया तो पीछे सब के लिये ठीक २ पूर्ण रीति से पक्का (दृढ़) प्रबन्ध किये बिना कदापि नहीं जाऊंगा। आप दया रक्खा करें। मैं अपनी ओर से शीघ्र अर्ज़ करने (अर्थात् कुछ भेंट भेजने) का यत्न करूंगा। आप ने दया-दृष्टि रखनी।

आप का दास तीर्थराम,

(१५७) विलायत जाने से रह जाना।

२२ जून १८९५

संबोधन पूर्वोक्त,

विलायत का छात्र-वेतन किसी और विद्यार्थी को मिल गया है। बरेली-कालेज का समाचार देखिये क्या होता है।

आप का दास तीर्थराम,

(१५८) धन की अत्यन्त न्यूनता (तंगी)

२५ जून १८९५

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का एक कृपा-पत्र कल मिला, अत्यन्त आनन्द हुआ। मैं तो आप को पहिले ही लिख चुका हूं कि आप कृपा पूर्वक यहां पधारिये और यहां आने का कृपया परिश्रम उठावें, क्योंकि मेरा वहां (आप के पास) आना किञ्चित कठिन है। इस के कई कारण हैं, जिन में से एक यह भी है कि अब मेरे लिये किराये के वास्ते रुपया अथवा दो रुपया उपार्जन करना कुछ सुगम वार्ता नहीं है।

आप का दास,

तीर्थराम,

(१५६) सनातन धर्म सभा की विद्या संबन्धीय समिति का सभासद होना ।

४ जुलाई १८६५

संबोधन पूर्वोक्त,

.... मुझे उन्हों ने (सनातन धर्म सभा के सभासदों ने) सनातन धर्म सभा की विद्या संवन्धीय समिति का सभासद बना लिया है। वहां की प्रवेश (एण्ट्रेन्स) परीक्षा भी मैं ने ली है। मैं आशा करता हूं कि इस सप्ताह में कुछ भेंट करूंगा ।

आप का दास,
तीर्थराम ।

(१६०) सनातन धर्म सभा की सब-कमेटी (उप-समिति) का मन्त्री होना ।

५ जुलाई १८६५

संबोधन पूर्वोक्त,

लाला * हंसराज जी को भी मैं जाकर मिला था। सनातन धर्म सभा की समिति का मैं मंत्री बनाया गया हूं जिस के सभासद निम्न लिखित पंडित हैं।

(१) पं० ईश्वरी प्रसाद जी, (२) पं० भानुदत्त जी, (३) पं० गणपति जी, (४) पं० दुर्गादत्त जी, (५, पं० शिवदत्त जी, (६) लाला अयोध्या दास जी बी० ए०, (७) और मैं ॥......... वह चित्र-विद्या (ड्राइंग-डरायिंग) विना फीस

---

* लाला हंसराज प्रिन्सिपल डी, ए, वी, कालेज लाहौर से यहां अभिप्राय है।

सीखने की मुझे आज्ञा मिल गयी है। आप दास पर कृपा दृष्टि रक्खा करें।

आप का दास, तीर्थराम।

(१६१) पं० दीनदयाल जी से भेंट (मुलाक़ात)

६ जुलाई १८६५

संबोधन पूर्वोक्त,

आज बॅल साहिब को भी मिला था और वह कहते हैं कि एक प्रार्थना पत्र इस विषय का आप डायरक्टर साहिब को भेज दो कि "विद्या विभाग (मैहक्मा तालीम) में मैं सेवा करनी चाहता हूं। और जब आवश्यकता पड़े मुझ से काम लिया जावे।" साथ इस के सुना है कि अमृतसर कालेज का गणित-शास्त्र का प्रोफैसर अधिक वृद्ध होने के कारण नौकरी छोड़ने लगा है। परन्तु निश्चित (पक्का) पता नहीं!

आज पं० दीनदयाल जी (जो कल के यहां आये हुए हैं) किसी ने सभा में मेरी भेंट (मुलाक़ात) करादी थी, वह अत्यन्त प्रसन्न हुए थे। मित्रों के समान कंठ से लगे थे और कहते थे कि मैं इनको (अर्थात् मुझको) पाहिले ही जानता हूं।

आप का दास, तीर्थराम।

(१६२) पेशावर हाई स्कूल की हैडमास्टरी (मुख्य-अध्यापकता) का ख्याल।

१५ जुलाई १८६५

संबोधन पूर्वोक्त,

पेशावर में एक हाई-स्कूल की हैडमास्टरी मिल सकती है। पर वेतन थोड़ा है। कोई पचास, साठ रुपये है। जैसे आप

आज्ञा करेंगे वैसा किया जायगा। यदि आप की इच्छा हो तो यत्न किया जाये। पत्र से शीघ्र सूचना दें। डायरक्टर साहिब के पास भी प्रार्थना-पत्र (अर्ज़ी) भेज दिया हुआ है।

आप का दास तीर्थराम।

(१६३) गुसाईं जी का कार्य-क्रम।

१६ जुलाई १८६५

उपमा पूर्वोक्त,

मेरे बड़े प्रोफ़ैसर साहिब का कुछ काम करने वाला है। मेरे दूसरे प्रोफ़ैसर साहिब भी इस सोमवार को मेरे स्थान पर पधारेंगे, और कुछ काम (ऐफ़० ए० और बी-ए. के पर्चे देखने का) दे जायेंगे। अपनी पुस्तकें भी जितना हो सके देखता हूं। सनातन धर्म स्कूल के सम्बन्ध में भी कुछ न कुछ कार्य रहता है: अर्थात् उनकी लिखित परीक्षा लेना, उन को विज्ञान-शास्त्र (साइन्स) और गणित-शास्त्र का कुछ बताना, इत्यादि। भजन भी करता हूं। आप के चरणों का ध्यान रहता है।

पं० दीनदयाल जी के पाँच व्याख्यान सुने। विश्वास पर, बड़ा आनन्द हुआ। अब उन्हों ने इस वीरवार (गुरुवार) से उपासना पर व्याख्यान देने आरम्भ करने हैं। आप की दया से बड़ा आनन्द रहता है।

आप का दास, तीर्थराम।

(१६४) प्रत्येक दशा में आनन्द।

१७ जुलाई १८६५

संबोधन पूर्वोक्त,

जिस पत्र में पेशावर की हैडमास्टरी के विषय में लिखा है उस के संबन्ध में यह प्रार्थना है कि मैं ने बॅल साहिब से उस

का ज़िक्र (चर्चा) किया था। वह कहने लगे कि वहां कदापि न जाओ। क्योंकि प्रथम तो पेशावर का कोलैक्टर उस स्कूल के अत्यन्त विरुद्ध है, द्वितीय डायरक्टर और इन्स्पैक्टर साहिब दोनों उस के विरुद्ध हैं। तृतीय वहां मैं तुमको कोई सहायता नहीं दे सकूंगा। चतुर्थ तुम्हारे काम का मान (क़दर) नितान्त नहीं होगा, क्योंकि स्कूल सरकारी नहीं है। थोड़ा काल धैर्य धरो, परमेश्वर कोई बड़ा अच्छा अवसर निकाल देगा।" उस स्कूल से मुझे सत्तर ७०) रुपये मासिक मिल सकते थे। पर बॅल साहिब ने बहुत रोका है। इस लिये वहां जाना उचित नहीं। मुझ से पूछिये तो मैं प्रत्येक दशा में बड़ा आनन्द हूं। अभी कुछ दिनों तक मेरे वहां (आप के चरण कमलों में) उपस्थित होने में कुछ प्रतिबन्ध (रुकावटें) हैं। पंद्रहवें या सोलहवें दिन तक उपस्थित हो सकूंगा। अभी न तो किराया पास है और न प्रोफैसरों के नाना प्रकारों के कामों से अवकाश। आगे जैसे आप आज्ञा दें, वैसा कर देता हूं। चित्त तो मेरा भी चाहता है कि आप के दर्शन करूं, परन्तु हाल (अवस्था) यह है।

आप का दास, तीर्थराम।

(१६५) अमृतसर कॉलेज की प्रोफ़ैसरी निमित्त यत्न।

२० जुलाई १८६५

संबोधन पूर्वोक्त,

आप के दो कृपा पत्र आज मिले, अत्यन्त आनन्द हुआ। बॅल साहिब ने कहा है कि "तुम अमृतसर वाली जगह (पदवी) के विषय सारा वृत्तान्त पूछ कर विस्तार पूर्वक

मुझे सूचना दो। फिर मैं तुम्हारे लिये यत्न करूंगा। विशेष करके यह पता लगाओ कि वह (प्रोफ़ेसर) कब जायँगे। मैं अब अपने गणित-शास्त्र के एक प्रोफ़ैसर से सम्मति लूंगा कि मैं अमृतसर जाकर उस कॉलेज के प्रिन्सिपल से मिल आऊँ या क्या करूं। आज मैं श्लेष्म (रेशा, जुकाम) के कारण बहुत तंग (दुःखी) रहा, आशा है कि कल आराम रहेगा। पंडित दीनदयाल जी के व्याख्यान हो रहे हैं।

आप का दास तीर्थराम।

(१६६) प्रिन्सिपल की डायरक्टर के पास पहिले से ही सफ़ारश।

२१ जुलाई १८६५

संबोधन पूर्वोक्त,

कल एक प्रोफ़ैसर साहिब से विदित हुआ कि अमृतसर कालेज वाले गणित-शास्त्र के प्रोफ़ैसर ने पेन्शन का विनती पत्र (अर्ज़ी) भेज दिया हुआ है। पर कमेटी ने (क्योंकि वह कालेज म्योनिसपल कमेटी का है) वह विनती पत्र डायरक्टर साहिब की ओर भेजा है, और उसके पत्र (अर्ज़ी) पर यह प्रार्थना साथ लिख दी है कि इस प्रोफैसर को एक वर्ष और इस कालेज में रक्खा जाये। आज मैं बॅल साहिब से मिला था, वह कहते थे कि "तेरे विषय में मैं ने पहिले ही डायरक्टर साहिब को लिख भेजा है कि तुझे उस कालेज में ले लें। अब जो परमात्मा की इच्छा होगी, हो जायगा। आप दया रक्खा करें। आप की दया से आनन्द है।

आप का दास,

तीर्थराम।

(१६७) पंडित दीनदयाल जी से मेल जोल

२२ जुलाई १८६५

संबोधन पूर्वोक्त,

कल पंडित दीनदयाल जी से मैं उन के स्थान पर जाकर मिला था। बड़े खुश हुए थे। आप का भी कुछ हाल (वृत्तान्त) सुनाया था, और अपने विचार भी प्रकट किये थे। आज गवर्नमेंट कालेज के प्रोफ़ैसर लगभग सारे कालेज के गणित शास्त्र की परीक्षा के पर्चे मुझे नम्बर लगाने और शुद्ध करने के लिये दे गये हैं। आप दया रक्खें॥

आप का दास,
तीर्थराम।

(१६८) धनाढ्य पुरुषों के घर में कमरों का घड़ी २ बदलना।

२५ अगस्त १८६५

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं आज कुशलता से यहां पहुंच गया हूं। बादामी बाग़ के स्टेशन पर हाकिम सिंह और एक अन्य मनुष्य मुझे लेने के लिये आये हुए थे। अस्वाब उन्हों ने उठा लिया। और हम कोठी को चले आये। मेरे कमरे में एक अंग्रेज़ एञ्जिनिअर (जिस को आज से लाला साहिब ने नौकर रक्खा है) रहता है। मेरा अन्य अस्वाब तो उन्हों ने बड़ी ड्योढ़ी (विशाल कमरे) में जहां डाक्टर साहिब रहते हैं मेरे पीछे (अनुपस्थिति काल में) रखवा दिया हुआ है। पर मेरी पुस्तकें वैसे ही अलमारियों में बन्द थीं। वह पुस्तकें भी मैं बड़ी ड्योढ़ी (खुले कमरे) में ले आया हूं। एक और

डाक्टर साहिब रहते हैं, दूसरी ओर मैं रहता हूं। यह भी अच्छा मकान है। दुःख कोई नहीं। लाला साहिब पढ़ा करेंगे। आप कृपापत्र भेजते रहना।

आप का दास तीर्थराम।

(१६६) गुसाईं जी के साथ बड़े लाला साहिब का बर्ताव (सलूक)

२ सितम्बर १८६५

संबोधन पूर्वोक्त,

अभी यहां मेरे भोजन का कोई अच्छा प्रबन्ध नहीं है, क्योंकि बड़े * लाला जी ने उस मेरे भोजन पकाने वाले को मेरे पीछे रोक दिया है कि वह भविष्य में मेरा भोजन न बनाये। पर आशा है कि लाला राम शरण दास शीघ्र प्रबन्ध कर देगा। लाला राम शरणदास यहां कपास का कारखाना खोलने लगा है जिस से अनेक बेकार (कार्य रहित) पुरुषों को रोज़गार (कार्य) मिलेगा।

आप का दास तीर्थराम।

(१७०) बैकुंठपुरी भी दोष रहित नहीं।

८ सितम्बर १८६५

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का एक कृपा पत्र आज मिला, अत्यन्त हर्ष हुआ। मैं तो आशा करता हूं कि यहां रहने से आप को तंगी नहीं होगी। और मेरा यह भी निश्चय है कि किसी न किसी दोष से रहित तो यह लोक क्या बल्कि बैकुंठपुरी का भी

---

* बड़े लाला जी से अभिप्राय यहां राये रामशरण दास जी के स्वर्गवासी पिता राय बहादुर लाला मेला राम जी है।

कोई मकान (स्थान) नहीं है। जहां आप होंगे, वहां तंगी भला कहां! यह मकान मेरी समझ में तो बहुत उत्तम है। ....॥

आप का दास तीर्थराम।

(१७१) गुरु-इच्छा विरुद्ध कोई बात न करना।

४ अक्तूबर १८९५

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं आशा करता हूं कि कल अर्ज़ (भेंट) कर सकूंगा। महाराज! आप दया रक्खा करें। मैं अपनी इच्छा से तो कोई बात भी नहीं करता, यदि अपनी कुल (अथवा जाति) के वृद्ध पुरुषों के सम्मान के विचार से अथवा किसी और प्रेरणा के प्रभाव से मुझ से कोई अपराध हो गया हो तो आप कृपापूर्वक क्षमा करें। और सर्व प्रकार से आप ही के सेवक अधिक हो रहे हैं। दास की तो प्रतिकूल (उलट) काम करने की मजाल (साहस) नहीं। आप यहां कब पधारेंगे।

आप का दास तीर्थराम।

(१७२) गुसाईं तीर्थराम जी के पास आने वाले सब खुदा बन गये।

सियालकोट।

१८ अक्तूबर १८९५

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कोई पत्र नहीं आया। आप दया रक्खा करें। आप की दया से यहां आने वाले सब खुदा (ईश्वर) बन गये हैं। पर भजन भी किया करेंगे।

आप का दास तीर्थराम।

(१७३) गुसाईं तीर्थराम जी के व्याख्यानों में प्रारम्भ से ही प्रभाव ।

सियालकोट
२१ अक्तूबर १८९५

संबोधन पूर्वोक्त,

पंडित साहिब के नौकर कर्मचन्द ने मुझे दस रुपये रखने को दिये थे। और मेरी बड़ी भूल हुई कि मैं ने रख लिये। वह रुपये मेरे सन्दूक में से किसी ने चुरा लिये हैं। और मै ने उधार लेकर उसे भर दिये (दे दिये) हैं। अच्छा, कुछ शोक नहीं, परमात्मा ने अच्छा किया, उपदेश मिल गया।

आप का कृपा-पत्र मिला, बड़ा आनन्द हुआ। कल उन्हों ने (सनातनधर्म सभा के लोगों ने) मेरे व्याख्यान का विज्ञापन नहीं दिया था, पर आप की कृपा से मेरे बोलते २ सनातन धर्म मंदिर का मैदान (स्थल) मनुष्यों से नितान्त भर गया था। डिप्टी साहिब और बड़े २ राज्याधिकारी (ओहदेदार) भी थे। देश पर भी बोला था। पर लागों के नेत्र अश्रुओं से भरे दिखाई देते थे । और तालियां भी बहुत बजी थीं। आप का दास शायद इस शुक्रवार रात की गाड़ी से लाहौर जायगा। आप ने दया रखनी।

आप का दास तीर्थराम।

(१७४) घर पर पं० गणेश दत्त शास्त्री गोस्वामी का आगमन।

सियालकोट
२ नवम्बर १८९५

संबोधन पूर्वोक्त

कल अमृतसर से उत्तर आया है कि वहां मेरी अर्ज़ी

(विनति पत्र) पहुंचने से पहिले और पुरुष रक्खा गया है। आज पंडित गणेश दत्त शास्त्री गोस्वामी संस्कृत प्रोफ़ैसर मिशिन कालेज लाहौर के यहां आये हुए हैं। मेरे स्थान पर उतरे हैं। सभा में व्याख्यान देंगे। आप कृपा रक्खा करें।

आप का दास तीर्थराम।

(१७५) तीर्थराम जी का मिशिन कालेज में प्रोफ़ैसर नियत होना।

सियाल कोट
२१ दिसम्बर १८९५

संबोधन पूर्वोक्त

आप के दो कृपा-पत्र मिले, बड़ी खुशी हुई.......। लाहौर से आप की कृपा और दया के कारण पत्र आया है कि मिशिन कालेज की विद्या संबन्धीय समिति ने मुझे गणित शास्त्र के प्रोफैसर की पदवी देना परस्पर निर्णय कर लिया है। और प्रिन्सिपल साहिब ने मुझ से पूछ भेजा है कि वह मुझ को स्वीकार है या नहीं। अप्रैल के अन्त से वहां काम करना है। पहिले वर्ष वेतन १००) (एक सौ) रुपया, तत्पश्चात् अधिक। इस कृतज्ञता (शुकराने) में परमात्मा का भजन अधिक करना। और मेरी मंद मति में यह उचित है कि इस का वर्णन अभी सर्व साधारण से न किया जाये। इस पदवी को अंगीकार करने का पत्र मैं आज लाहौर लिखने लगा हूं। महाराज जी! यदि कोई अपराध हो तो क्षमा करना, मैं पत्र तो नित्य भेजता रहा हूं।

आप का दास,
तीर्थराम।

(१७६). आठ दिन केवल दूध पर निर्वाह करते हुए भी पूरे तीस मील का चक्कर लगाना।

सियालकोट

२३ दिसम्बर १८९५

संबोधन पूर्वोक्त

मैं शायद कल सोमवार ही यहां से रात की गाड़ी में चला आऊं। मुझे आठ दिन अन्न (रोटी) खाये हो गये हैं। केवल दूध पीता हूं। किन्तु पूरे तीस मील का चक्कर सैर (भ्रमण) की रीति से लगा आया हूं और किञ्चित् मात्र (थकान) प्रतीत तक नहीं हुआ। आशा है कि * चोग़ा (गौन) यहां से भी मिल जायगा। †

आप का दास तीर्थराम।

---

* चोगा से तात्पर्य वह गौन है जिसको पहन कर उत्तीर्ण विद्यार्थी बी. ए. या एम. ए. की पदवी कोन्वोकेशन हाल में जाकर लेते हैं॥

† अक्तूबरके पत्रों से लेकर अन्त तक यह सिद्ध होता है कि गुसाईं जी अक्तूबर मास से लेकर मिशिन हाईस्कूल सियाल कोट में अध्यापक नियत हो गये हुए हैं, पर उस विषय स्पष्ट कोई पत्र नहीं मिला है।

१८९६

(इस वर्ष गुसाईं तीर्थराम जी की आयु साढ़े बाईस वर्ष के लगभग थी और इसी वर्ष मिशिन कालेज के प्रोफ़ैसर के स्थान पर वह नियत हुए।)

(१७७) अपयश दिलाने वाले का संग-त्याग।

सियालकोट
१५ जनवरी १८९६

संबोधन पूर्वोक्त,

(ल) का आचरण ठीक नहीं (या निन्दनीय) है, इस लिये उस को अपने पास से निकाल देने का विचार करता हूं। वह अपयश कराने वाला पुरुष है।

आपका दास,
तीर्थराम।

(१७८) अपने पास अच्छे विद्यार्थी रखने की प्रतिज्ञा।

सियालकोट
१८ जनवरी १८९६

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपापत्र मिला, अत्यन्त आनन्द हुआ। (ल) अब अपने घर रहता है। पढ़ने आया करेगा। मैं अपने पास अन्य विद्यार्थी जो अच्छे हों रक्खा करूँगा। आप कृपा करके यहां पधारिये।

आप का दास,
तीर्थराम।

(१७९) गुजरात (पंजाब) में रहना।

सियालकोट
५ फरवरी १८९९

संबोधन पूर्वोक्त,

गुजरात भी एक रात गया था, भगत (*हरभज राय) जी नहीं मिले। अलबत्ता गुजरात और वज़ीराबाद के एंट्रेन्स क्लास (प्रवेश श्रेणि) में पढ़ने वाले विद्यार्थियों ने बहुत लाभ उठाया, और अत्यन्त प्रसन्न हुए। अन्य भी कई महापुरुषों से मेल हुआ। ....

आप का दास तीर्थराम।

(१८०) गुसाईं जी का चार घंटे तक व्याख्यान।

सियालकोट
१० फरवरी १८९९

संबोधन पूर्वोक्त,

आज मैं †गड्डल गया था। वह ग्राम ‡मुराली वाले से कुछ बड़ा है, और केवल क्षत्रिय लोगों की बसती है। घर सब पक्के हैं। वहां की सभा में लाहौर की साधारण सभा से भी अधिक रौनक़ (शोभा) पाई। दो बजे से कुछ पीछे से लेकर छे बजे के लगभग तक मेरा व्याख्यान होता रहा। लोग जम्बू की अपेक्षा से अधिक प्रसन्न हुए। आप कृपा रक्खा करें। कुछ बरातों के लोग भी आये हुए थे।

आप का दास तीर्थराम

---

* भगत हरभज राये टनन क्षत्री गुजरात के वासी हैं। आजकल स्टैम्प बेचते हैं, पर चित्त से बड़े शान्त, शुद्ध और धार्मिक हैं। तीर्थराम जी के साथ यह कटासराज हरिद्वार और अमरनाथ यात्रा में भी गये थे।

† गड्डल सियालकोट ज़िला में एक कस्बा (बसती है।

‡ गुसाईं तीर्थराम जी की जन्मभूमि है।

(१८१) निजानन्द ।

सियालकोट
१४ फरवरी १८९९

संबोधन पूर्वोक्त,

आप की कृपा से पूर्ण आनन्द (निजानन्द) रहता है। कल यहां सत्संग था। पूरे दो घंटे तो निर्विकल्प शान्तात्मा होकर चुपचाप समाधि में सब बैठे रहे। फिर दो घंटे मैं कुछ कहता रहा। आप कृपादृष्टि रक्खा करें। सब आप ही का प्रकाश है।

आप का दास तीर्थराम।

(१८२) बोर्डिंग का अध्यक्ष (मोहातमिम) होना

सियालकोट
१५ मार्च १८९९

संबोधन पूर्वोक्त,

अभी कुछ मिला नहीं, आशा है कि शीघ्र कुछ भेंट करूंगा। हमारे स्कूल के बोर्डिङ्ग हौस का अध्यक्ष (सुपरिण्टैण्डैण्ट) पहिले एक मुसलमान अध्यापक था। पिछले दिनों उसने यहां एक अत्यन्त अनुचित चेष्टा की [अर्थात् हिन्दु जिस प्राणी की क़सम (शपथ) खाते हैं, उस (गाय) का मांस बोर्डिङ्ग में मंगवाया]। यह बात प्रसिद्ध होगयी, सो उस को निकाल दिया गया है। अब बोर्डिंग का मुख्याधिकारी (सुपरिण्टैंडैंट) मेरे से अतिरिक्त और कोई हिन्दू अध्यापक नहीं बन सकता। इस लिये मुझ को उसका कार्य संभालना पड़ा है। आज वहां (बोर्डिंग) में चले जाना होगा। जो जगह मैं ने वहां ली है वह इस स्थान से बहुत अच्छी है। और आप को वहां बहुत सुख होगा। एकान्त भी है। आप कब पधारेंगे।

आप का दास तीर्थराम।

(१८३) जगत् के सब पदार्थ खोये जाने वाले हैं।

सियालकोट
१७ मार्च १८९९

संबोधन पूर्वोक्त,

आप के दो कार्ड मिले। आप की धोती बोर्डिंग हौस में कहीं नहीं मिली। पता नहीं कहां खोई गयी। इतना मैं कह सकता हूं कि जिस किसी ने उस धोती को खोया है, जान बूझकर अथवा बुरे चित्त से उसने यह काम नहीं किया। अच्छा, परमेश्वर और दे देगा। जगत् की सब वस्तु एक दिन खोई जानी हैं। आप दया रक्खा करें।

आप का दास तीर्थराम।

(१८४) गुसाईं जी की अत्यन्त नम्रशीलता। इज्जो-इंकिसारी।

सियालकोट
२२ मार्च १८९९

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का क्रोध भरा पत्र मिला, चित्त को अत्यन्त खेद हुआ। महाराज जी! मेरे अपराधों को क्षमा करें। मैं बड़ा मूर्ख हूं। आज कल मेरी शारीरिक प्रकृति में कुछ विकार है। कब्ज़ की शिकायत है, अर्थात् मलावरोध रहना है। और शिर भी ठीक अवस्था में नहीं। कदाचित कोई उग्र शारीरिक पीड़ा न आ घेरे। उधर आप रुष्ट होगये हैं। मैं तंगी की दशा में हूं। यदि मुझ से कोई अपराध हो जाता है तो मैं निश्चय दिलाता हूं कि उनका कारण केवल मेरी शारीरिक दशा का

ठीक न होना है। आप कृपापूर्वक क्षमा करें। यद्यपि वाहर से पत्र भेजने में मैं कभी चूक जाऊं, तथापि चित्त से तो मैं सर्वदा आप के चरणों में हूं।

हवा ख्वाह-तो अम जानाँ व मेदानम कि मेदानी।
कि हम नानविशतः मे ख्वानी व हम नादीदः मेदानी॥

भावार्थः—ऐ प्राणाधार! मैं तेरा प्रेमाकांक्षी हूं और जानता हूं कि तुझे यह पता है (कि मैं तेरा प्रेमाकांक्षी हूं), और विना पत्र लिखे तू मेरे हृदय को पढ़ लेता है और विना मुख देखे तू मेरे अन्तः करण को जान लेता है।

आज मैं ने थोड़ी सी सरना खाई है। शायद इस से कुछ आराम आजाये। अब मैं ऐएट्रैन्स के पर्चे (प्रवेशपरीक्षा के प्रश्न पत्र) देखने आरम्भ करने लगा हूं। आप ने कृपा दृष्टि से सब कार्य भले प्रकार से शीघ्र संपूर्ण करा देना। जैसी आप आज्ञा देंगे वैसा वैसाखी मेले को जाने के विषय में किया जायगा।

जो अपराध इस दीन सेवक से हुआ है, उस से कृपया बहुत शीघ्र सूचना दें जिस से भविष्य में सावधानता रक्खी जाये। इस अपराधी के अवगुणों को चित्त में न रखना। न पता, इस जगत् में कितने दिन और रहना है जिस से इस शोक को लेकर शरीर न त्यागूं।

आप का दास, तीर्थराम,

(१८५) शारीरिक आरोग्यता की आवश्यकता

सियालकोट,
३० मार्च १८९६

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र मिला, बड़ा आनन्द हुआ। शारीरिक आरोग्यता निःसन्देह आवश्यक वस्तु है। इस के ठीक होने

से मन भी ठीक रहता है। यहां एक उत्सव हुआ था जिस में बाहर से सन्त, ब्राह्मण भी बुलाये गये थे। पर व्याख्याता मैं ही था। चार घंटे मेरा व्याख्यान होता रहा। आप की दया से लोग बड़े प्रसन्न हुए। नगर के धनाढ्य लोग भी सब उपस्थित थे।

आप का दास, तीर्थराम।

(१८६) तपोवन के दर्शन का संकल्प।

सियालकोट,
१३ अप्रेल १८९६

संबोधन पूर्वाङ्क,

आप की दया से पर्चे आज समाप्त हो गये। अब यदि आप की आज्ञा हो तो तपोवन के दर्शन के संकल्प से मैं यहां से चला आऊं। वहां से वापस आकर लाहौर चले आयेंगे। लाहौर से अनुज्ञा आ गयी है। प्रथम मई मास तक वहां चले जाना है।

आप का दास, तीर्थराम।

(१८७) बी-ए* के सब विद्यार्थियों का गणित लेना।

लाहौर,
३ मई १८९६

संबोधन पूर्वाङ्क,

आप का कोई कृपा पत्र नहीं आया। आप दया रक्खा करें, ऐण्ट्रैन्स (प्रवेश-परीक्षा) का परिणाम अभी नहीं निकला।

* तीन मई के पत्र से प्रतीत हो रहा है कि गुसाईं जी अब लाहौर मिशन कालेज में गणित शास्त्र के प्रोफेसर की पदवी पर नियत होगये हैं

बी-ए श्रेणि के जितने विद्यार्थी हमारे कालेज में प्रविष्ट हुए हैं सब ने गणित लिया है।

आप का दास, तीर्थराम।

(१८८) साढ़े तीन सौ रुपये का तत्काल खपा देना (उड़ा देना)

२७ मई १८९६

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र मिला, बड़ा आनन्द हुआ। .... विश्व विद्यालय से साढ़े तीन सौ रुपये (३५०) मिले थे। ऋण देने वालों को भेज दिये हैं। मासिक भाड़ा, मास भर के लिये आटा, घर के लिये बर्तन, चारपाइयां और अल्मारी खरीद लिये हैं। दूध का हिसाब चुका दिया है। अब केवल एक रुपया देना रहा है। इन रुपयों से पूर्वोक्त कार्यों से अतिरिक्त अन्य कोई कार्य नहीं होसका। आप ने रुष्ट न होना आप को जिस बात की आवश्यकता हो, वह अब भी भले प्रकार से पूर्ण होसकती है। पुस्तकें भी कुछ ली हैं। आप की बड़ी कृपा हुई है। आप ने दया रखनी।

आप का दास, तीर्थराम।

(१८९) चाचा जी (अर्थात् पिता जी) का क्रोध।

१ जून १८९६

संबोधन पूर्वोक्त,

चाचा जी (पिता जी) मुझ पर अत्यन्त क्रुद्ध हैं, और विशेष करके इस बात पर कि मैं घर वालों को अपने साथ

(लाहौर) ले आया हूं। शायद दो तीन दिन तक यहां आयें। पर कुछ पक्का पता नहीं, आप ने दया रखनी।

आप का दास,तीर्थराम।

(१६०) गुसाईं तीर्थराम जी का तीव्र त्याग।

५ जून १८६६

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का एक कृपा पत्र आज मिला था। मैं तो नितान्त ही आप का हूं। किसी वस्तु को अपना नहीं समझा हुआ। सांसारिक द्रव्य को एकत्र करना आनन्द का कारण नहीं समझा हुआ। न भूपण बनाने का और न पदार्थों के उपार्जन करने का विचार है। आप की कृपा से वृक्ष की छाया घरके बदले, भस्म वस्त्रों के बदले, भूमि शय्या के बदले, और भिक्षान्न खाने के लिये यदि मिल जाये तो भी बड़ा आनन्द माना हुआ है। किस धन के लिये मैं आप को क्रुध करदूं? यदि भिक्षुओं के सदृश रहने के लिये मुझे आज्ञा दें तो मैं सब कुछ छोड़ कर साधुओं के समान रहने को तय्यार हूं। कालेज में काम भी करता रहूंगा, जो कुछ वहां से मिले जिस प्रकार आप का चित्त चाहे वर्त लिया करना। हमारे घर भी जो उचित समझें दे दिया करना। यह दीन सेवक तो केवल काम करने और परमात्मा को चित्त में धारण रखने से वह सुख पाता है कि जिस को बाह्य विपय सुख और आडम्बर अथवा ठाठ बाठ की किञ्चित् भी आवश्यकता नहीं। मुझे तो ईश्वर निमित काम करने से जो सुख होता है, वही वेतन पर्याप्त (काफ़ी) है। मेरा वेतन जाने और आप जानें। मेरा आत्मा तो इन पदार्थों से न घटता है, न बढ़ता है। सदा

आनन्द रूप है। यह सब आप की कृपा का फल है। जब आप पधारेंगे विस्तार पूर्वक कथन करूंगा। कल से चचा जी (पिता जी) यहां पधारे हुए हैं, सो मैं कल शनिवार को आप के चरण कमल स्पर्श नहीं कर सकूंगा। जो आप का मनशा (विचार) हो मुझे स्पष्ट लिख दिया करो।

आप का दास, तीर्थराम।

(१६१) शरीर से बाहर स्थिति।

११ जून १८६६

संबोधन पूर्वोक्त,

आप के दो कृपा पत्र मिले, बड़ा आनन्द हुआ। चाचा जी (पिता जी) क्रुद्ध नहीं हुए। और होते क्योंकर? मैं तो शरीर से बाहर स्थिति रखता था। परन्तु पचास रुपये जो मेरे पास बचे थे, वह उन की सेवा में भेंट किये गये। अब मैं उधार लेकर काम चला रहा हूं। और आनन्द हूं... ...

जगद्गुरू स्वामी शंकराचार्य जी† मुझे अपने साथ एक दिन के लिये जम्मू लेजाना चाहते हैं। उन को जम्मू के राजा ने बुलाभेजा है। उन का प्रस्थान कल शुक्र

---

† जगद्गुरू श्रीस्वामी शंकराचार्य जी से अभिप्राय द्वारका मठ (शारदापीठ) के परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीस्वामी राज राजेश्वर तीर्थ जी है जो उन दिनों देशाटन करते २ लाहौर में पधारे थे और जिन के सिंहासन के इर्द गिर्द दिन में भी दो दीपक मशाला जलते थे। इन ही से गुसांई जी को संन्यास धारण करने की आज्ञा इन शब्दों से मिली थी कि "जब तुम पूरे उन्मत्त (मस्त) हो जाओ तो स्वयं विद्वत्संन्यास ले लेना"। जिस आज्ञानुसार गुसाईं जी ने इस अवस्था को प्राप्त होते ही टेहिरी के समीप गंगा तट पर संन्यासाश्रम ले लिया और उन को अपना परम गुरु मान कर अपने नाम के पीछे तीर्थ संज्ञा लगाई। जिस से रामतीर्थ नाम प्रसिद्ध हुआ॥

वार सायंकाल को यहां से होगा। परसों शनिवार को वहां रेल के रास्ते से पहुंच जायेंगे। उन के साथ राजा हरवंश सिंह जी का वज़ीर (सचिव), पं० दीनदयाल जी और लाहौर के कुछ धनाढ्य पुरुष होंगे। मुझे भी ले जाना चाहते हैं, केवल महाराजा जम्मू से मेल कराने के लिये। मैं ने अभी कोई पक्का संकल्प नहीं किया। जैसे आप की अन्दर (भीतर) से आज्ञा होगी, वैसा किया जायगा। मैं आप का एक दीन सेवक हूं। यदि आप को परिश्रम न हो तो आप ने भी गुजरां-वाले रेल्वे स्टेशन पर पधारना। यदि मैं (उन के साथ) हुआ, तो आप ने भी जम्मू चले चलना।

आप का दास, तीर्थराम।

(१६२) जगद्गुरु शंकराचार्यजी की आज्ञानुसार गुसाईं जी का जम्मू जाना।

लाहौर,
१३ जून १८६६

संबोधन पूर्वोक्त,

महाराज जी! मैं कल स्वामी जी के साथ जम्मू नहीं गया। क्योंकि आज छुट्टी नहीं थी। पर आज वहां पहुंच जाने का वचन (इक़रार) है, कल आदित्यवार की रात्रि को यहां वापस आ जाना होगा। रात की गाड़ी में आना जाना होगा। सियालकोट भी शायद कुछ घंटे ठहरूं। महाराज जी मैं चाहे क्या करूं, मेरा चित्त आप ही के चरणों में है। जगत् गुरु जी के साथ पं० भानुदत्त, पं० गणपति, पं० दीनदयाल, अमृतसर के पांच बड़े प्रसिद्ध पंडित और लाहौर के कुछ धनाढ्य पुरुष गए हुए हैं। आप ने इस दीन और सदा

अपराधी सेवक के अवगुणों को क्षमा करना और कृपा दृष्टि रखनी।

आप का दास,
तीर्थराम।

(१६३) हरदिल अज़ीज़ी [सब से प्रेम]

१६ जून १८६६

संबोधन पूर्वांक्,

मैं कल आदित्यवार प्रातः काल की गाड़ी से जम्मू गया था। और कल रात की गाड़ी से लाहौर आगया था। जो आज सोमवार प्रातःकाल लाहौर पहुंची। स्टेशन से सीधा कालेज पढ़ाने चला गया था। सियालकोट के लोग रात को स्टेशन पर मिलने के लिये आ गये थे। पचास से अधिक मनुष्य थे। सब बड़े प्रेम से मिले, जम्मू में भी मिलाप हुआ। वहां लोगों का बृहत समूह (मिलने के लिये आया हुआ) था। महात्मा निरञ्जन दास भी मिले, अमृतसर के पंडित गिरधारी लाल शास्त्री और पं० मोहन लाल जी बड़े प्रेमी हैं। आप शीघ्र पधारें।

आप का दास तीर्थराम।

(१६४) मिशिन कालेज में व्याख्यान।

२० जून १८६६

संबोधन पूर्वांक्,

मेरा आज मिशिन कालेज में व्याख्यान* हुआ था। लोग

*यह व्याख्यान अंग्रेजी में था जिस का विषय "गणित शास्त्र, उस की आवश्यकता और उस में उन्नति पाने का उपाय" (Mathematics; Its importance and the way *to excel* in it) था यह तत्पश्चात् पुस्ताकार छप गया था और अब भी श्री रामतीर्थ पब्लिकेशन लीग लखनऊ से पुस्ताकार में संक्षिप्त जीवनी सहित ।॥।) को मिलता है।

बड़े खुश हुए थे। और मिशिन कालेज के प्रिन्सिपल साहिब ने उसके छपवा देने की प्रेरणा (फ़ेहमायश) की थी। मैं शायद कल जम्मू जाऊं पर निश्चय से नहीं कह सकता। परसों छुट्टी है॥

आप का दास,तीर्थराम।

(१६५) गुरुजी के लिये बोटी बोटी भी काटी जाय तो आनन्द है।

४ जुलाई १८९९

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं आज तक कुछ भेंट नहीं करसका, क्षमा कीजियेगा। जब देर (विलम्ब) का कारण मालूम होगा, तो आप चित्त में कोई आशंका (अथवा भ्रम) नहीं रखेंगे। आप दीन सेवक पर रुष्ट मत हुआ करें। इस दास की यदि बोटी २ (मांस का खंड २) काटने की भी आज्ञा दी जाये, तो पूर्ण आनन्द माना जाता है और बड़ी कृपा समझी जाती है।

आप का दास, तीर्थराम।

(१६६) व्याख्यान पर पंडित जनों का विस्मित होना।

२० जुलाई १८९९

संबोधन पूर्वोक्त,

यहां कल मेरा एक व्याख्यान हुआ था। पं० दीनदयाल, पं० गोपीनाथ और सर्व श्रोतागण आप की कृपा से नितान्त विस्मित हो गये। आप की दया से सारे बड़ी कृपा करते हैं। आप दास पर कृपा दृष्टि रक्खा करें।

आप का दास, तीर्थराम।

(१६७) मान में बोर्डिङ्गमें प्रीति भोजन ।

२६ जुलाई १८६६

संबोधन पूर्वोक्त,

आज विशेष प्रकार से इस सेवक को कालेज के आश्रमस्थों ने अपना प्रेम, भक्ति और उत्साह दर्शाने के लिये भोजनार्थ निमंत्रित किया था। उन्हें उपदेश भी हुआ था। वड़े प्रसन्न हुए थे। उन्हों ने बड़ी प्रीति और अनुराग (भक्ति) प्रकट किये। यह सव आप की कृपा है।

आप का दास, तीर्थराम।

(१६८) मथुरा में गमन ।

मथुरा

३ अगस्त १८६६

संबोधन पूर्वोक्त,

पंडित (दीनदयाल) साहिव के साथ मैं कल यहां (मथुरा) पहुंच गया। भिवानी से यहां तक छब्बीस (२६) घंटे में आये। नगर अति सुन्दर है। और विशेष करके मंदिर तो अति अद्भुत और रमणीय हैं। दो तीन दिन तक वृंन्दावन जावेंगे। वहां का पता इदानीं काल में नारायण स्वामी जी का आश्रम है। भ्रमण करने को यहां अच्छा अवसर मिलता है। वर्षा इधर वहुत है। दूध का वही मुल्य है जो लाहौर में।

आप का दास, तीर्थराम।

(१६९) व्रज की यात्रा ।

वृन्दावन

६ अगस्त १८६६

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र मिला, अत्यन्त आनन्द हुआ। आज

हम वृज की यात्रा को चले हैं। तीन चार दिन लगेंगे। गोवर्धन बरसाना, नन्दग्राम, गोकुल, बल्दाऊ यह स्थान देखेंगे। आशा है कि मास सितम्बर में आप के चरण कमलों में उपस्थित हो जाऊंगा। आप ने तो पत्र पूर्व पते पर ही लिखना। तीन महात्माओं के दर्शन हुए। पताः—श्री वृंदावन धाम, केशी घाट, नारायण स्वामी जी के द्वारा तीर्थराम को मिले। पंडित (दीनदयाल) जी की ओर से जय श्री कृष्णचंद्र महाराज की।

आप का दीन सेवक, तीर्थराम।

(२००) व्रज यात्रा से वापसी।

वृंदावन धाम
१६ अगस्त १८९६

संबोधन पूर्वोक्त,

हम सब कल व्रज की यात्रा से वापस आये। अब कोई दो सप्ताह से थोड़े दिन यहां रहने की आशा है। बहुत भ्रमण किया और चक्कर लगाया। यह भूमि प्रत्येक प्रकार से परिक्रमा के योग्य है। आप दया रक्खा करें। पंडित जी का नमस्कार।

आप का दास, तीर्थराम।

(२०१) वृन्दावन से वापसी।

मथुरा
२४ अगस्त १८९६

संबोधन पूर्वोक्त,

अब हम वृंदावन से चलकर मथुरा आये हैं। दो तीन दिन यहां रह कर दिल्ली जायेंगे। वृंदावन में व्याख्यान हुए, यहां भी होंगे। दिल्ली (देहली) से शायद मैं भी पंडित जी

के साथ शिमले जाऊं, पर पक्के निश्चय से कुछ नहीं कह सकता। सर्व प्रकार से दो सप्ताह तक लाहौर पहुँच जाने की आशा है।

आप का दास, तीर्थराम।

(२०२) मथुरा में व्याख्यान।

३० अगस्त १८६६

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का एक कृपा पत्र मिला, अत्यन्त आनन्द हुआ। मेरा अपना चित्त भी अति शीघ्र आप के चरणों में उपस्थित होने को चाहता है। परन्तु अब शिमले में जन्माष्टमी के दिन वार्षिक उत्सव है। पंडित जी ने मेरे वहां आने की भी शिमला निवासियों को सूचना भेज दी हुई है। और उन्हों ने वहां विज्ञापन इत्यादि में मेरा नाम भी छपवा रक्खा है। और आज पंडित जी मुझे वहां लेजाना चाहते हैं। येनकेन रीति से वहां (शिमला) से नौ दस (६, १०) दिन तक लाहौर पहुंच जाने की पूर्ण आशा है। चित्त आप के चरणों में रहता है। कल मेरा यहां अंग्रेज़ी भाषा में व्याख्यान हुआ था। आज पंडित जी का है। नगर के सारे धनाढ्य और सभ्य पुरुष भी सुनने आये थे। आप दया रक्खा करें। पंडित जी की ओर से जय श्री कृष्ण चन्द्र जी की। शिमले का पता यह है। "नगर शिमला, पास बाबू नानक चंद साहिब प्रेज़ीडेंट (सभापति) सनातन धर्म सभा के पहुंचकर गुसाईं तीर्थराम को मिले"।

आप का दास, तीर्थ राम।

(२०३) अतिथियों की अधिकता और उधार लेकर काम चलाना।

६ नवम्बर १८९६

संबोधन पूर्वोक्त,

यहां पं० रामधन* और एक अन्य पुरुष आये हुए थे। आज प्रातः काल की गाड़ी से चले गये हैं। किसी कार्य निमित आये थे। आप कब पधारेंगे?

यहां बहुत अतिथि आते हैं। मुराली वाला (जन्म भूमि) के दो और मनुष्य इस समय आये हैं। कम से कम तीन रुपये प्रति दिन खर्च हो जाते हैं। ऋण (उधार) उठा रहा हूं।

आप का दास, तीर्थ राम।

सन् १८९७ ईस्वी

अब गुसाईं तीर्थ राम जी की आयु लगभग साढ़े तेईस (२३½) वर्ष के थी।

(२०४) धन की तंगी और संबंधियों का क्रोध।

६ जनवरी १८९७

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं कल आप की सेवा में अठाईस (२८) रुपये भेजूंगा। आधे चाचा जी (पिता जी) को दे देने। उन को लिख चुका हूं। इस मास मेरे पास केवल तीन रुपये बचे हैं। और सारे मास का खर्च अभी सिर पर है। न आटा ही है,

*प० रामधन उन दिनों जम्मू रियासत में सैटलमेंट आफिसर थे।

और न अन्य कुछ घी के अतिरिक्त। इस बार ऋण (उधार) की एक कौड़ी भी नहीं वापस दी। और किसी विद्यार्थी को भी किञ्चित् सहायता नहीं दी। तिसपर भी सब रुष्ट हैं। और उलाहा पर उलाहा (उपालम्भ) दे रहे हैं। इस समय मेरे पास कोई भोजन बनाने वाला मनुष्य (रसोइया) नहीं है। तंग हूं।

आप का दास, तीर्थराम।

(२०५) स्वरूप में स्थित होने से आनन्द।

२२ फरवरी १८९७

संबोधन पूर्वोक्त,

जब अवकाश मिलता है, वेदान्त के ग्रन्थ अंग्रेज़ी में देखता हूं। और छुट्टी के दिन चित्त एकाग्र करने का भी अधिक समय मिलता है। आनन्द केवल अपने स्वरूप में स्थित होने में है। और अधिकार (इख़तियार) भी समस्त जगत् पर अपना ही है। व्यर्थ हम अपने आप को औरों के अधीन मान लेते हैं। आप दास पर दया रक्खा करें।

आप का दास, तीर्थ राम।

(२०६) श्लेष्म से शरीर तंग, पर पारमार्थिक ग्रन्थों से आनन्द।

११ मार्च १८९७

संबोधन पूर्वोक्त,

आप की कृपा से अत्यन्त आनन्द रहता है। श्लेष्म (ज़ुकाम) ने शरीर को कुछ तंग कर रक्खा है। परन्तु पारमार्थिक ग्रन्थ देखने और अन्य काम से चित्त प्रसन्न रहता है। आप दया रक्खा करें।

आप का दास, तीर्थ राम।

(२०७) चित्त की स्थिरता ।

१३ मार्च १८९७

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र आज मिला। अत्यन्त आनन्द हुआ। जिस समय आप ने कल लिखा था, मैं भी उस समय ठीक उसी अवस्था में था जिस में आप थे। और आप की ओर लिखने के लिये यह कार्ड उठाया था। परन्तु केवल सिरनामा लिख कर छोड़ रक्खा था। आप की दया से अब अत्यन्त आनन्द है। बड़े अच्छे भाग्य होने से चित्त स्थिर होना सीखता है।

आप का दास, तीर्थ राम।

(२०८) बी० ए० परीक्षा का खराब परिणाम।

१७ अप्रैल १८९७

संबोधन पूर्वोक्त,

मेरे पैर का छाला अब बहुत पीड़ा देता था। आज बी. ए. की परीक्षा का परिणाम निकला है, ऐसा बुरा परिणाम कभी

नोटः—भगत धन्ना राम जी का उन दिनों यह अभ्यास था कि जिस किसी से कोई काम कराना हो वह मनुष्य चाहे कितनी ही दूरी पर क्यों न हो, अपने आध्यात्मिक बल से वह उस मनुष्य से काम करा लिया करते थे। इस बार तीर्थराम जी से उन्हों ने वही विषय लिखवाना चाहा जो आप स्वयं लिख कर तीर्थराम जी को भेज रहे थे। और इस पत्र में तीर्थराम जी ने स्वयं माना भी है कि उन के भीतर भी वही विषय लिखने को फड़का है। यह दो चित्तों की अभेदता वा मिलाप का प्रत्यक्ष प्रमाण है और इस से स्वतः स्पष्ट हो रहा है कि दो मनुष्य हजारों मीलों की दूरी पर रहते हुए भी अपने चित्तों की अभेदता से बिना बाह्य तार बर्की के भी बातें कर सकते हैं।

नहीं निकला। सारे पंजाब में चौथा भाग भी विद्यार्थी उत्तीर्ण नहीं हुए। सब विषयों में बहुत फ़ेल (अनुत्तीर्ण) हुए हैं। मेरे शिष्यों में से एक तीसरा नम्बर रहा है और एक पांचवां रहा है। गणित शास्त्र में भी सारे कालेजों के बहुत विद्यार्थी फ़ेल हुए हैं। मेरे वेतन में वृद्धि इस वर्ष नहीं होगी। इतना तो परिश्रम किया और परिणाम यह निकला। चित्त अब बहुत उचाट (उपराम) हो रहा है। आप कब आयेंगे ?

आप का दास, तीर्थराम।

(२०६) विशेष वेदान्त चर्चा।

१८ अप्रैल १८९७

संबोधन पूर्वोक्त,

मैं आपकी कृपा से अपना समय व्यर्थ कामों में खर्च नहीं करता। और विशेष करके वेदान्त चर्चा ही होती है। भविष्य में आप की आज्ञानुसार अन्य प्रकार की बात चीत नितान्त त्यागने का यत्न करूंगा। आप दया रक्खा करें। चित्त आज कल उदास है।

आप का दास,तीर्थराम।

(२१०) एफ़० ए० परीक्षा का अच्छा परिणाम।

२८ अप्रैल १८९७

संबोधन पूर्वोक्त,

कल ऐफ. ए. की परीक्षा का परिणाम निकला है। समस्त कालेजों के विद्यार्थी आधे के लग भग उत्तीर्ण हुए हैं, मिशिन कालेज अच्छा रहा है। आप की कृपा से गणित शास्त्र में भी अच्छा रहा है। केवल पाच विद्यार्थी गणित शास्त्र में फेल हुए। वह भी साठ (६०) में से। छात्र वेतन भी चार मिशिन कालेज में आये हैं।

आप का दास, तीर्थराम।

(२११) वेद पाठ के श्रवण का फल।

२३ जून १८९७

संबोधन पूर्वांक,

आप का कृपा पत्र आज मिला, अत्यन्त आनन्द हुआ। वेदों का केवल पाठ मात्र सुनने से मेरे चित्त को समाधि की दशा प्राप्त हो जाया करती है। और अत्यन्त आनन्द की अवस्था आच्छादित होजाती है। यह अत्यन्त उत्तम कार्य है। ऐसे (वेदपाठी) † पुरुष की सहायता करनी उचित है।

आपका दास, तीर्थराम।

(२१२) हरिचरण* की पौड़ियों में निवास।

१ अगस्त १८९७

संबोधन पूर्वांक,

हम इस नवीन मकान में आगये हैं। यह हरिचरण की पौड़ियों (सोपान) में है। हरिचरणों में (तीर्थ) श्री गंगा जी का निवास है, और तीर्थ (राम) को भी हरिचरणों ही में रहना उचित है। यहां जब का आया हूं, हरिचरणों में ही ध्यान है। और अपने स्वरूप के श्री गंगा जल में आप की दया से स्नान कर रहा हूं।

आप का दास, तीर्थराम।

---

† दक्षिण देश का एक पंडित था जो केवल वेदपाठ ही करना जानता था और अर्थ से कोई बोध नहीं रखता था, और अत्यन्त मधुर स्वर से वह वेदपाठ करता था। उसकी प्रार्थना पर उसका पाठ रखवाया गया। और जो प्रभाव इस पाठ से गुसाईं जी के चित्त पर पड़ा, वह उन्हों ने वर्णन किया है। ऐसे पुरुष की सहायता के लिये गुसाईं जी अपने गुरु के पास लिखते हैं।

* लाहौर नगर में बछोवाली बाजार के समीप एक गली है जिसका नाम हरिचरण की पौड़िया है।

(२१३) वेदान्त विचार और भजन।

५ अगस्त १८६७

संबोधन पूर्वोक्त,

आप के दो कृपा पत्र मिले, अत्यन्त आनन्द हुआ। मैं छुट्टियों के अन्त में गणित शास्त्र की कोई पुस्तक लिखूँगा। आज कल तो वेदान्त विचार, भजन और एकान्त सेवन ही को कुल समय देता हूं। इस में वह आनन्द है कि छोड़ने को जी (चित्त) नहीं चाहता। आप की अत्यन्त दया है। लड़के वाले (बालक) सब भेज दिये हुए हैं। मैं अकेला हूं। थोड़े दिनों को शायद आप के चरणों में उपस्थित होऊं।

आप का दास, तीर्थराम।

(२१४) वेदान्त शास्त्र ही परम सत्य है।

६ अगस्त १८६७

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा-पत्र मिला, अत्यन्त आनन्द हुआ। वास्तव में किञ्चित् मात्र अभ्यास (अथवा मनन) करने से ठीक शास्त्रों के अनुसार फल प्राप्त होते हैं। संसार में यदि कोई वस्तु (अर्थात् शास्त्र) सत्य है तो वेदान्त शास्त्र है। बड़ी कृपा आप ने की है। धन्य है।

आप का दास, तीर्थराम।

(२१५) मनुष्य देह कब सफल है।

७ अगस्त १८६७

संबोधन पूर्वोक्त,

यदि व्यवहार काल में चलते फिरते और सब काम करते हमारी वृत्ति ब्रह्माकार रहे और चित्त इस उच्च अवस्था से

कभी नीचे न उतरे, तो धन्य है हमारा जीवन, नहीं तो मनुष्य देह निष्फल खो दिया।

आप का दास, तीर्थराम।

(२१६) वेदान्त के मनन से आनन्द।

११ अगस्त १८६७

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र कल मिला। अत्यन्त आनन्द हुआ। वेदान्त शास्त्र के विषय के अंग्रेज़ी में बहुत से ग्रन्थ पढ़ता हूं। परन्तु पढ़ने में वह आनन्द नहीं आता जो उन को एकान्त में बैठ कर विचारने और अपने भीतर धारण करने में आता है। जो कुछ इस प्रकार से आप की दया से प्राप्त होता है वह बहुधा जिज्ञासुओं को अंग्रेज़ी में उपदेश भी कर देता हूं। जी (चित्त) चाहता है कि इसी आनन्द में छुट्टियां व्यतीत करूं। ....

आप का दास, तीर्थराम।

(२१७) मौसा जी से स्वर्ण की घड़ी का उपहार।

३ सितम्बर १८६७

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का केवल एक कार्ड हांसी मिला था। और दूसरा फिर लाहौर आनकर। आप ने दास पर दया रखनी। शायद पुस्तक तो मैं लिख डालूं और लिखूंगा अवश्य, पर आजकल तो वेदान्त विचार और एकान्त सेवन पर दिल लगा हुआ है। हांसी के लोग आस्तिक थे। और कोई कोई वेदान्त को भी भले प्रकार समझते थे। भिवानी के लोग अधिक सत्संगी

थे। हिसार के लोग बहुधा आर्यसमाजी थे, पर प्रसन्न चित्त! मुझ से सब प्रीति करते थे। मासड़ (मौसा) जी ने मुझे एक स्वर्ण की घड़ी उपहार में दी है। आप के विषय सत्संगियों से बहुत कुछ कहा गया।

आप का दास,
तीर्थराम।

(२१८) वेदान्त अभ्यास से धारणा का बढ़ना और संकल्प सिद्धि की विधि।

८ सितम्बर १८९७

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र मिला, अत्यन्त आनन्द हुआ। मैं कोई पाँच छः दिन तक चरणों में उपस्थित हूंगा। मैं ने लाहौर में रहकर बीस से अधिक पुस्तकें अंग्रेज़ी में वेदान्त की देखीं और विचार पूर्वक पढ़ी हैं। इन पुस्तकों में उपनिषदों और अन्य प्रामाणिक ग्रन्थों के पृथक २ भाग दिये हुए थे। ग्रन्थों के सत्संग से धारणा बहुत बढ़ती है और वास्तविक आनन्द धारणा ही में है। स्फुरणा और संकल्प के रोकने से संकल्प सिद्धि होती है, जैसे बीज पृथिवी में दाबने से उगता है। आप का इस विषय में बहुत अनुभव है। माया और संसार से चित्त हट जाने (उपराम होने) से संसार सेवक बन जाता है, जैसे छाया की ओर पीठ करके सूर्य के सन्मुख जाने से छाया पीछे आती है। आप दास पर कृपा दृष्टि रक्खा करें।

आप का दास,
तीर्थराम।

(२१६) निर्भय पद की प्राप्ति ।

११ सितम्बर १८६७

संबोधन पूर्वोक्त,

आप की दया से आज कल तो निर्भय पद प्राप्त है, अर्थात् नितान्त निर्भयता। और सर्वदशा में आनन्द की अवस्था। आप की दया हुई तो मुराली वाला इत्यादि सब जगह यह दशा रहेगी।

आप का दास, तीर्थराम।

[२२०] आज कल का अभ्यास ।

१८ अक्टूबर १८६७

संबोधन पूर्वोक्त,

आज कल इस पर अभ्यास है।

'तमेवैकं जानथ आत्मानमन्या वाचो विमुञ्चथ अमृतस्यैप सेतु'

(मुंडकोपनिषद्)

एक मात्र आत्मा को जानो, इससे अतिरिक्त और कोई वार्ता कदापि मत करो। सुनो यही अमृत का सेतु (पुल) है।

*(२२१) अपने पिता को पत्र ।

२५ अक्टूबर १८६७

मेरे परम पूज्य पिता जी महाराज,

आप की कृपा मुझ पर नित्य रहे। चरण वन्दना। आप

* यह पत्र (२२१) गुसाईं जी ने अपने पिता जी को भेजा था। पर पिता जी ने इस के ऊपर निम्न लिखित शब्द लिख कर भगत धन्नाराम जी के पास भेज दियाः-"भगत जी ! आप की संगत से आज सारे कुटुंब को तिरस्कार मिला है। हम ने आप को बुद्धिमान् समझ कर इस को आप के सुपुर्द किया था, पर यह परिणाम निकला"। इस लिये यह पत्र भी भगत जी से ही मिला था और अब उन के पत्रों के साथ ही दिया गया है।

का कृपा पत्र मिला, अत्यन्त हर्ष प्राप्त हुआ। आप के पुत्र तीर्थराम का शरीर तो अब बिक गया। बिक गया राम के आगे। उस का अपना नहीं रहा। आज दीपमाला (दीवाली) को अपना शरीर हार दिया और महाराज को जीत लिया। आप को धन्यवाद हो। अब जिस वस्तु की आवश्यकता हो मेरे मालिक (स्वामी) से मांगो तत्काल वह स्वयं दे देंगे। या मुझ से भिजवादेंगे। पर एक बार निश्चय के साथ आप उन से मांगो तो सही। उन्नीस बीस (१६, २०) दिन के मेरे सारे काम बड़ी निपुणता से अब वह आप करने लग पड़े हैं, आप के क्यों न करेंगे। घबराना ठीक नहीं। जैसी आज्ञा होगी वैसा वर्ताव में आता जायगा। महाराज ही हम गुसाइयों का धन हैं। अपने निज के सच्चे और अमुल्य धन को त्याग कर संसार की झूठी कौड़ियों के पीछे पड़ना हम को उचित नहीं। और कौड़ियों के न मिलने पर शोक करना तो बहुत ही बुरा है। अपने वास्तविक धन और सम्पति का आनन्द एक बार ले तो देखो।

आप का दास,
तीर्थराम।

[२२२] जब अपना आप हो गये तो पत्र किस को?

६ नवम्बर १८९७

संबोधन पूर्वोक्त,

महाराज जी !......................यद्यपि मैं ने इतने दिन पत्र नहीं लिखा, परन्तु आप के स्वरूप में स्थित रहने के अतिरिक्त

और कोई काम भी नहीं किया। जब अपना आप होगये, तो पत्र किस को लिखें ?

आप का दास,
तीर्थराम।

(२२३) स्वरूप में स्थिति और संन्यासावस्था का आच्छादन होना।

६ दिसम्बर १८९७

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र मिला, अत्यन्त आनन्द हुआ। आप की अत्यन्त दया है। बहुत आनन्द है।

मैं तो आप कुछ नहीं करता। उचित समय पर सब काम अपने आप हो रहे हैं। किसी दिन मस्ती और संसार की ओर से बेहोशी (असावधानता) अथवा जड़ता स्वतः आजायें, तो मेरा क्या अपराध ? बिना किये काम हो रहे हैं। सूर्य और शेष नाग तो हमारे दास हैं। हमारा काम तो शेष-नाग की शय्या पर आराम (शयन) करना है। सूर्य को हम प्रकाशित करते हैं, और आज्ञाधीन बन कर वह चक्कर लगाता है। स्वरूप तो सब का एक ही है, पर स्वरूप में स्थिति की न्यूनता है। और तुर्यावस्था तथा समाधिकाल की कहां महिमा नहीं आई ? श्रीरामचन्द्र जी तथा श्रीकृष्ण-चन्द्र परमात्मा आप ऐसे महात्माओं के चरणों पर सिर (मस्तिक) रखते रहे हैं। और याज्ञवल्क्य तथा अष्टावक्र जी की पदवी राजा जनक से बढ़कर है।

राजा जनक और कृष्ण परमात्मा तो बी. ए. श्रेणि के हैं, और याज्ञवल्क्य तथा अष्टावक्र एम. ए. श्रेणि के। मान

(सत्कार) यद्यपि बी. ए. और एम. ए. का एक समान होता है, पर सच्चाई का छुपाना ठीक नहीं। जो बड़ा है उसी को बड़ा कहना ही उचित है।

दास के विषय में अभी कुछ काल तक कोई चिन्ता तथा भय नहीं करना चाहिये। मलाई वाला दूध और वह भी मिसरी से मिला हुआ तो एक ओर से पीने को मिलता है, और बाजरा वा ज्वार की रोटी दूसरी ओर से। मैं यह नहीं कहता कि बाजरा तथा ज्वार की रोटी बुरी है (क्योंकि वह भी तो मैं हूं) पर मेरे उदर के अनुसार नहीं। मेरे उदर में तो दूध मिसरी (सिताखंड) ही पचते हैं।

जब राजाधिराज के काम बिना हाथ पांव हिलाये हो रहे हैं, तो वह कर्मचारियों (मज़दूरों) के साथ मिल कर कर्म क्यों करे (टोकड़ी क्यों ढोये) ?।

बटलोही (बलटोही-देगची) में गरम जलाने वाले पानी में उबलने से बचने के लिये बटलोही से बाहर जा पड़ना ही उचित है, बटलोही के साथ लगे रहना उचित नहीं।

श्री शंकरा चार्य जी ने गीता भाष्य में अत्यन्त स्पष्ट रीति से सिद्ध कर दिखाया है कि अन्त में कर्म का नितान्त त्याग हो जाना चाहिये, यद्यपि आप उन दिनों वह बहुत कर्म करते ही थे। दास के लिये भी ऐसे दिन आने में अभी देर है॥

(१) *काश आनां कि ऐबे-मन जुस्तन्द।
रूयत ऐ दिलस्तां बदीदंदे।

(२) ईं खिर्क़ः कि मन दारम, दर रहने-शराब औला।
व ईं दफ़तरे-बे मानी गर्क़-मये-नाब औला॥

---

* (१) ईश्वर करे जिन्हों ने मेरे पाप (अपराध) देखे हैं, ऐ प्यारे! वह तेरा सुख देखें।

(२) यह कथा जो मैं रखता हूं निजानन्द रूपी मदिरा के बदले

अन्त के पद का तात्पर्य यह है कि:—"यह ग्रन्थ, पुस्तकें दफ़तर इत्यादि नितान्त व्यर्थ, निरर्थक और निष्फल हैं, यदि उनके पढ़ने से यह परिणाम नहीं निकलता कि हम उनको शुद्ध मस्ती की मदिरा (आसव) में ऐसा डाल दें कि वहां नितान्त गल सड़ कर क्षीण हो जायें। और उनका नाम तथा चिन्ह मात्र शेष न रहे, बल्कि मदिरा रूप हो जायें। मदिरा से अभिप्राय अद्वैतानुभव की मस्ती या नशा है। यह वस्त्र (अर्थात् गृहस्थ) शव का कफन (शव वस्त्र) हैं, यदि अन्त में इन को बेच कर (छोड़ कर) अनुभव रूपी मदिरा के रंग में हम रत्ते (रंगे) नहीं जाते। इति अलम विशेष आनन्द † ॥

आप का दास,
तीर्थराम।

(२२४) निजानन्द के कारण पढ़ा नहीं जाता।

६ दिसम्बर १८९७

संबोधन पूर्वोक्त,

आप की कृपा से सदा ही मस्ती (निजानन्द) की अवस्था अच्छादित रहती है। आज कल इस आनन्द के कारण पढ़ा भी नहीं जाता।

आप का दास,
तीर्थराम।

गिरवी (आधीकृत) है, और यह निरर्थक पुस्तकें उस आनन्द रूपी वास्तविक मदिरा में डूबी हुई है॥

† इस पत्र से अभिप्राय यह है कि ग्रहस्थ रूपी नरक का त्यागना ही उचित है, ग्रहस्थाश्रम में फंसे रहना उचित नहीं।

(२२५) गुसाईं जी की वैराग्य और त्याग की उमंगे ।

हरिचरण (की पौड़ी)
लवपुर (लाहौर)
१३ दिसम्बर १८६७

संबोधन पूर्वोक्त,

....

आप की दया से आनन्दस्वरूप के साथ संग बढ़ता जा रहा है । वाह धन्य हो ! इत्यलम, विशेष आनन्द ।

पहिला कार्ड लिख रहा था कि आप के तीन कार्ड और मिले । बहुत ही आनन्द हुआ । आप ने जो लिखा है, नितान्त ठीक और उचित लिखा है । जो आप की इच्छा है, वही होगा । करने कराने वाले सब आप हैं । वैराग्य की तरंगे जो यहां आती हैं आप की भेजी हुई हैं, और आप ही रोकते हो ? अद्भुत् लीला है । वाह क्या खूब खेल (मनोहर क्रीड़ा) है । वलहार !

सब के लिये संन्यास ठीक नहीं, और संन्यास का संसार में न होना भी उचित नहीं । प्रत्येक रंग (भांति) का पदार्थ संसार में बनाया हुआ है । क़िसी को हंसाना, क़िसी को रुलाना, और आप अलग खड़े होकर लीला देखना, यह हमारा काम है, जिस प्रकार कि आतशबाज़ अनार के मसालह (द्रव्य) को गरम २ आग से जलाता है और उस बिचारे मसालह से शूं २ रूपी हाय २ का शोर (शब्द) कराता है, पर आप सदा प्रसन्न रहता है,साक्षीरूप बन कर ।

कुछ फल पक कर भी वृक्ष के साथ लगे रहते हैं, पर कुछ फल पक कर गिर पड़ते हैं। इति विशेष आनन्द।

आप का दास, तीर्थराम।

(२१६) कुछ प्रश्नों का उत्तर।

१६ दिसम्बर १८६७

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र मिला, अत्यन्त आनन्द हुआ। आज कल कई पुरुष, जो मुझे मिलते हैं, आप के दर्शनों की इच्छा करते हैं। परसों मुझे ज्वर हो गया था, पर वह ज्वर भी अपना अनुभव होने के कारण अत्यन्त आनन्द दायक हुआ। श्लेष्म (जुकाम) भी अत्यन्त तीव्र वेग से हुआ था। पर बहुत शीघ्र अपने आप ही हार कर दूर होगया।

आज कल के काव्यों में से कुछ पद्य निम्न लिखित हैं इस प्रश्न के उत्तर में कि "आप की कैसी प्रकृति है, प्रसन्न हो?"

"*चः पुरसी हाले मन जानम कि जानम जान आरामस्त।
वतन खुद गोयदत मकबूज़े-रहो बदलो हिरमानस्त॥

भावार्थः—मेरे प्यारे अपना आप! तुम मुझे मेरी प्रकृति के विषय क्या पूछते हो, क्या तुम को पता नहीं कि मेरा आत्मा तो आनन्द की खानि है, पर शरीर विचारा सर्वदा बदलता रहता है और प्रति क्षण मृत्यु के समीप जा रहा है, और कदापि सुखी नहीं रह सकता।

---

*हे मेरे प्यारे! मेरी शारीरिक दशा को क्या पूछता है? मेरी आत्मा तो आनन्द की खानि है और मेरा शरीर तो तुझे स्वयं बतलाता है कि वह दुर्भाग्य के विकारों के पन्जे में ग्रसित है।

आत्मा के विषय में तुम्हारा प्रश्न नहीं बन सकता क्योंकि वह नित्य ही आनन्दघन है। और ऐसे ही किसी शरीर के विषय में भी तुम्हारा पूछना योग्य नहीं होसकता क्योंकि यह तो सदा ही महा दुःखी है। तो फिर दशा किस की पूछते हो?

संसार क्या है? इस के उत्तर में दृष्टान्त

वजे थे चार मुस्तक़विल जमां के।
अक़ीमाः के पिसर हर सू दवां थे॥
अजव मल मल सुरावों में नहाये।
जवीं पर रोज़ के तारे लगाये॥
व फिर सब ने की उन्क़ा पर सवारी।
ससी के सींग से की तीर वारी॥
अरे ओ आस्मां! यह नील दे जा।
हमारी कुमक को आता है हव्वा॥

भावार्थः-भविष्य कालके चार वजे थे। वंध्या (वांझ) स्त्री के बालक सर्व ओर दौड़ रहे थे। मृगतृष्णा के जलमें विचित्र रीति से मल २ कर स्नान किया था। भाल (माथे) पर दिन के समय के तारे लगाये, और फिर हुमा पक्षी (जो कदापि आकाश से पृथिवी पर उतरता नहीं है) की पीठ पर हमने सवारी की। और शशी के सींग से तीर चलाये। फिर आकाश को कहा कि ऐ आकाश! नीला रंग दे जा, नहीं तो तेरे मारने के लिये हमारी सहायता को हव्वा आता है। तात्पर्य यह कि जैसे यह सब पूर्वोक्त कथन असंभव, मिथ्या और कहने मात्र है, ऐसे ही यह संसार मिथ्या और कहने मात्र है।

लेखक, सेवक राम।

(२२७) गुरु जी से संपूर्ण अभेदता

२५ दिसम्बर १८९७

संबोधन पूर्वोक्त

रात के आठ बजने वाले हैं। व्यायाम कर चुका हूं। भीतर नितान्त शुद्ध है। और अत्यन्त आनन्द की अवस्था है। इस समय अत्यन्त प्रेम के साथ आप का स्मरण हुआ। आप धन्य हैं, जिन की कृपा से इस प्रकार आनन्द के समुद्र में स्नान होते हैं। आप पर बलिहार। संपूर्ण एकता (अभेदता) की दशा है। आप से इस समय एक बाल मात्र भी किसी बात में किञ्चित् भेद नहीं

मन तो शुदम, तो मन शुदी, मन तन शुदम तो जां शुदी।
ता कस न गोयद बादअज़ीं, मन दीगरम तो दीगरी॥

भावार्थः—मैं तू हुआ तू मैं हुआ, मैं देह हुआ तू प्राण हुआ।
अब कोई यह न कह सके! मैं और हूं तू और है॥

लेखक, आप स्वयं।

सन् १८९८ ईस्वी

(इस समय गुसाईं जी की आयु साढ़े चौबीस (२४॥) वर्ष के लगभग थी।)

(२२८) भ्रम से रोकने का यत्न।

हरिचरण (की पौड़ियां)
लवपुर (लाहौर)
१ जनवरी, १८९८

संबोधन पूर्वोक्त,

आप कृपा करके यहां शीघ्र पधारिये। यहां आने पर किसी प्रकार का विरोध नहीं रहेगा। मेरा और आप का

प्रत्येक वार्ता में अविरोध (एक मत) है। लोगों से कुछ सुन या ऊपर की किसी कारवाई से कोई परिणाम कदापि न निकाल लेना, जब तक कि सन्मुख बात चीत करने से आप यह न देख लोगे कि सेवक नितान्त आप से एकमत और एकचित है।

लेखक, राम।

(२२९) दोनों लोकों का क्षेत्र हमारे बाग़ का कोणा है।

२५ जनवरी १८९८

संबोधन पूर्वोक्त,

कृपा पत्र मिला आनन्द हुआ।

(१) हासले हर दो जहां खोशाए अज़ खरिमने-मास्त।
साहते-कौनो-मकान् गोशाए अज़ गुल्बुने-मास्त॥

(भावार्थः—दोनों लोकों की आमदनी (आयः) हमारे खिलवाड़े (धान्यकोष्ठ) का एक गुच्छा (सिट्टा) है, और दोनों लोकों का क्षेत्र (मैदान) हमारे बाग़ का एक कोणा है, अर्थात् हमारे स्वरूप के साक्षात्कार की अपेक्षा से यह सब कुछ भी नहीं)।

मेरा थोड़े दिनों का एक दोहा है।
हे मृग तेरी सुगन्ध सों भयो यह वन भरपूर।
कस्तूरी तो निकट है क्यों धावत है दूर॥

लेखक, राम।

(२३०) अद्वैत अमृत-वर्षणि सभा की स्थापना।

५ फरवरी १८९८

संबोधन पूर्वोक्त,

कल भेंट की जावेगी। यहां अद्वैत अमृतवर्षणि सभा

स्थापन की है जिस में विशेष करके साधु महात्मा ही प्रविष्ट हैं। इसके एकत्र होने का स्थान मेरा ही घर है, और प्रत्येक बृहस्पतिवार (गुरुवार) को संमेलन होता है (अर्थात् सभा लगती है), जिस में उपदेश इत्यादि भी होते हैं। पर केवल वेदान्त पर।

लेखक राम।

(२३१) एकान्त सेवन और अन्तर्मुख होनें का फल।

१५ फरवरी १८९८

संबोधन पूर्वोक्त,

इस में कुछ संदेह नहीं कि जो आनन्द एकान्त सेवन और अंतर्मुख होने में है, और कहीं नहीं। और क्रोड़ों (कोटिशः) अश्वमेध यज्ञ किये हुए हों तो नित्य स्वरूप में निष्ठा रहती है।

लेखक, राम।

(२३२) बाहर होली और भीतर समाधि।

८ मार्च १८९८

संबोधन पूर्वोक्त,

मिडिल परीक्षा का परिणाम कल निकल गया। मेरे मकान (स्थान) के समीप इस समय बड़ा रौला (शोर) होली के कारण पड़ा हुआ है। पर आप की कृपा से चित्त के भीतर (अथवा हृदय स्थान) में किसी प्रकार का शोर (शब्द) नहीं। आनन्द है। जिस प्रकार शिव जी के चारों ओर भूत प्रेत रौला और वावेला (शब्द और शोर) मचाते रहते हैं, पर वह आनन्द की समाधि में निर्विघ्न मग्न रहते

हैं, इसी प्रकार संसार के जीव अज्ञान की कालिमा और गुलाल मुखों पर मले अपने निज स्वरूप को छुपा कर नित्य शोर मचाते रहते हैं। तथापि शिव स्वरूप (अपने आप) में किसी क़दर निवास होने के कारण क्षीर समुद्र में रहने का सुख है।

अब आपके सेवक को ऐफ़.-ए के गणित-शास्त्र की वार्षिक परीक्षा का भी परीक्षक बनाया गया है। फ़ारसी और संस्कृत भाषा के विद्यार्थियों के लिये।

लेखक, राम।

(२३३) मिज़ाज पुरसी (प्रकृति संबन्धी प्रश्न) का उत्तर।

१६ मार्च १८६८

संबोधन पूर्वोक्त,

आप के दो कृपा पत्र मिले। अत्यन्त आनन्द का कारण हुए। एक राजा ने एक महात्मा से पूछा कि आप की प्रकृति कैसी है? उन्हों ने उत्तर दिया कि:—"जिस की इच्छा बिना एक पर्ण (पत्ता) न हिल सके, जिसकी आज्ञा सूर्य और चन्द्र मानें। जल और वायु जिसकी आज्ञा को एक क्षणमात्र के लिये न तोड़ सकें, जहां चाहे हर्ष भेज और जहां चाहे शोक भेज दे, और ऐ राजन्! जिसकी आज्ञा के बिना तेरे मुख के दाँत नहीं हिल सकते, और जिसकी इच्छानुसार राजाधिराजों की नाड़ियों में रुधिर चक्कर लगाता है, ऐसे सामर्थ्यवान (सर्व शक्तिवान्) के आनन्द का क्या ठिकाना (अन्त) है। हे राजन्! तू आप ही अनुमान कर ले।"

राजा बोला:—धन्य हो आप, ऐसा ही है। जिसका

अल्पज्ञ भाव उठ गया है, और जिस की जीव-बुद्धि नष्ट हो गयी है, और ब्रह्ममय हो गया है,वह प्रजापति स्वरूप (ब्रह्मा) हुआ समस्त जगत् के सारे काम कर रहा है। और उसकी सारी इच्छायें नित्य पूरी हो रही हैं। और आनन्द का समुद्र है।

"अहो अहं ! यस्य मे नास्ति किञ्चिन् ।
अथवा यस्य सर्वं यद्वाङ्‌ मनसि गोचरं ॥"

भगवान् शंकर कहते हैं:—वाह कैसा सुन्दर और आश्चर्य है मेरा अपना आप ! कि जिस मेरे अपने आप का जितना यह जगत् है (जो कुछ दृष्टि श्रवण और चिन्तन में आ सकता है), यह सब कुछ जिस मेरे अपने आप का है (परन्तु ऐसा होते हुए भी मेरे अपने आप का कुछ नहीं है), ऐसा जो मैं हूं उसके तईं मेरा बहुत २ नमस्कार और प्रणाम है"।

आज कल काम बहुत अधिक रहा। परीक्षाओं के निकट होने के कारण से। कालेज की परीक्षाओं के लिये भी प्रश्नपत्र बनाने थे। साथ इस के विद्यार्थियों के संकट भी निवारण करने हैं। किन्तु चित्त एकान्त में रहा।

लेखक राम

(२३४) लोगों का परिचय कम करना।

६ एप्रिल १८९८

संबोधन पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र मिला, अत्यन्त आनन्द हुआ। परीक्षा पत्र (पर्चे) बहुत हैं। परन्तु देखे अभी थोड़े हैं। विशेषतः सत्संग के कारण पर्चे (परीक्षापत्र) कम देखे जाते हैं। पर लोगों का परिचय मैं प्रति दिन कम कर रहा हूं। आप से

मिलने को जी (चित्त) चाहता है, वैसाखी (मेला) को एकत्र (अकट्ठ) कहीं जायें, तो अति उत्तम हो।

लेखक राम

(२३५) सब वेद वेदांग हमारे भीतर हैं।

१७ एप्रिल १८६८

संबोधन पूर्वोक्त,

*कटास की यात्रा ने जो उपदेश दिया, वह अत्यन्त ठीक है। जो सुख एकान्त सेवन और निजधाम में है, वह कहीं भी नहीं।

"हे मृग तेरी सुगंध सों भयो यह वन भरपूर।
कस्तूरी तो निकट है क्यों धावत है दूर॥"

अपना ही आनन्द जगत् के पदार्थों में आनन्द भावना कर दिखलाता है। सब वेद वेदांग हमारे भीतर ही हैं।

लेखक राम

(२३६) मिशिन कालेज के बी-ए वर्ग की वार्षिक परीक्षा का परिणाम।

२४ एप्रिल १८६८

संबोधन पूर्वोक्त,

आज बी-ए की परीक्षा का परिणाम निकला है। मिशिन कालेज के विद्यार्थी सब कालेजों से अधिक पास (उत्तीर्ण) हुए हैं। और मेरा एक विद्यार्थी पंजाब में तीसरा नम्बर रहा

---

* कटासराज एक तीर्थ का नाम है जो पिंडदादनखाँ नगर और क्योरा की निमक की खानि के समीप है। यहां प्रति वर्ष वैसाखी के दिन मेला लगता है और इस मेले में साधु महात्मा बहुत दूर २ से आकर एकत्र होते हैं।

है। और जो विद्यार्थी प्रथम रहा, वह एक वर्ष और आठ मास मेरे पास हमारे कालेज में पढ़ता रहा, पीछे किसी साहिब से लड़ कर आर्या-कालेज में जा प्रविष्ठ हुआ था। और जो विद्यार्थी द्वितीय रहा, वह भी मेरा परिचित (मित्र) गवर्णमेंट कालेज में पढ़ने वाला था। यह सब आप की कृपा है। दया रक्खा करें। गणित शास्त्र में इस वार तैस (२३) में से केवल तीन फेल (अनुत्तीर्ण) हुए हैं।

लेखक, राम

(२३७) एकान्त सेवन में अधिक आनन्द।

२६ एप्रिल १८६८

संबोधन पूर्वोक्त,

पिछले दो तीन दिन प्रकृति किञ्चित तंग (दुःखित) रही है। ऋतु कठिन (प्रतिकूल) है। आज कुछ कुशलता प्रतीत होती है। सर्व साधारण के संमलन (मेल मुलाकात) की अपेक्षा से एकान्त सेवन में अधिक आनन्द और सुख है।

लेखक, राम।

(२३८) तीक्ष्ण वस्तुओं का त्याग और ऐफ-ए की परीक्षा का परिणाम।

२६ एप्रिल १८६८

संबोधन पूर्वोक्त,

मुझे अब पहिले से कम श्लेष्म (रेशा) है। तीक्ष्ण वस्तुओं का सेवन आज कल नितान्त त्याग देना चाहिये। सर्व विकार इन से उत्पन्न होते हैं। इन से तृपा लगती है और अधिक जल तब बहुत हानिकारक होता है। ऐफ-ए की वार्षिक परीक्षा का परिणाम निकला है। मिशिन कालेज का विद्यार्थी पंजाब में प्रथम रहा है, और यहां के विद्यार्थी भी

अन्य सब कालेजों की अपेक्षा से अधिक पास (उत्तीर्ण) हुए हैं ।

लेखकराम

(२३६) चित्त अचल ।

२५ मई १८६८

उपमा पूर्वोक्त,

आप का कृपा पत्र (मिला), आनन्द हुआ । आप की दया से चित्त दिन प्रति दिन अचल होता जाता है । इस में किञ्चित् विक्षेप नहीं होता । मेरे शारीरिक व्यवहार से चित्त वृत्ति का अनुमान करना (अन्दाज़ा लगाना) ठीक नहीं । पिछले दिनों काम किञ्चित् विशेष रहा ।

(२४०) खरबूज़ा खाने का फल ।

३१ मई १८६८

संबोधन पूर्वोक्त,

आप की दया से बहुत आनन्द है । खरबूज़ा खाना मस्तिष्क (दिमाग़) को थोड़े काल के लिये अति लाभदायक प्रतीत होता है, परन्तु अन्त में अत्यन्त हानिकारक सिद्ध होता है । प्रकृति को तंग (दुःखित) रखता है और उदर को बिगाड़ताहै ॥

लेखक, राम ।

(२४१) गणित शास्त्र पर गुसाईं तीर्थराम जी का लेख* ।

१ जून १८६८

संबोधन पूर्वोक्त,

जो पुस्तक मैं ने बनाई है, उस की एक प्रति भी मेरे पास

* यह पुस्तक (नामः—How to excel in Mathenaties) पहिले

नहीं है। लाहौर के अनारकली बाज़ार में लाला रामकृष्ण एंड संन्स अंग्रेज़ी पुस्तक बेचने वाले की दुकान पर बिकती है।............पुस्तक का मूल्य चार आना है। पुस्तक पर सहित विज्ञापन की छपाई के एक सौ पच्चीस १२५) रु० खर्च आये हैं। एक सौ प्रति पुस्तक की मैं ने मुफत बांटी है। भारत वर्ष के अंग्रेज़ी गणितशास्त्री जनों ने अत्यन्त उत्तम समालोचनाएं इसकी प्रशंसा में दी हैं॥

लेखक, राम।

(२४२) घट में घट जाना।

हरिद्वार,
१४ अगस्त १८९८

संबोधन पूर्वोक्त,

आज † ठाकुरदास को लाहौर भेज दिया है। इतने दिनों में यहां के देखने योग्य (मुख्य २) स्थान देखे हैं। सन्तों के दर्शन किये हैं। अब आज (तृप्त होकर) अपने घर के द्वार बन्द करके अपने घट में घट जाने को जी (चित्त) चाहता है। महाराजा जम्मू की हवेली में ठहरा हुआ हूं। मेरे रहने का स्थान (कमरा) हरिद्वार में सब से उत्तम है॥

लेखक, राम।

अंग्रेजी विभाग चौथा (Vol IV. English Complet works of Rama) में छपवाई गई थी, अब अलग पुस्तकाकार प्रकाशित की गई है।

† यह ठाकुरदास गुजरांवाले का विद्यार्थी था। मिशन कालेज लाहौर में गुसाईं तीर्थराम जी के पास पढता था। निर्धन होनेके कारण गुसाईं जी ने इस की फीस भी कालेज कमेटी से आधी मुआफ करवा दी थी। इसका छोटा भाई इसका हम जमाअत (सहपाठी) था, उसकी फीस

(२४३) घर आने की प्रार्थना पर उत्तर।

हृषीकेश समीपस्थ तपोवन,
२३ अगस्त १८६८

संबोधन पूर्वोक्त,

एक कृपा पत्र मिला, जिस में घर आने के लिये प्रेरणा थी। इस पत्र को लेकर मैं ने तत्काल परमधाम को भेज दिया, अर्थात् श्री गंगा जी में प्रवाह दिया। यदि कोई कुटुम्ब (गृहस्थ) संबन्धी शोक के विषय में पूछो तो आप की अत्यन्त कृपा है।

> अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्त मध्यानि भारत।
> अव्यक्त निधनान्येव तत्र का परिदेवना॥

अर्थः—इन पदार्थों के आदि और अन्त का पता नहीं। केवल मध्य २ पता है,ऐसी अवस्था में शोक किस काम का? रहा लोगों के गिले उलाहने (उपालम्भ), उन के विषय में यह प्रार्थना हैः—

> कफन बांधे हुए सिर पर तिरे कूचे में आ बैठे।
> हज़ारों ताने अब हम पर लगा ले जिस का जी चाहे॥

भावार्थः—ऐ प्यारे! तेरे द्वार पर शव वस्त्र सिर पर ओढ़े हुए हम बैठे हैं (तेरे निमित्त मरने के लिये उद्यत हैं)। अब हमें कोई चिन्ता नहीं, जिस का चित्त चाहे, अनन्त उपालम्भ लगाये।

भी आधी मुआफ करवा रक्खी थी। इस लिये यह दोनों प्रतिदिन गुसाईं जी के पास आ या जाया करते थे। इस बार गुसाईं जी ठाकुरदास को हरिद्वार अपने साथ ले गये। इन का घर गुजरांवाले में भगत धन्ना-राम जी के घर के पास है। आज कल यह प्यारे गुजरांवाले खालसा स्कूल में हेडमास्टर हैं।

हे भगवन्! आप ही की आज्ञा पालन कर रहा हूं। अपने घर (निज धाम) को जा रहा हूं। आप के वास्तविक स्वरूप से मिल रहा हूं। पंजाब जो पाँच नदियों (रक्त, वीर्य, मूत्र, स्वेद, राल,) से मिल कर बना हुआ हमारा शरीर है, इस के अध्यास को त्याग कर ही अपने वास्तविक धाम (हरिद्वार) की प्राप्ति होती है।

इस समय रात के दस बज चुके हैं। न मनुष्य है, न मनुष्यत्व का चिन्ह है, अन्दर से अनाहद (अनाहत) की घंघोर है और बाहर से श्रीगंगा जी ने अनाहत की गर्ज लगा रक्खी है। भीतर से शांन्ति है और बाहर से आनन्द है। यार (अपने स्वरूप) से मिलने वाली अन्धेरी रात ने जगत् के नाम रूप पर कालिमा फेर रक्खी है अर्थात् जगत् को बाहर और भीतर दोनों ओर से शुन्य कर दिया हुआ है। इस अन्धेरी रात्रि में क्या भीतर क्या बाहर? सन्मुख उछलते हुए अमृत के दरया (नदियें) बह रहे हैं। ऐसे समय पर जगत् (संसार) का स्मरण कराना? हाय शोक!

"ऐ स्कन्दर! न रही तेरी भी आलमगीरी।
कितने दिन आप जीया जिस लिये दारा मारा॥

भावार्थः—ऐ बादशाह स्कन्दर! तेरी भी विश्वजित् अन्त में न रही, यह बता कितने दिन आप जीया जिस क्षणभंगुर जीवन निमित्त तू ने अपना भ्राता दारा मारा।

चिः निस्वत खाक रा व आलिमे-पाक।

भावार्थः—पर आप जैसे शुद्धात्मा महापुरुष की उस विषयगामी तथा देहाभ्यासी सकन्दर से भला क्या तुलना।

घर वालों को कह दो कि मिलना अब केन्द्र पर ही उचित

है, जहां पर मिलने से फिर जुदाई (पृथकत्व) न हो।

स्फुरत्स्फारज्योत्स्ना धवलिततले क्वापि पुलिने
सुखासीनाः शान्त ध्वनिषु रजनीषु द्युसरितः
(भर्तृहरि वैराग्य शतक)

[भावार्थः—जहां पर उज्ज्वल और विस्तारित चान्दनी के सदृश जल है, ऐसे गंगा तट पर आराम से (सुख पूर्वक) बैठा रहूं। जब सारे शब्द (अथवा ध्वनियें) बंद हों, तब रात्रि में शिव शिव शिव (प्रणवरूप) हृदय वेदक ध्वनि द्वारा सांसारिक दुःख और शोक से मुक्त होकर आनन्दाश्रुओं से नेत्रों का होना सफल करूं। ऐसे मेरे दिन कब आयेंगे ?]

. राजा लोग, राज पाट का त्याग करके, ऐसे आनन्द की इच्छा करते थे। देवतागण स्वर्ग, वैकुण्ठ का ध्यान छोड़कर इस गंगा तीर की कामना रखते थे। तो मेरी ही भला प्रारब्ध क्या फूट गयी जो इस प्राप्त भेय आनन्द को छोड़ कर झूठे पदार्थों के पीछे दौड़ूं ?

लोग तीर्थों पर आया करते हैं। तीर्थ कभी लोगों के पास चल कर नहीं जाते। घर वालों को कह दो कि तीर्थ में रमण करने वाला जो तीर्थराम परमात्मा है, उसके चरणों में चलें, तब तीर्थराम गुसाईं का मिलाप हो सकता है। नहीं तो नहीं। जब तक हमारे घर में सत्संग रूपी गंगा न बहेगी, मेरा वहां चित्त नहीं लगेगा। एक पल भर नहीं ठैहर सकूंगा।

मरे हुओं को मिलने के लिये लोग उन को संदेशा भेज कर अपने पास नहीं बुला सकते। अलबत्त आप मर कर उन से मिल सकते हैं। हम तो मर चुके। जीते जी ही मर चुके। घर वाले हम को बुलाने का यत्न न करें। हम जैसे हो जायेंगे, तो तब मेल बहुत सुगमता से होसकता है।

मुरली वाला यदि मुरारी वाला होकर तीर्थ बन जाये, तो तीर्थों को रमणीक बनाने वाला तीर्थराम वहां आ सकता है। सत्वगुण की गंगा जहां न हो, हमारा वहां होना कठिन है।

जब सब ही ने अन्त में सूखे फूल (हड्डियां) बन कर गंगा में आना है, तो क्यों नहीं अपने हरे फूल की न्याईं शरीर को दान गंगा में आनन्द पूर्वक प्रवाह देते ? अथवा अपनी अस्थिओं को ईंधन बनाकर, मज्जा रूपी घृत डाल कर, प्राण रूपी वायु से ज्ञानाग्नि में स्वाहा कर देते ? और इस प्रकार नरमेध का पुण्य लेते ? ॥

यहां आठ पहर में केवल रात्रि को सन्तो के दर्शन के लिये कभी बाहर निकलना होता है। नहीं तो कोई आना जाना नहीं। और आठ दिन में केवल आदित्यवार को ब्राह्मणों और सन्यासियों की सभा में व्याख्यान देने के लिये जाना पड़ता है। और कहीं नहीं ॥

पाँच छे दिन हुए कोई सौ के लगभग महात्माओं का भोजन कराया था। अत्यन्त आनन्द हुआ। यहां सत्वगुण का प्रभाव था। इन दिनों बालमुकुन्द और ठाकुरदास दोनों को रवाना करदिया हुआ है।

आप का अपना आप,
तीर्थराम।

नोटः—गुसाईं तीर्थराम जी तीव्र वैराग्य वश हुए इस बार हरिद्वार, हृषीकेश और तपोवन एकान्त अभ्यास के लिये आये थे। उन के पिता जी ने कुछ पत्र इन को लिखे होंगे। जब उन के एक पत्र का भी उत्तर उन को न मिला, तो उन्हों ने भगत धन्नाराम जी को पत्र लिखने के लिये प्रार्थना की। जिस पर भगत जी ने अपनी ओर से बहुत युक्ति सहित विस्तार पूर्वक गुसाईं जी को वापस घर में शीघ्र आने के लिये लिखा जिस का यह पत्र उत्तर है। पर इस उत्तर के पश्चात् फिर

(२४२) क्या हम अकेले हैं ।

ब्रह्मपुरि, तपोवन
लक्ष्मण झूला के समीप,
३० अगस्त १८९८

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवा वशिष्यते ॥

अर्थः—पूर्ण वह (लोक) है, पूर्ण यह (लोक) है, पूर्ण से पूर्ण निकाल लिया जाय, पूर्ण का पूर्ण लिया जाय तो पूर्ण ही बाकी रह जाता है ।

क्या हम अकेले हैं ।

(१) तनहास्तम तनहास्तम दर वैहरो वर यक्तास्तम ।
जुज़ मन नबाशद हेच शै मन जास्तम मन मास्तम ॥

भावार्थः—(१) मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं, पृथिवी और समुद्र में भी अद्वितीय हूं । मेरे से अतिरिक्त अन्य कोई वस्तु नहीं है । मैं ही भूमि हूं, मैं ही जल हूं ।

कोई विद्यार्थी साथ नहीं, नौकर पास नहीं, ग्राम बहुत दूर है । मनुष्य का नाम काफ़ूर (कर्पूर वत् उड़ा हुआ) है । अरण्य है, सुन्सान् है; तारों भरी रात, आधी इधर, आधी उधर, पर क्या हम अकेले हैं ?

अकेली हमारी बला ! अभी वर्षा लौण्डी स्नान कराकर गयी है । हवा बांदी (दासी) चारों ओर दौड़ रही है । वह

गुसाईं जी की लेखनी ने भगत जी को पुनः उस पदवी तथा उपमा से नहीं संबोधन किया जो आज तक वह सन् १८८९ से करते आये थे। और जल्वा कोह सार नामी उर्दू पुस्तक में राम ने स्वयं अपनी लेखनी से इस उत्तर को और विस्तार देकर दिया है, वहां इसे पुनः देखो

किसी प्यारे ने वृक्षों में से आवाज़ दी "हाज़र जनाव" (अर्थात् सेवक उपस्थित है)। (प्रतीत होता है सिंह-नाद है अथवा हस्ती की गर्ज)। सैकड़ों नौकर हमारे झाड़ियों में दबे बैठे हैं, बिलों में शयन कर रहे हैं।

हम अकेले क्यों?

पर हां हम अकेले हैं। खादमवादम (नौकर चाकर) कोई अन्य नहीं हैं, हम ही हैं; यह वृक्ष नहीं हैं, हम ही हैं; पवन नहीं, हम ही हैं; गंगा कहां? हम हैं; यह चाँद नहीं, हम हैं; परमात्मा नहीं, हम हैं; प्रियवर कौन? हम हैं; मिलाप क्या? हम हैं। अरे "अकेले" का शब्द भी हम से दौड़ गया।

(२) ईं नारह-ओ-ईं नारह ज़नो नीज़ ईं सहरा।
अशजारो कोहस्तानो शबो रोज़ो नगारा॥
ईं मारो माशूक़ वसालो दमे-हिजरां।
बाद अञ्जमो गंगा जलो अवरो महे-तावां॥
काग़ज़ कलमत चशमत व मज़मून व तो ख़ुद जाँ।
ईं जुमलगी रामस्त मरा दां मरा दां॥

(२) यह गर्ज, यह गर्जनेवाला, और यह अरण्य. वृक्ष, पर्वत, रात, दिन, भ्रमरका (ज़ुल्फ, बाल) और प्यारा, मिलाप और विरह का समय, वायु, तारे, गंगाजल, बादल और चमकता हुआ चाँद, कागज़, लेखनी और मेरे नेत्र, विषय और ऐ प्यारे! तू स्वयं, यह सब के सब राम है, ऐसा मुझको समझ, ऐसा मुझको समझ।

हमारा पता पूछो तो यह है।

निशानम बेनिशां मे दाँ। मकानम दर क़ल्ब मे खाँ॥
जहां दर दीदहआम पिन्हाँ। मरा ओयन्द गुस्ताखाँ॥

भावार्थः—मेरा निशान बेनिशान समझ। मेरा स्थान अपने हृदय में देख। जगत् मेरी दृष्टि में छुपा है। मुझ को नशंग पुरुष (विरक्त जन) ढूँडते हैं।

क्या हम बेकार (निष्क्रिया) हैं।

मन का मानसरोवर अमृत से लबा लब (भरपूर) हो रहा है, और आनन्द की नदी हृदय में से बेह रही है। प्रत्येक रोम कृत-कृत्य है। विष्णु के भीतर सत्वगुण इतना भरपूर हुआ कि समा न सका। उस सत्वगुण के स्रोवर (धारा) से चरणों द्वारा गंगा-जल बन कर सत्वगुण बह निकला। ठीक उसी प्रकार से इस समय

नारा (जल या सत्वगुण) में शयन करने वाला=नारायण

तीर्थ (जल रूप-सत्वगुणों) में
रमण करनेवाला
या तीर्थों को रमणीय
(शोभावाला) बनानेवाला } =तीर्थराम नारायण

सत्वगुण या आनन्द से भरपूर हो रहा है। उस का ब्रह्मानंद समेटे से समिटता नहीं। परमानन्द की सरिता या स्रोत बन कर यह तीर्थराम साक्षात् विष्णु, पूर्णानन्द की धारा जगत् को कृतार्थ करने के लिये भेज रहा है। प्रसन्नता और विश्रामता की विभातवायु संसार को भेज रहा है। कौन कहता है वह बेकार (निष्कर्मी) बैठा है ? मैं सच कहता हूं इस तीर्थराम के दर्शनों से कल्याण होता है, वह गंगा है, वह तुर्या राम है, वह राम है।

धन्य भूमि धन्य काल देश वह।
धन्य माता, धन्य कुल, धन्य समधी।
धन्य धन्य लोचन करहें दरस जो।
राम तिहारो सर्वत्र समधी॥

मेरी ।

बाँकी अदायें देखो ! चँद का सा मुखड़ा पेखो (टेक)
वायु में, बहते जल में, बादल में मेरी लटकें ।
तारों में, नाज़नीं में, मोरों में मेरी मटकें ॥ (टेक)
चलना ठुमक ठुमक कर, बालक का रूप धर कर ।
घाँघट अधर उलट कर, हंसना यह बिजली बन कर ।
शबनम गुल और सूर्य, चाकर हैं तेरे पद के ।
यह आन बान सज धज, पे राम ! तेरे सदक़े ॥ (टेक)

जगत् सारा वार डारूं, राम तेरे नाम पर।
इन्द्र ब्रह्मा वार डारूं, राम ! तेरे धाम पर ॥

मैं कैसा सुंदर हूं ! मेरी सोहनी (सुन्दर) सूरत, मेरी मोहनी मूर्त, मेरी झलक, मेरी डलक, मेरा सौंदर्य, मेरी शोभा (कांति), इस को मेरी चक्षु से अतिरिक्त किसी की आँख देखने की ताव (शक्ति) साहस नहीं ला सकती ।

आज कल लछमण झूले से परे गंगा तट पर पर्वतों में निवास है । गंगा क्या है विराट भगवान् का हृदय । परमात्मा के हृदय या छाती पर परमात्मा का आत्मा बनकर विश्राम करता हूं ।

लेखक, राम

(२४५) मेरा अटल राज, बड़े बड़े प्रताप

हरिद्वार
१६ सितम्बर १८६८

ॐ

भिद्यते हृदय ग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वे संशयाः ।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे ॥

अर्थः—उस परम स्वरूप के दर्शन से हृदय की सब ग्रन्थियां खुल जाती हैं, सारे संशा दूर हो जाते हैं और सब कर्म नष्ट हो जाते हैं।

बाहर जिस ओर ध्यान करता हूं, प्रत्येक परमाणु से इस झंकारे की गूंज (गर्ज) उठती है। तत्वमसि (तू ही है, तू ही है)। अन्दर की ओर मुख करता हूं (अर्थात् ध्यान देता हूं) तो यह ढोल कुछ और सुनने नहीं देता। अहं ब्रह्मास्मि, अहं ब्राह्मास्मि। (मैं कहां हूं, क्या हूं), मेरे महलों में कौन, कब, क्या, इत्यादि चूं चरा (क्यों, कब) को पहुंच नहीं। मन को बन्दरों ने छीन लिया, बुद्धि गंगा में बह गयी। चित्त को चीलें (पक्षी) चाब गयीं। अहंकार मछलियों की भेंट हुआ। पापों को हवा उड़ा ले गयी। सारा संसार जीत लिया है। मेरा अटल राज, बड़े बड़े प्रताप।

नास्ति ब्रह्म सदानन्दमिति मे दुर्मतिः स्थिता।
क गता सा न जानामि यदाह तद्वपुः स्थितः॥

अर्थः—"मैं ब्रह्म नहीं हूं, ऐसी मेरी गधे (गर्दभ) की बुद्धि थी। मैं नहीं जानता कि वह बुद्धि अब कहां छुप गयी, किधर उड़ गयी, कहीं दृष्टि में नहीं आती।

चशमे लैला हूं दिले-कैस व दस्ते-फरहाद।
बोसा देना हो तो दे ले, है लबे-जाम मेरा॥

(अर्थः—लैला की चक्षु हूं। मजनु का दिल और फरहाद का हाथ हूं। मेरा ओष्ट समीप है यदि चूमना हो तो चूम ले।

लेखक, राम

(२४६) दुन्या नहीं, पार्वती है।

लाहौर
२८ सितम्बर १८९८

आ मेरे भंगिया ! तू आ भंग पी जा।
आ मेरे भंगिया ! निशंग भंग पी जा॥
भर २ देनीयां मैं भंग के प्याले।
निशंग भंग पी जा, निहंग भंग पी जा॥

प्रकृति (दुन्या) नहीं पार्वती है, भंग सर्वकाल घोट रही है। शिव की आँख खुली, प्याला झट हाज़र (तय्यार) हुआ। बल्कि: इस को भंग या मदिरा (शराब) कहना भी ठीक नहीं। यह तो शराब का नशा है, यह तो भंग की मस्ती है। आप को मेरी क़सम (शपथ), सच कहो इस मस्ती और आनन्द के विना जगत् तीन काल में कभी कुछ और भी हुआ है ? कदापि नहीं।

मैं यह नशा, यह मस्ती, शिव, भला क्या सोचूं क्या समझूं ? राम क्या सोचे समझे ?

(१) सोचना अविज्ञात वस्तु के लिये होता है, उसे सब विज्ञात है।

(२) सोचना अदृष्ट वस्तु के लिये होता है, उस के लिये सब दृष्ट है।

(३) सोचना किसी इष्ट प्राप्ति के निमित्त होता है, उस की समस्त इच्छायें सदा प्राप्त हैं। जिस को संसार में सोच समझ और बुद्धि कहते हैं, यही महान् मूर्खता है।

जित देखूं तित भरया जाम।
पी पी मस्ती आठों याम॥

नित्य तृप्त सुख सागर नाम।
गिरे बने हम तो आराम॥
देखा सुना खपाना काम।
तीन लोक में है विश्राम॥
क्या सोचे क्या समझे राम।
तीन काल जिस को निज धाम॥

महा वाक्य।

(१) घुंड कढ़ के क्यों चन्न मुँह उत्ते, ओहले रहों खलो? फकीरा! आपे अल्लाह हो।
(२) तेरे घट विच राम वसेंदा. क्यों पया भरना हैं तो? ,,
(३) राम रहीम सब वंदे तेरे, तैनूं किस दा भौ? ,,
(४) तू मौला नहीं वंदा चंदा, झूठ दी छड दे खो। ,,
(५) छड मौहरा सुन राम दोहाई, अपना आप न कोह ,,

राम

(२४७) राम का नाच।

१ अक्तूबर १८६८
अज़ लामकां
(स्थानातीत से)

लेखक श्री *धन्नाराम,।

मा रा नकुनेद यादे-हरगिज़। मा खुद हस्तेम याद बे मा॥

भावार्थः—मुझ को आप याद कदापि नहीं करते, अथवा न करें, हम स्वयं अपने अहंकार से रहित हुए याद स्वरूप हो गये हैं।

रो के जो इलतमास की, दिल से न भूल्यो कभी।
दुई मिटा, अहद बना, उसने भुला दिया कि यूं॥

---

* यह पत्र गुसाईं तीर्थराम जी ने अपने गुरु जी से ऐसा अभेद होकर लिखा है। कि अपने स्थान पर गुरु का नाम लेखक के रूप में लिख मारा है।

(भावार्थः—मैं ने प्रार्थना की कि मुझे चित्त से कदापि न न भूलिये। पर उत्तर में उस ने अपना द्वैत भाव मिटा दिया, और इस प्रकार से मुझे और परिच्छिन्न अपने आप दोनों को नितान्त भुला दिया)।

आज तो नाचने को चित्त चाहता है।

नाचूं मैं नट राज रे, नाचूं मैं महाराज (टेक)

(१) सूरज नाचूं, तारे नाचूं, नाचूं घन महताब रे।
(२) ज़र्रह नाचूं, समुद्र नाचूं, नाचूं मेघरा काज रे॥
(३) तन तेरे में †मन हो नाचूं, नाचूं नाड़ी नाद रे।
(४) बादर नाचूं, वायु नाचूं, नाचूं नदी अरु नाव रे॥
(५) गीत राग सब होवत हरदम, नाचूं पूरा साज़ रे।
(६) घर लागो रंग, रंग घर लागो, नाचूं पापा दाज रे॥
(७) मधुआ लब, बदमस्ती वाला, नाचूं पी पी आज रे।
(८) राम ही नाचत, राम ही वाचत, नाचूं हो निरलाज रे॥

(२४८) व्याधि रूपी भांडों का मुजरा (नाच)

लाहौर

६ नवम्बर १८६८

ॐ श्री

सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म, आनन्दामृत, शान्ति निकेतन
मंगल मय शिव रूपं, शुद्धमपाप विद्धं॥

हमारे शरीर रूपी महल में कुशलता रूपी कंचनी को अपना राग रंग सुनाते और तमाशा दिखाते बहुत काल हो गया था। अब ज्वर, उदर पीड़ा, श्वास रोग और खांसी रूपी भांडों के मुजरे (नाच) की बारी थी। सो उन्हों ने एक पूरा सप्ताह अपनी शोर गुल वाली (हू हा कार रूपी) नकलों

† मन के स्थान पर कहीं दम भी लिखा है।

से धूम मचाये रक्खी। कालेज का जाना बंद रहा, आज भाई गुरुदास और (ब) भी यह तमाशा देख कर मुरारी वाला को पधारे हैं।..................

(२४६) वास्तविक आनन्द अधिकतर है।

ॐ श्री

८ नवम्बर १८९८

संबोधन पूर्वोक्त,

शरीर में श्लेष्म अभी है। मिशिन कालेज की नौकरी में शायद कोई हल चल शीघ्र पड़ जाये। वास्तविक (भीतरी) आनन्द दिन प्रति दिन अधिकतर है।

मरे न टरे न जरे हरे तम,
परमानन्द सो पायो।
मंगल मोद भरयो घट भीतर,
गुरु श्रुति 'ब्रह्म त्वमेव' बतायो।
लय मुझ में सब गयो रह बाकी,
वासुदेव सोहं कर झाकी।
टूटी ग्रन्थी अविद्या नाशी,
ठाकुर सत्य राम अविनाशी।

राम।

(२५०) सूर्य में न रात है न दिन।

ॐ, ॐ ॐ

६ दिसम्बर १८९८

संबोधन पूर्वोक्त,

आनन्द, आनन्द, आनन्द, बहुत आनन्द है।

रात और दिन केवल पृथिवी ही के लिये हैं, सूर्य में न रात है न दिन है। वहां तो प्रकाश ही प्रकाश है। सुख, दुःख तृष्णा, और सन्तोष सांसारिक लोगों के लिये हैं, आप तो

परमानन्द घन हो। प्रकाश ही प्रकाश हो।

रामः—अहनिश का सूर्य में नाश।
अहं प्रकाश, प्रकाश, प्रकाश॥
अग्नि को ठंडक लगे, जल को लगे प्यास।
आनन्द घन मम राम से क्या आशा को आश॥
इकाई ज़ात में मेरी असंखों रंग हैं पैदा।
मज़े करता हूं मैं क्या क्या, अहाहाहा! अहाहाहा!!

राम।

(२५१) बिना कौड़ी राम बादशाह।

११ दिसम्बर १८९८

संबोधन पूर्वोक्त,

कृपा पत्र मिला। जिस में लिखा था कि "पता नहीं आप क्या ख्याल करते रहते हैं"। निश्चय जानो कि जिस तरह आप के गुजरां वाले शरीर को पता नहीं कि तीर्थराम क्या ख्याल करता रहता है, ठीक उसी तरह आप के लाहौर वाले शरीर को भी कुछ पता नहीं कि राम क्या ख्याल करता रहता है। राम में कोई ख्याल दृष्टि में नहीं आता, कोई ख्याल हो तो दिखाई दे। निःशंक स्वरूप और निर्मल चिदाकाश में ख्याल रूपी धूल कहां?

रामः—चिदाकाश निर्मल घन मांहि।
फुरना धूल कदाचित् नांहि॥

पत्र लिखने में विलम्ब का एक यह कारण है कि कोई कार्ड लिफाफा पास नहीं था। कोई पैसा इत्यादि भी पल्ले न था। आज एक पुस्तक में से तीन टिकट मिल गये,

और आप का उत्तर मांगता हुआ कार्ड सन्मुख पाया। पत्र लिखा गया है।

यही हाल खाने पीने के सम्बन्धी पदार्थों (आटा घृत इत्यादि) के विषय में रहता है। आज लैम्प में तेल नहीं है, इस लिये आज रात घर नहीं ठहरेंगे। नगर के चारों ओर सैर की जायगी। दोनों हाथों में लड्डू हैं।

पूर्वोक्त वृत्तान्त से यह न अनुमान कर लेना कि हाय! हाय!! राम बड़ा धनहीन और दुःखी रहता है, कदापि नहीं। इस बाह्य निर्धनता और तंगी के कारण से ही आत्यन्तिक (परले सिरे की) धनाढ्यता और बादशाही कर रहा है। यह पाठ पक गया है कि जब किसी अर्थ को सिद्ध करने के साधन उद्यत न हों तो उसकी आवश्यकता ही प्रतीत नहीं होती। (और वास्तव में जब साधन पास न हों तो आवश्यकता का प्रतीत होना केवल झूटी भूख है)। पहिले तो बड़ी चिन्ता के साथ आवश्यकताओं को पूरा करने का यत्न हुआ करता था। पर अब आवश्यकतायें बेचारी स्वयं पूरी होकर सन्मुख आजायें, तो उन पर दृष्टि पड़ जाती है, नहीं तो उन के भाग्य में राम का ध्यान कहां? प्रारब्ध कर्म और काल रूपी सेवकों को सौ बार आवश्यकता हो, तो आन कर राम बादशाह के चरण चूमें। नहीं तो उस शाहनशाह को क्या परवाह है इस बात की कि अमुक सेवक मुजरा कर गया है कि नहीं।

राम:—सौ बार गर्ज़ होवे तो धो २ पीयें क़दम।
क्यों चर्खो-मिहरो-माह पै मायल हुआ है तू॥
खंजर की क्या मजाल कि इक ज़खम कर सके।
तेरा ही है ख्याल कि घायल हुआ है तू॥

राम।

(२५२) ॐ

२५ दिसम्बर १८६८

संबोधन पूर्वोक्त,

छुट्टियों में अभी तक तो कहीं शरीर के जाने का विचार नहीं, कुछ पता भी नहीं।

तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके।

तदन्तरस्य सर्वस्य, तदुसर्वस्यास्य वाह्यतः ॥

भावार्थः— हम चल हैं, हम चल हैं नाहीं, हम नेड़े, हम दूर।

अन्दर सब के चानन हम ही, बाहर हैं हम नूर ॥

राम।

सन् १८९९ ईस्वी।

(इस समय गुसाईं तीर्थ राम जी की आयु लगभग २५½ वर्ष के थी)

(२५३) मिशिन कालेज का छोड़ना और ओरियंटल कालेज में नौकरी करना।

२२ जनवरी १८६६

संबोधन पूर्वोक्त,

आनन्द, आनन्द, आनन्द,

मिशिन कालेज में आज कल काम छोड़ दिया हुआ है। केवल एक घंटा अभी वहां काम किया जाता है। यह भी मास आधे तक छोड़ दिया जायगा। ओरियंटल कालेज में दो घंटा प्रति दिन काम आरम्भ कर दिया हुआ है।

राम।

(२५४) समुद्र में एक और नदी आन पड़ी।

२५ फरवरी १८६६

संबोधन पूर्वोक्त,

आप के एक पत्र से जो गाल्वन (प्रायः) सरदार (स) जी के हाथ का लिखा हुआ था विदित हुआ कि लड़का *(पुत्र) उत्पन्न हुआ है। समुद्र में एक नदी आन पड़े तो कुछ अधिकता नहीं हो जाती, और यदि नदी कोई न गिरे तो कुछ न्यूनता नहीं होजाती। सूर्य का जहां प्रकाश हो, वहां एक दीपक रक्खा गया तो क्या और न रक्खा गया तो क्या। जो यथावत् ठीक है वह स्वतः पड़ा होगा। किसी प्रकार का शोक तथा चिंता हम क्यों करें? यह शोक या चिन्ता करना ही अनुचित है। हम ज्ञानी नहीं, ज्ञान हैं। देह से संबन्ध ही कुछ नहीं। देह और उस के संबन्धी जानें और उन की प्रारब्ध जाने। हमें क्या?

मनो बुद्ध्यहंकार चित्तानि नाहंः।
न च श्रोत्र जिह्वे न च घ्राण नेत्रे।
न च व्योम भूमिर्न तेजो न वायुः।
चिदानन्द रूपः शिवोऽहं शिवोऽहं॥

अभिप्रायः—न मन हूं न बुद्धि न हूं चित्त अहंकार।
नहीं करण जिह्वा न चक्षु निराकार॥
न हूं पृथिवी अप तेज नाकाश इव हूं।
चिदानन्द हूं रूप शंकर हूं शिव हूं॥

राम।

* लड़के से अभिप्राय यहां गोस्वामी जी के दूसरे पुत्र गोस्वामी ब्रह्मानन्द जी से है जो आज कल बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय में एम.ए. क्लास में पढते हैं।

(२५५) गृहस्थियों की आवश्यकताओं से साधुओं की आवश्यकताओं की तुलना।

६ मार्च १८९९

संबोधन पूर्वोक्त,

सविनय प्रार्थना यह है कि यहां किसी प्रकार का अनुमान नहीं दौड़ाया गया। सत्तर से भी एक दो कम रुपये मास के मिले थे। उस में से कौड़ी तो संचय करनी नहीं। जो जो आवश्यकतायें दृष्टि में पड़ीं भुगत गयीं (पूर्ण की गयीं)। शेष अपेक्षाओं को साफ जवाब देना पड़ा (अर्थात् विना पूर्ण किये छोड़ना पड़ा)। केवल बारह रुपये घर भेजे गये, जहां आठ मनुष्य खाने वाले हैं। गृहस्थी स्त्रियों, बच्चों और बूढ़ों को अधिक आवश्यकता होती है साधुओं की अपेक्षा से कि जिन के लिये मधुकर की न्याईं अनेक पुष्पों (घरों) से माधूकारी (भिक्षा) लाना भूषण है; और गृहस्थी अत्यन्त अकिंचन (अथवा अपेक्षणीय) होते हैं। और जो हो रहा है वह अति उचित और ठीक हो रहा है।

राम।

(२५६) प्रारब्ध और काल हाथ जोड़े दास (नौकर) हैं।

१७ मार्च १८९९

संबोधन पूर्वोक्त,

विचारणीय विद्यार्थियों (Students under Consideration) के विषय में पूछना अभी उचित नहीं। कल परसों तक शायद सूचना दी जाये। प्रारब्ध और काल प्रत्येक

पुरुष के हाथ जोड़े दास (भृत्य) हैं। इस में संशय करना ही अज्ञान है।

आप का
राम।

(२५७) चेतन में फुरने (स्फुरण) का अभाव।

१७ मार्च १८६६

संबोधन पूर्वोक्त,

कूटस्थ चेतन या साक्षी चेतन में फुरने अथवा संकल्प का नाम मात्र भी नहीं। उस से गिर कर (अर्थात् उस अवस्था से उतर कर) ही मनुष्य के चित्त में फुरणा भासता है।

जैसा चित्त चाहे सरनामा (शिरोनाम) लिखो। सब मंगल मय, आनन्द रूप, शुद्ध स्वरूप ही है। मिल गया माल तो क्या परवाह, उतर गयी खाल तो क्या परवाह।

आप का
राम।

(२५८) महानन्द आप का स्वरूप है।

१८ जूलाई १८६६

श्री महाराज जी,

महात्मा तो आनन्द घन होते ही हैं। महानन्द आप का स्वरूप है। वहां चिन्ता और मलिनता का क्या काम ?

सूरज में अहर्निश का नाश।
अहं प्रकाश, प्रकाश,प्रकाश॥

कहूं क्या हाल इस दिल का कि शादी मौज मारे है।
है इक उमड़ा हुआ दरया, अहाहाहा-अहाहाहा॥

आप का राम।

(२५६) पत्र लिखना बन्द होने का कारण।

२२ नवम्बर १८६६

प्रीतम पत्तियां तब लिखूं जब तुम होवो विदेश।
तन में, मन में, नैन में, वाको क्या संदेश* ?

(२६०) राम सर्वत्र।

२६ नवम्बर १८६६

मनम खुदाय-बवांगे-बलन्द मे गोयम।
हरां कि परतौ दिहद मिहरो-माह रा ओयम॥

भावार्थः - 'मैं ब्रह्म हूं', यह गर्ज कर मैं कहता हूं। और जो इस सूर्य और चन्द्र को प्रकाश देता है, वह प्रकाश स्वरूप परमात्मा मैं हूं।

ईशावास्योपनिषद के मंत्र ८ में ज्ञानवान् की उपमा में वेद ऐसे कहता है :—

सपर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम्। कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथा तथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः। (ईश० उप० मं० ८)

भावार्थः—(१) है मुहीतो-मनज्जहो-बे अबदां।
रगो-पै है कहां, हमः वीं, हमः दां॥
(२) वह बरी है गुनाहों से रिंदे-ज़मां।
बदो नेक का उस में नहीं है निशां॥
(३) वह बजुर्गे-बजुर्गा है राहते-जां।
वह है बाला से बाला, व नूरे-जहां॥
(४) वहीं खुद है जनाँ व ब्रं ज़ बियां
दिये उस ने अज़ल में हैं रंगतो-शाँ॥

---

*इस पत्र में केवल यह पंक्ति ही लिखी हुई थी, इस से अतिरिक्त और कुछ नहीं।

(५) यही राम है दीदों में सब के निहां।
यही राम है बहर में बर में अयां॥

मन हमानं मन हमानं मन हमां।
हर कुजा चशमत फितद् जुज़ मन मदाँ॥
राम।

(२६१)※ १ दिसम्बर १८६६

बिगड़े तां जे होय कुछ बिगड़न वाली शय।
अकाल अछेद्य अशोष्य को कौन शख्स का भय॥

सन् १९०० ईस्वी
इस समय गुसाईं तीर्थराम जी की आयू लगभग
२६॥ वर्ष के थी)।

(२६२)※ ४ जनवरी १९००

ॐ नारायण,
ॐ आनन्द, ॐ आनन्द, ॐ आनन्द,
राम।

(२६३) आनन्द प्रेस का खुलना और मासिक पत्र अलिफ का प्रकाशित होना।

६ जनवरी १९०

नारायण,
आनन्द, आनन्द,
भगवन्, वेतन अभी नहीं मिला। जब मिलेगा, कुछ में

(नोट, नं० २६१ और २६२ में भी केवल यह दो पंक्तियें ही थी)।

की जायगी। *लोग यहां रात को उपनिषदें पढ़ने आया करते थे। उन्हों ने एक प्रेस (छापाखाना) खोला है, केवल इस नीयत (निश्चय) से कि जो कुछ यहां से पढ़ें, वह छपवादें। साथ इस के यह रिसाला (मासिक पत्र) बल्कि रसूल (अलफ नाम का) प्रकाशित किया गया है। आप की सेवा में तीन कापियां भेजी जाती हैं। एक आप के लिये, दो जिस २ को आप उचित समझें दे दें। विज्ञापन भी साथ भेजे गये हैं, सत्संगियों में बटवा देने। यह आप का अपना काम है। आनन्द, आनन्द।

बस कर जी हुन बस कर जी।
काई बात असां नाल हस कर जी॥

---

†सन् १६०६ ईस्वी।

(२६४) सितम्बर १६०६

(इस समय स्वामी राम तीर्थ जी की आयु लगभग ३२॥ वर्ष के थी)

पूर्ण सिंह जी के हाथ से भेजा हुआ पत्र

भे भेद ते भर्म दी माड़ियां ते।
हल वा सुहागड़ा फेर दित्ता॥

---

*नारायण और बाबू हरलाल डिस्ट्रेक्ट नाजर लाहौर दोनों गुसाईं तीर्थ राम जी के पास रात्रि को उपनिषदें पढने जाया करते थे। थोडे ही मास पढने के पश्चात् गुसाईं जी की आज्ञा पर आनन्द प्रेस खोला गया और उस में एक मासिक पत्र अलिफ नाम का प्रकाशित किया गया जिस समस्त कार्य का प्रबन्धकर्त्ता नारायण जी नियत हुए। इस पत्र के केवल ३ नम्बर निकाले जाने के पीछे गुसाईं जी वानप्रस्थाश्रम में प्रविष्ट हो गये। तद्पश्चात् इसी वर्ष के अन्त में सन्यासाश्रम धारण हुआ।

†गृहस्थाश्रम छोडने के पश्चात् अर्थात सन् १६०० के पीछे

फर्ज़ कर्ज़ ते ग़र्ज़ दे बेलड़े नूं।
अग्ग ला के शेर नूं घेर लित्ता॥

विना राम दे नाम भी होरदा सी।
सुरंग कढ पलीतड़ा गेर दित्ता॥

अज नूरदा शूकदा हड़ आया।
दसों दिशा आनन्द खलेर दित्ता॥

भावार्थः—द्वैत दृष्टि अथवा भाव को हम ने ज्ञानरूपी हल से नितान्त मिटा दिया है। सर्व प्रकार के ऋणों की नौका को ज्ञानाग्नि से जला दिया है, और उस नौका के अन्दर जो सिंह (अभिमान इत्यादि) था, उसे वश में कर लिया है। और जो कुछ भी ब्रह्म भाव से अतिरिक्त दृष्टि में आता था उसे ज्ञान की ज्वाला से नितान्त नाश कर दिया है। अब आनन्द और प्रकाश की धारा उमड २ कर अन्दर से वह रही है, और चारों ओर आनन्द विखड़ रहा है।

अज़ मुकाम (स्थान):-हजूर का दिल (आप का हृदय)

भल्ला २ जानियां मौजां लुट्टियां ज्ञानियां।
खुशी रहना कार है, सोग सोगयां द्वार है॥

स्वामी जी का पत्र व्यवहार पूर्व आश्रम संबन्धी पुरुषों से नितान्त बन्द रहा था इसलिये भगत जी को इसे छे वर्ष के भीतर २ कोई पत्र नहीं भेजा गया। सन् १९०६ अगस्त मास में स्वामी जी के प्रिय भक्त सरदार पूर्ण सिंह जी लाहौर से जंगलों में केवल दर्शनार्थ आये थे और भगत धन्नाराम जी से मुखाग्र संदेशा भी लाये थे जिस के उत्तर में स्वामी जी ने पत्र लिख कर उसी सरदार पूर्णसिंह जी) के हाथ से भेज दिया। यह पत्र स्वामी जी के शरीर त्याग से केवल एक दो मास ही पहिले भेजा गया था।

रामपत्र ।

भाग २

अन्य सद्गृहस्थों के नाम पत्र।

* लाला फतेहचंद के नाम दो पत्र।

(१) क

लाहौर

२६ एप्रिल १६००

भगवन्,

मार्च के रिसालाः अलिफ (मासिक पत्र) के पिछले दस पृष्ट एक बार पुनः एकाग्र (अथवा सावधान) चित्त से पढ़ियेगा। मास मई के रसाला अलिफ में आप के प्रश्नों के

---

* जब गोस्वामी तीर्थराम जी १८९९ में अमरनाथ की यात्रा करने गये थे तो मार्ग में श्रीनगर कुछ दिन ठहरे थे। कुछ दिन लाला फतेहचंद जी के घर पर ठहरे, और कुछ दिन राय साहिब मंगूमल जी के घर में, जो उन दिनों वहां के पोस्ट मास्टर थे। ला० फतेहचन्द जी उन दिनों धर्म के कई एक नियमों को व्यर्थ और मिथ्या मानते थे बल्कि उनका चित्त धर्म विषय में सहस्रो संशयों से भरा पडा था। और लोगों में भ्रमी और संशयात्मा भी प्रसिद्ध थे। जहां कहीं श्री नगर में वह किसी महात्मा के आगमन की सूचना पाते, वह झट अपने संशय मिटाने के लिये उनके निकट चले जाते। सन्तोष कहीं भी उन्हें मिलता भान न होता था, पर हां कहीं कहीं मिल भी जाता था। गोस्वामी जी के दर्शन से इन का चित्त अत्यन्त प्रसन्न हुआ था, और जैसा कि सुना गया कि गोस्वामी जी के प्रसन्नता भरे मुखडे के दर्शन मात्रसे इन के कई भ्रम दूर होगये। और फिर प्रश्नों के करने पर कई सिद्धान्त हल हो गये। इस थोडी सी संगति से इनके चित्त में बडा प्रभाव पडा और गोस्वामी जी के साथ इन का बडा प्रेम हो गया, और इसी प्रेम से विवश होकर पत्रों द्वारा अपने संशय अब दूर कराने लगे। और उसी सिलसिले में ये दो पत्र उनके एक पत्र के उत्तर में हैं। इन ला० फतेहचन्द जी को नारायण से मिलने का भी समागम हुआ, नारायण ने इन्हें सादा और सरल चित्त पाया।

उत्तर विस्तार पूर्वक आजायेंगे। एप्रिल वाला रिसाला भी बहुत संशय निवृत्त कर देगा।

यह संशय जो इस समय बड़े गूढ़ और विषम दिखाई देते हैं एक काल अवश्य आयेगा कि नितान्त साफ हो जायेंगे। प्रत्येक प्रकार से यहां परमानन्द है।

आप का
तीर्थराम गोस्वामी।

(२) ख

लाहौर
१६ जून १६००

भगवन्,

कोई शंका नहीं है जिस को राम दूर न करसके। प्यारे! शंका का नाम मात्र भी वेदान्त में स्थिति नहीं। वास्तव में केवल यही है कि "हमा ओस्त" (सर्वं खल्विदं ब्रह्म)। यदि आप के संशय अभी निवृत्त होने शेष हैं, तो उस का कारण यही है कि अभी तक पूरा समय किसी सच्चे महात्मा की संगति में नहीं अर्पण किया। सत्संग की कमी है। सत्य (Truth) को इस बात की परवाह नहीं कि उस के अनुयायी अधिक हों। यदि हज़ारों वर्षों तक गुरुत्वाकर्षण का नियम (Law of Gravitation) लोगों को विज्ञात नहीं हुआ तो क्या उस नियम की न्यूनता थी? कदापि नहीं।

रिसाला आलिफ की बारह जिल्दें (प्रतियां) प्रति वर्ष की लोगों को पहुंच जाया करेंगी। इस के विलम्ब हो जाने का कोई डर नहीं। यह भी भले के लिये हुआ है जैसा कि समय पर हमें विदित हो जायगा। आलिफको प्रशंसा (credit) कीर्ति की आवश्यकता नहीं है, और निन्दा (censure) का भय नहीं है। वह तो अपने आनन्द से तरंगायत होता है। उस

के लिये तो ब्रह्म से अतिरिक्त जगत् वगत् है ही नहीं। प्यारे! अनलहक़ (अहंब्रह्मास्मि) की गर्ज़ तो एक बार प्रत्येक स्त्री पुरुष से यह रिसाला सुनवा ही देगा। निहंग निःशंक राम के दर्शन देने की देर है।

राम

(३) मथुरा निवासी लाला नन्दकिशोर को पत्र।

ॐ प्रतापनगर

रियासत टेहरी गढ़वाल

अप्रैल १६०२

प्यारे,

प्रातः और सायं काल एकान्त में बैठ कर परमेश्वर का इस प्रकार ध्यान करो कि चित्त में समा जाये, या यों कि चित्त उस में लीन हो जाय।

ऐसे प्रकाश के रूप का ध्यान करो कि जो सूर्य के प्रकाश से भी अधिक तेज़ और चन्द्रमा की ज्योति से भी अधिक शीतल हो और सर्व व्यापक हो।

ऐसे प्रकाशमय ध्यान में कुछ काल लीन हो जाओ। फिर चित्त में यह भाव भर लाओ कि यह नाम रूप (शरीर-इत्यादि) मेरा नहीं, प्रकाश स्वरूप परमात्मा का है। और वह प्रकाश स्वरूप आत्मा मेरा है। तात्पर्य यह कि इस शरीर और नाम को बेच दो और उस ज्योति स्वरूप आत्मा को खरीद लो। शरीर और शारीरिक आवश्यकतायें परमात्मा के अर्पण कर दो। वह जाने उसका काम। परमात्मा को तुम अपना कर लो, भूलेने न पाये। अपना विश्राम, अपना सुख और स्वास्थ्य परमात्मा में रक्खो।

तुम हमारे हो हम तुम्हारे हैं।

साथ इस के चलते फिरते बैठे खड़े अपने मन में ॐ (यह मंत्र) जपते रहा करो। यदि हो सके तो लाहौर, सूतर मंडी, आनन्द प्रैस, से रिसाला अलफ की जितनी जिल्दें (प्रतियें) प्राप्त हो सकती हों मंगा लो, और उन्हें पढ़ा करो। इस प्रकार से सब रोग दूर हो जायेंगे।

राम।

(४) गुसाईं जी के दो पत्र अपने भतीजे गुसाईं *ब्रजलाल को।

(क) पुष्करराज

(ज़िला अजमेर)

फरवरी १९०५

प्यारे आत्मदेव,

ॐ आनन्द, आनन्द, आनन्द,
जय! जय!! जय!!!

राम आज कल एकान्त सेवन कर रहा है। जब आप के देश की ओर आना होगा आप को सूचना दी जायगी।

(नोट) गुसाईं ब्रज लाल गोस्वामी तीर्थ राम जी के भतीजे थे। जब स्वामी राम गृहस्थाश्रम म थे, उन दिनों ब्रजलाल जी उन के पास रहते थे और वहीं की पाठ शाला में विद्या भी पाते थे। स्वामी जी की सफारिश से इन को जम्मू रियासत में नौकरी मिलगई थी। पहिले यह हलका पटवारियों में प्रविष्ट हुए, तत्पश्चात् तुरन्त कानूंगो की पद्वी मिल गई और आज कल रियासत जम्मू जिला उत्तमपुर की रामवन तहसील में मुन्सिरम के पद से सुशोभित हैं, और शायद नायब तहसीलदार शीघ्र होने वाले हैं, या सम्भव है कि अभी हो गये हैं। जब स्वामी राम गृहस्थाश्रम को त्यागने लगे, अर्थात् जब जंगलों में पधारने

प्यारे! आप ने बहुत उन्नति की है, आप की लेखनी सिद्ध कर रही है। शाबास शाबाश। पंडित रामधन जी इत्यादि सब को आनन्द।

जो खुदा को देखना हो तो मैं देखता हूं तुमको। मैं तो देखता हूं तुम को, जो खुदा को देखना हो।

आप का अपना,

राम।

(५) ख

मौंट एवेरिस्ट के सन्मुख
हिमालय
२८ जून १९०५

प्यारे ब्रजलाल,

ॐ आनन्द, ॐ आनन्द, ॐ आनन्द,

तुम्हारा पत्र आया। प्यारे! संसार में दो प्रकार के मनुष्य हैं, एक तो वह हैं जो नित्य अपना चित्त तंग रखते हैं, संन्तोष नहीं, धन्यवाद (कृतज्ञता) नहीं, अपने इर्द गिर्द के पदार्थों से अविरोध नहीं। बड़ी से बड़ी पदवी भी मिल जाये तो भी चित्त अशांत ही रखते हैं। इस बात का ध्यान नहीं कि मेरा पेट भरने को भोजन जब मुझे प्राप्त है तो मैं शान्ति से सत्संग और भजन को कुछ काल दूं, बल्कि यह भूत सिर पर स्वार रखते हैं कि अन्य लोग अधिक रोटियां (भोजन) क्यों ले गये? मैं पीछे क्यों रह गया?। इस प्रकार की अनुकृति करने वाले मनुष्य संसार में बहुत से हैं। यह लोग

लगे तो उस से किञ्चित् काल पहिले गुसाईं ब्रजलाल को जम्मू नौकरी के लिये भेजा था। और केवल ५ वर्ष के भीतर २ इतनी उन्नति पा जाने पर राम ने इन को शाबास दी है।

आध्यात्मिक ज्ञान में बालक हैं। ऐसे लोग तुच्छ बुद्धि वाले हैं। ऐसे पुरुष उन्नति नहीं कर सकते। दूसरी भांति के लोग संसार में वह हैं कि जो प्राप्त कर्त्तव्यों को दत्तचित्त से पूरा करते हैं, और काम को ईश्वर कर्म या अपना कर्म समझ कर करते हैं। वेतन या दक्षिणा (फल) के ध्यान से नहीं करते बल्कि काम में स्वयं आनन्द लेते हैं। चाहे काम कैसा ही हो उस काम में प्रवीण (या प्रवीर) होना अथवा उस को अति उत्तम करके दर्शाना उन का लक्ष्य होता है। सफारशें (गुणवर्णन पत्र) लड़ाना इन शुद्ध चित्त (सुभग) पुरुषों का काम नहीं होता। ऐसे लोगों की संख्या भारत वर्ष में आज कल कम है। परन्तु वृद्धि (या उन्नति) परमेश्वर ऐसे ही पुरुषों को देता है। पहिली प्रकार के लोग मुँह देखते (तकते) ही रह जाते हैं। इसी महकमा बन्दोबस्त में काम करते करते पंडित रामधन जी वर्तमान पदवी (मोहतिमिम बन्दोबस्त) पर पहुंचे। इसी महकमा बन्दोबस्त में काम करते २ पंडित परशुराम जी पटवारी पन से बढ़ते २ आज ऐक्स्ट्रा आसिस्टैंट कमिशिनर बन गये। बोलो इन लोगों की किस ने सफारश (प्रशंसा) की थी? काम को दत्त चित्त से करो। भड़काने वालों की बातें मत सुनो। सत्संग और भजन को ध्यान दो।

सन् १६०० से १६०५ तक महकमा बन्दोबस्त में यदि "चित्त और मस्तिष्क को खराब किया है" तो अपराध किस का है? महकमा बंदोबस्त का तो अपराध नहीं। यह उत्तम (कल्याण कारी) महकमा है, इस में घूमने चलने फिरने का अवसर मिलता है, जो शरीर को कुशलता में रखेगा। मस्तिष्क को अशुष्क (नूतन और शान्त) बनायेगा। इस महकमा में रहकर तुम सरकारी काम से अतिरिक्त समय के पढ़ने, लिखने, शास्त्रों के अभ्यास और विचार में खर्च

करो। या खेती और वनस्पति शास्त्र अथवा भूगर्भ Geology) और गणित शास्त्र इत्यादि की पुस्तकें मंगाकर पढ़ते रहो। कृषिकर्म-विद्या, वनस्पति और भूगर्भ शास्त्र में जो उन्नति तुम महकमा बन्दोबस्त में कर सकते हो, वह कालेजों में कदापि नहीं कर सकते। कोई पुस्तक एक बार पढ़ने से समझने में न आये तो पुनः पढ़ने से ठीक (साफ) हो जायगी, यदि तब भी न आये, तो तीसरी बार पढ़ो, स्वतः सब तात्पर्य स्पष्ट हो जायगा। तुम विद्या प्राप्त करने की ओर ध्यान दो, कालेज की डिग्नरियों (पदवियों) को चूल्हे (चुल्ली) में डालो। यह डिग्रियां हाथी के दिखाने के दाँत हैं, खाने के नहीं। विद्या प्राप्त की हुई कहीं व्यर्थ नहीं जाती। विद्या को विद्यार्थ पढ़ो, सांसारिक पदवियों (डिग्रियों) के लिये नहीं। जीवन में यह बाहर की डिग्रियां वास्तव में किसी काम की नहीं होतीं।

जो लोग अपनी विद्या-शक्ति बढ़ाते चले जाते हैं, उनकी उन्नति स्वतः होजाती है, और जो लोग उन्नति के पीछे दौड़ते रहते हैं, न तो उनकी शक्ति (योग्यता) ही बढ़ती है, और न उनकी उन्नति ही होती है। जिन्हों ने यहां कुछ नहीं किया वह जापान और अमेरिका में भी कुछ नहीं करेंगे। जो निपुण हैं वह यहीं घर बैठे जापान और अमेरिका वालों से आगे बढ़ सकते हैं। चलते फिरते बैठे खड़े पल २ से तुम काम ले सकते हो।

महकमा बन्दोबस्त में रहते २, भूगर्भशास्त्र (Geology) कृषिकर्म विद्या (agriculture) रसायन शास्त्र (chemistry) और वनस्पति विद्या (Botany) यदि तुम पढ़ लो, तो तुम्हारा जापान या अमेरिका में जाना लाभकारी हो सकता है, नहीं

तो कदापि नहीं। पूर्वोक्त विषयों पर मैक्मिलन की विज्ञान-शास्त्र की पुस्तकें मंगा लो। प्रत्येक का ||=) या |||) दाम है। लगभग प्रत्येक अँग्रेज़ी पुस्तक विक्री के पास से मिल सकती है। या पूर्ण को सूतर मंडी लाहौर के पते से लिख दो। पूर्ण जी कहीं से लेकर भेज देंगे। बाकी आप मँगा लेना।

Your own self
तुम्हारा अपना आप, राम।

(६)

वासिष्ठाश्रम,
रियासत टेहरी गढ़वाल,
१२ जुलाई १९०६

प्यारे भगवन्,

ॐ ॐ ॐ, आनन्द, जय।

आप का १८ जून का पोस्ट कार्ड इन पर्वतों में आज मिला। इस का उत्तर तो पहिले ही भेजा जा चुका है। यह स्थान टेहरी से दो दिन का रास्ता है। उत्तरकाशी, टेहिरी, केदारनाथ के समीपस्थ त्रियुगी नारायण और श्रीनगर यहां से लगभग एक समान दूरि पर पड़ते हैं। यह स्थान केन्द्र में हैं। ....

परमानन्द की तरंगों पर तरंगे उमड रही हैं। खुशी के फव्वारे (निर्भर) छुट रहे हैं। सब को ओम् आनन्द, आनन्द, परमानन्द। ....

राम

फैजाबाद के रईस लाला राम रघुबीर लालजी के नाम तीन पत्र ।

(७)

३० सितम्बर १६०६

प्यारे भगवन्,

आप का ८ अगस्त का पत्र साथ शान्ति प्रकाश+ के पोस्ट कार्ड के आज ३० सिम्बर को मिला। मंसूरी इत्यादि जैसा भी कुछ होगया परमानन्द ही परमानन्द है ।..........

....

टेहरी से कोई पाँच मील की दूरी पर गंगा तट पर एक विशाल * मैदान (क्षेत्र) में यह शीतकाल व्यतीत होगा। राम टेहरी आगया है । अभी सरकारी कोठी भिलंग (भृगु) गंगा के तट पर (सिमलासु बाग में) उतरा हुआ है । कोई ५० डबल पृष्ट का अंग्रज़ी लेख Indian Review (मासिक पत्र) को भेजा जा चुका है । जब छप जायगा, उसका उर्दू अनुवाद शान्ति प्रकाश+ जी के ज़िम्मे है । एक

+शान्ति प्रकाश से अभिप्राय फैजाबाद के बा० सुरजन लाल जी हैं।

* यह विशाल क्षेत्र (मैदान) टेहिरी से पांच मील की दूरी पर मालिदेवल ग्राम के समीप है। यहां गंगा के तट पर महाराज साहिब टेहिरी एक छोटी सी कुटिया स्वामी जी के लिये बनवा रहे थे। अभी यह कुटिया आधी भी नहीं बनी थी कि स्वामी जी का शरीर भृगु गंगा में (जो सिमलासु बागीचे में महाराजा साहिब की कोठी के नीचे वह रही है) वह गया और संसार को नित्य के लिये तिलाञ्जलि दे गया। तत्पश्चात् नारायण के एकान्त सेवन के लिये महाराज साहिब ने इस कुटि को संम्पूर्ण बनवा दिया और ऐसे रहते २ इस से अतिरेक और बहुत सी कुटियां बन गयीं। यह स्थान स्वामी रामतीर्थ के समारक में राम मठ कहा जाता था। अब कार्य की अधिकता से नारायण के अन्य देशों में अधिक रहने से रियासत की कौनसल ने उसे और काममें लगा दिया है।

उर्दू लेख† 'अरूज़े-तमस्सक' समीप ही ज़माना पत्र को जाने वाला है..............२७१..............................

(८) ७ अक्तूबर १९०६

Peace, Blessings !! Love !!!
शान्ति, आशीर्वाद, प्रेम,

भगवन्,

तुम्हारा प्रेम कार्ड अभी मिला !

गंगा तट पर बड़े सुन्दर स्थान पर विशाल क्षेत्र में एक छोटी सी सुन्दर कुटिया राम के शरद् ऋतु काटने के लिये महाराजा साहिब ने बनवा दी है। इस लिये अब से छे सात मास तक निम्न लिखित पता रहेगा*।

स्वामी रामतीर्थ
डाकखाना रियासत टेहरी गढ़वाल
हिमालय,

---

† यह लेख सब से अन्त का है। इसी को लिखते लिखते स्वामी जी ने इस लेख के अन्त में मृत्यु को बुलाया और इसी लेख के समाप्त होने के बाद स्वामी जी का शरीर गंगा के जल प्रवाह में बह गया। यह लेख भाग १६ में दिया जायगा।

* यह पत्र स्वामी जी का सब से अन्त का है। इस से थोड़े काल ही पीछे स्वामी जी का शरीर छूट गया।

जल्वहे-कुहसार।

अर्थात्

पर्वतीय दृश्य

भाग २

जल्वहे-कुहसार।

अर्थात

पर्वतीय दृश्य।

(राग भैरों-ताल धुमार)

ऐ दिल ईंजा कूए-जानाँ अस्त अज़ जाँ दम मज़न।
अज़ दिलो-जानो-जहाँ दर पेशे-जानाँ दम मज़न॥ १॥
जाँ नदारद क़ीमते-बिसियार अज़ जाँ वा मगो।
गर चे जाँ दर बाख़्ती दर राहे-जानाँ दम मज़न॥ २॥
गर तुरा दरदे-स्त अज़ वै हेच अज़ दरमाँ मगो।
दरदे-ओरा बिह ज़ दर माँदाँ ज़ दरमाँ दम मज़न॥ ३॥
चूँ यक़ीं आमद रिहा कुन क़िस्सए-शक्को-ओ-गुमाँ।
चूँ अयाँ बिनमूद रुख़ दीगर ज़ बुरहाँ दम मज़न॥ ४॥
इल्मे-वेदीनाँ गुज़ारो-जह्ल रा हिकमत मख़्वाँ।
अज़ ख़यालातो-फ़सूनो-अहले-यूनाँ दम मज़न॥ ५॥
बा लबे-मैगूँ-व-रूए-ख़ूबो-ज़ुल्फ़े-दिलकशश।
अज़ शराबो-शाहिदो-शमओ-शबिस्ताँ दम मज़न॥ ६॥
कुफ़रो-ईमाँ रा व पेशे-ज़ुल्फ़ो-रूयश कुन रिहा।
पेशे-ज़ुल्फ़ो-रूए-ओ अज़ कुफ़रो-ईमाँ दम मज़न॥ ७॥
चूँकि बा-ओ-बरनयारी बूदन अज़ वसलश मगो।
चूँकि बे-ओ-हम नमी बाशी ज़ि हिजराँ दम मज़न॥ ८॥
मिहरे-ताबाँ-चूँकि हस्त अज़ अक्से-रूयश ता बशे।
ममरखी दर पेशे-ओ अज़ मिहरे ताबाँ दम मज़न॥ ९॥

अर्थ—ऐ दिल! यहाँ प्यारे की गली है। यहां अपनी जान का दम भी मत मार (अर्थात् जान का घमण्ड मत कर वा

जान की परवाह मत कर), और अपने प्यारे के आगे जान और जहान और दिल का दम मत मार (अर्थात् अपने प्यारे के समक्ष इस प्राण इत्यादि का घमण्ड मत कर अथवा अपने प्यारे के सामने इनको प्रिय मत समझ) ।

(२) जान (अपने प्यारे की अपेक्षा) अधिक मूल्य नहीं रखती है, इस लिये इस जान का शोक मत कर । यदि तू अपने प्यारे के रास्ते में जान पर खेलता है, तो चुप रह (तू इस काम पर भी शेख़ी मत कर) ।

(३) यदि तुझको (अपने प्यारे की प्रीति में) कुछ कष्ट है, तो उसकी चिकित्सा के विषय में कुछ चर्चा न कर । उसके कष्ट को अर्थात् उसकी प्रीति में जो कष्ट हो उसको भी चिकित्सा से उत्तम समझ और चिकित्सा के विषय में चर्चा न कर (अर्थात् चुप रह) ।

(४) जब तुझको विश्वास हो गया तो संशय-संदेह की कहानी को छोड़दे, जब उस (प्यारे) ने अपना मुखड़ा दिखा दिया, तो फिर हील और हुज्जत न कर ।

(५) जिनका कोई धर्म ही नहीं है, ऐसे लोगों का ख़याल छोड़ और मूर्खता को तत्त्वज्ञान मत कह; एवं यूनान वालों के विचारों और उनके आख्यानों का दम मत मार ।

(६) मदिरा-जैसे ओष्ठ, सुंदर मुखड़ा, मन हरण जुल्फ़, मदिरा और प्रियतम और शमा और शयनागार के विषय में भी चर्चा न कर ।

(७) कुफ़्र और ईमान को उसके मुखड़े और जुल्फ़ के आगे छोड़ दे और उस प्यारे के जुल्फ़ और मुखड़े के सामने कुफ़्र और ईमान की चर्चा न कर ।

(८) क्योंकि तू उस (प्यारे) से आगे नहीं बढ़ सकेगा, इस लिये तू उसके मिलाप (दर्शन) की चर्चा मत कर, और इस हेतु कि तू उस (प्यारे) के बिना भी नहीं रह सकेगा, इस लिये वियोग की भी चर्चा न कर।

क्योंकि प्रकाशमान सूर्य उस (प्यारे) के मुखड़े की ज्योति की एक चमक है, इस लिये, ऐ मग़रबी, उसके सामने प्रकाशमान सूर्य की भी चर्चा न कर ॥ ९ ॥

राग भैंरों-ताल झप।

मयार ऐ बख़्त ! बहरे-ग़रके मा दर शोर दरिया रा।
परे-माही मगरदां बादबाने किश्तिए मा रा ॥१॥
लिबासे-मा सुबकसारां तअ़ल्लुक़ बर नमी ताबद।
बुवद हमचूं हुबाब अज़ वस्लिया ख़ाली पैरहन मा रा ॥२॥
दमे-जाँबख़्श-तो तारंगे-हैरत रेख़्त दर आलम।
ज़े मिहर आईना दर पेश-नफ़स दीदम मसीहा रा ॥३॥
अगर लब अज़ सुख़न गोई फ़रो बंदेम जां दारद।
कि न बुवद अज़ नज़ाकत ताबे-विस्तन मानए मा रा ॥४॥
शवद अज़ शोलए-आवाज़े-कुलकुल बज़्मे-मै रोशन।
सरत गरदम मकुन ख़ामोश साक़ी ! शमए मीना रा ॥५॥
ग़नी साग़र व कफ़ जमशेद पेशे-मैफरोश आमद।
कि शायद दर बहाए बादागीरद मुल्के दुनिया रा ॥६॥

अर्थ—(१) ऐ नसीबे ! हमारे डुबाने के लिये दरिया को तूफ़ान में मत ला (ऐ बख़्त ! हमको डुबोने के लिये सांसारिक इच्छाओं के नद में तूफ़ान मत बरपा कर), और ऐ मछली के पर ! हमारी नौका के बादबान को मत फेर।

(२) हम हलके (सांसारिक संबंधों से मुक्त) लोगों का चोला संबंध की ताब नहीं ला सकता है (अर्थात् संबंधों

की ओर चलायमान नहीं हो सकता है) और हमारा कुरता बुलबुले की तरह बख़िया से ख़ाली (संबंध-हीन) है।

(३) जब से तेरे प्राणदाता दम ने संसार में आश्चर्य का रंग बिखेरा है (अर्थात् आश्चर्य चल् किया है) उस समय से मैं ने मसीहा को तेरे प्रेम के कारण (आईना दर पेशे नफ़स) विस्मय-पूर्ण देखा है (अर्थात् ऐ सच्चे माशूक़ ! तेरे प्राण का दान करने वाले दम (आश्वासन) ने प्रेम के रोगियों को स्वास्थ्य दान किया है। इस लिये तेरे प्रेम के शरण अब मसीह (जिस में चमत्कार था कि वह मुर्दे को ज़िंदा कर देता था) विस्मित हो रहा है, क्योंकि अब उस का चमत्कार व्यर्थ हो गया।

(४) यदि तू कहे तो हम बात करने से ओष्ठ बंद कर रक्खें (चुप रहें), पर क्या यह उचित है ? क्योंकि तेरी सुकोमलता के कारण हमको अर्थ (रहस्य) छुपाने की शक्ति नहीं (अर्थात् स्वभावतः हमारे मुँह से तेरी प्रशंसा अवश्य निकले ही गी और तेरा रहस्य प्रकट किए बिना हम न रहें गे)।

(५) क्योंकि मदिरा की सभा (मदिरा की) सुराही (पात्र विशेष) के शब्द की अग्नि से प्रकाशित हो जाती है इस लिये ऐ साक़ी (मद्य पिलाने वाले) ! मैं तुझपर न्यौछावर होता हूं, कि तू मदिरा के शीशे की ज्योति को मत बुझा (अर्थात् ऐ पूर्ण गुरु ! भगवत्प्रेम की मदिरा का दौर (प्रेम-लहर) जारी रहे, भगवान् के लिये इसे पल भर के लिये भी बन्द न कर।

(६) ऐ ग़नी ! जमशेद अपने प्याले (संसार दर्शक प्याले) को हथेली पर रक्खे हुए मदिरा-विक्रेता के पास आया कि

कदाचित् मदिरा के बदले वह सुरा व्यवसायी 'दुनिया के मुल्क' को ले ले, अर्थात् भगवत्प्रेम की मदिरा इतनी मूल्यवान् है कि जमशेद उसके लेने में 'दुनिया के मुल्क' को या अपने उस प्याले को जिसमें कि सारे संसार का दृश्य दिखाई देता था, अकातर-मन से देता है ॥

गंगा ! क्या वह तेरी ही छाती है जिसके दूध से ब्रह्मविद्या का पोषण होता है ?

ऐ हिमालय ! क्या तेरी ही गोद है जिसमें ब्रह्मविद्या (गिरिजा) खेला करती है ?

क्या तुम्हें भी वह दिन स्मरण है जब पहले पहल "राम" 'पांडुवर्ण-शीतल श्वास-अश्रुपूर्ण लोचन' के साथ तुम्हारी शरण में आया था ? अकेले इन पत्थरों पर पड़े-पड़े रातें कटती थीं। आँसुओं से यह शिला तर-ब-तर होते थे, हिचकियों का तार बँधता था। हाय ! वह परम आनन्द कहां है 'जिसकी मस्ती में न कोई कल है न आज (अर्थात् जिसकी मस्ती में आज वा कल की सुद्ध नहीं रहती) ?

हाय ! वह आनंदसागर कब मिलेगा जो सांसारिक भोगों को तृण और कूड़ा-कर्कट की तरह बहा ले जाता है ! ज्ञान का प्रचंड मार्तंड कब मध्याकाश पर आएगा ! शारीरिक प्रयोजन (स्वार्थ) और इंद्रियों के विषय धुंध और अंधकार के समान कब साफ़ उड़ जायँगे ! गंगा का जल हरगिज़ (अर्थात् कहीं पर भी, या कभी भी) गरम नहीं होता। हे भगवन् ! वह समय कब आएगा कि ब्रह्मज्ञान के उन्माद (नशा) की बदौलत राम के दिल पर स्वप्न में भी स्नेह और विराग (Favour & Frown) अधिकार पाने के अयोग्य हो जायँगे ! पाप और शोक (Sin & Sorrow)

भूत-काल की तरह कब गए-बीते होंगे। तुरिया अवस्था क्या ग्रंथों में ही लिखी जाने को है, अन्यथा वह तुरिया कहां है? नंगे शिर, नंगे पैर, नग्न शरीर, उपनिषदें हाथ में लिए दीवानावार (पागलसा) "राम" पहाड़ी जंगलों में फिर रहा है—

खूने-जिगर शराब तिरश्शोह है चश्मे-तर।
सागर मिरा गिरौ नहीं अबरे-वहार का॥

अर्थः—मेरे जिगर का खून तो मेरी शराब है और छलकता हुआ जल (वर्षा) मेरे अश्रुपूर्ण लोचन हैं।

नाला हाए कुल्बा-ए-अहज़ां तसल्ली बख़्श नेस्त।
दर वियावाँ मीतवाँ फ़रयाद ख़ातिर ख़्वाह कर्द॥

अर्थ—शोक-घर में रुदन सन्तोष जनक नहीं है, जंगल में जाकर मन मानी पुकार कर सकते हैं (अर्थात् वन में खुले दिल से अपने प्यारे की याद में रुदन हो सकता है)।

वर्गे-हिना पै जा के लिखूं दर्दे-दिल की बात।
शायद कि रफ़्ता-रफ़्ता लगे दिलरुबा के हात॥

पहाड़ की खोह का, पर्वत की कंदरा का पीड़ा-पूर्ण आर्त्त-नाद को सहानुभूति-पूर्ण उत्तर देना कभी नहीं भूलेगा

इश्क़ का मनसब लिखा जिसदिन मेरी तक़दीर में।
आह की नक़दी मिली स्वहरा मिला जागीर में॥

"बस तख्त या तखता (अर्थात् राजसिंहासन या चिता) माता-पिता! तुम्हारा लड़का अब लौट कर नहीं जायगा। विद्यार्थी लोगों! तुम्हारा विद्या-गुरू अब लौट कर नहीं जायगा। गृहस्थों! तुम्हारा नाता कब तक निभेगा। 'बकरे की मां

कबतक खैर मनाएगी ? या तो सब संबंधों से रहित होगा या तुम्हारी आशाओं के शिर एक साथ पानी फिर जायगा। या तो राम की आनंदघन तरंगों में घर-बार (क्यों कब) निमग्न होगा (तुरीया अतीत), और या राम का शरीर गंगा की लहरों के समर्पण होगा, तन बदन (देह-भाव) का अंत होगा। मरकर तो हर एक की हड्डियां गंगा में पड़ती हैं यदि अपरोक्ष न हुआ और यदि शरीर-भाव की गंध बनी रही, नहीं तो राम की हड्डियां और माँस जीते जी मछलियों की भेंट होंगे"।

वन के परवाना तिरा आया हूं मैं ऐ शम्माए-तूर।
बात वह फिर छिड़ न जाए यह तक़ाज़ा और है॥

(राग आसावरी ताल एका)

नैन मेरे सुख क्यों नहीं सौंदे।
कढ पाँधा पतरी देख दिन मेरे॥
काग मेरे घर नित उठ लौंदे।
नैन मेरे सुख क्यों नहिं सौंदे॥

अगर राम के चरणों में गंगा न बही, तो राम का शरीर गंगा पर अवश्य बहेगा।

करेरथांगंश्यने भुजंग-याने विहंगं चरणेम्वगांगम्॥

आँख जल बरसा रही हैं। ठंठी और लंबी सांस मानो तीक्ष्ण वायु के समान मेघ का साथ दे रही है, बाहर बरसात ज़ोर पर है। कातरता और क्रंदन (अधीरता व रुदन) के साथ राम के अन्तः हृदय से यह ध्वनि निकल रही है—

राग जंगला—ताल तीन

गंगा तेथों सद बलहारे जाऊं। (टेक)

हाड़ चाम सब वार के फेंकूँ, यही फूल बताशे लाऊँ। गंगा०
मन तेरे वन्दरन को दे दूँ, बुद्धि धारा में बहाऊँ। गंगा०
चित्त तेरी मछली चब जावें, अहं गिरि-गुहा में दबाऊँ। गंगा०
पाप-पुण्य सभी सुलगाकर, यह तेरी ज्योति जगाऊँ। गंगा०
तुझ में पड़ूँ तो तू बन जाऊँ, ऐसी डुबकी लगाऊँ। गंगा०
पंडे जल थल पवन दशो दिक्, अपने रूप बनाऊँ। गंगा०
रमण करूँ सत धारा मांहीं, नहीं तो नाम न राम धराऊँ। गंगा०

गंगा-किनारे के ऊँचे-ऊँचे वृक्ष खड़े हुए मानो संध्या कर रहे हैं और मनोहर लता-पता में रंग-रंग के फूल खिले हुए नन्हें बच्चों की भाँति मुसका रहे हैं। हवा आनकर उन्हें झूले झुला रही है। ठँढी-ठँढी पवन मंद स्पंद से दिल लुभा रही है।

बादे-सभा के झोंकों से शाखों का झूमना।
और झूम झूम कर वह रुखे-गुल को चूमना॥

चारों ओर यह दशा है कि राम चिंतित है कि "पीठ किस ओर करके बैठूं"। एक से एक बढ़कर सुहाना है। पर्वतों के ढलवाँ पर हरे-हरे बासमती के खेत लहलहा रहे हैं। इन खेतों में पहाड़ों से उतरता हुआ निर्मल जल बह रहा है। यह जल मुक्त-पुरुषों की भाँति ब्रह्मस्वरूप श्रीभागीरथी में मिलकर उससे अभेद होरहा है। श्रीभागीरथी की शोभा कौन वर्णन करे। क्या विराट भगवान् का हृदय-स्थान यही है? उसका गंभीर और शीतल स्वभाव और उसकी ओंकार अनहद रूपी ध्वनि चित्त की चुलबुलाहट और मलिनता को स्वच्छ कर रहे हैं। किन्हीं-किन्हीं स्थानों पर गंगा जल के विचित्र शांति-भर कुंड बन रहे हैं। उजियाली में तो चमकती दमकती गंगा है कि कोटानुकोट हीरे मोती कूट-कूट कर भरे हैं। मेरी जान! यह मरजान वाला

सुर्मा आँखों में क्या ठँढक देता है, हृदय की आँखों को भी प्रकाशित करता है। गंगा अपनी महा शीतलता और निर्मलता से विष्णुपन दिखाती और महाशक्ति और ज़ोर-शोर से सिंह की भाँति गरजने और अस्थियों को चबाने (बहा ले जाने) से शाक्तपन प्रकट करती है, विष्णु और शिव दोनों की झलक मारती हुई बाबापुरी (जगत्) को कृतार्थ करने जा रही है। गंगा के तरंग इस स्थान पर निहंग के समान रव करते और वेग से छलाँगें भरते चले जा रहे हैं। यहाँ तह पर बहुत बड़े-बड़े पत्थर होंगे। लहरें झाग झाग हुए जाती हैं। मौजें किस बला के पेच खाती हैं। वह देखो, गंगा की धारा भयानक झरना बन रही है, पानी सब का सब एकदम गिरा, फिर उछला। गंगा के आवेश-उन्मत्तता को जतलानेवाली फेन नाच रही है कि गर्जन कर रहे सिंह के बाल (Mane) लहरा रहे हैं। इस आवेश के साथ गंगा मानो यह कह रही है कि ऐ अहंकार (मृग) ! आ, मैं तेरा शिकार करूं। ऐ अज्ञान (गीदड़) ! तेरे देहाध्यास और अहंता की हड्डियाँ चबा जाऊँगी, पसलियाँ अलग-अलग कर दूँगी। ऐ मोह रूपी पत्थर ! आ, मैं तुझे चीर डालूं, पहाड़ों को काटकर आई हूँ, अब तेरी बारी है।

पर इस समय कुल अज्ञान की सेना न मालूम कहाँ अंतर्धान हो गई है, न अँधेरे का कहीं पता लगता है, न अविद्या-तिमिर का। इन हरे-भरे पहाड़ों का प्रकाश और आनंद से यों भरपूर होना किस का संकेत करता है? यह ठंढक और आनंद क्या शुभ-संवाद सुना रहे हैं? 'राम' की मनोकामना यहाँ पूर्ण हो जायगी, सब कामनाएँ तिरोहित हो जायँगी।

मुज़्दा ऐ दिल कि मसीहा नफ़से-मी आयद।

कि ज़ इनफासे-खुशश बूए-कसे मी आयद ॥

अर्थ – ऐ दिल ! खुश हो कि कोई मसीहा (परम ज्ञानी) आ रहा है कि उसके खुश श्वासों से किसी ब्रह्मवित की गन्ध आ रही है।

किस आनंद के साथ 'राम' स्नान करता है, जल उछालता है और आनंद-ध्वनि करता है।

(राग सिंधुरा—ताल तीन)

नदियाँ दी सरदार, गंगारानी। छींटे जलदे देन बहार, गंगारानी०
सानूं रख जिंदड़ी दे नाल, गंगारानी। कदे वार कदे पार, गं०
सौसौ गोते गिन-गिन मार, गंगारानी। तेरियाँलहराँ रामस्वार, गं०

Mother of mighty rivers,
Adored by saint and Sage!
The much beloved peerless Gunga,
Famous from age to age.

अर्थः – शक्ति शाली नदियों की जन्मदात्री !
ऋषि मुनियों ने तेरी आराधना की है।
अत्यन्त प्रिय तथा अनुपम गंगे !
कीर्ति तेरी चिरकाल से व्यापक है।

Unconscious roll the surges down.
But not unconscious thou.
Dread spirit of the roaring flood,
For ages worshipp,d as a God.
And worshippd even now,
Worshippd, and not by serf or clown,
For sages of the mightiest fame.
Have paid their homage to thy name;

अर्थः-तेरी हिलोरें अचेतन रूप से लुढकती फिरती हैं।
परन्तु उनके समान तू भी अचेतन नहीं है॥
(क्योंकि) तेरे गरजते हुए प्रवाह का यह भयानक रूप।
चिरकाल से ईश्वर तुल्य पूजा गया है॥
और अब भी पूजा जाता है।
उस की पूजा मूढ़ और दासों ने नहीं॥
वरन सर्वोच्च प्रतिष्ठा वाले ऋषि-मुनियों ने भी की है।
कि जो तेरे नाम के प्रेमी वा भक्त हैं॥

(रमेशचन्द्र दत्त)

Sacred Ganga ample bosomed,
Sweeps along in regal pride.
Rolling down her limpid waters.
Through high banks on either side.

विशाल वक्षःस्थल (भारी पाट) वाली पुनीत गंगा अपने निर्मल जल को दोनों ओर के ऊँचे तटों से उछालती हुई महानता के गौरव में बह रही है।

संध्या होने को है। एक छोटी सी पहाड़ी पर राम बैठा है। विचित्र दशा है। न तो उसे उदासी नाम दे सकते हैं, न शोक और दुःख ही है। सांसारिक लोगों वाला हर्ष भी यह नहीं है। उसे जागता नहीं कह सकते, सोया भी नहीं; क्या मालूम उन्मत्त (मखमूरो) हो। पर यह तो कोई सांसारिक उन्माद नहीं है। क्या रसभीनी अवस्था है। दूर पेड़ों (पादपों) में से घड़ियाल और शंख की ध्वनि आने लगी। कदाचित् कोई मंदिर है। आरती हो रही है। ए-लो! सामने ऊंची पहाड़ी चोटी से दो तीन फीट की उँचाई पर त्रयोदशी का चन्द्रमा भी अपना चांद सा मुखड़ा लिए आ

रहा है। क्या यह आरती में सम्मिलित होने आया है? सम्मिलित क्यों, यह तो अपने दमकते हुए प्रकाशमान शरीर की ज्योति बनाकर अपने आपको सदा शिव पर वार रहा है। आरती-रूप बन रहा है। आहा! सारी प्रकृति आरती में सम्मिलित हो गई। चारों ओर से कैसी आवाज़ (ध्वनि) आने लगी। ऐ चाँद! तू आगे बढ़ जानेवाला कौन है? प्यारे! अकेला मत रह। अपनी हड्डियों को और तन बदन को आग की तरह सुलगा कर तेरी तरह "राम" अपने आपको इस आरती में क्यों न वार डालेगा?

....

....

उन दिनों 'राम" की खोज करता-करता एक पत्र पहाड़ों में आ मिला, उसका उत्तर—

सरे-बेसर नामा रा पैदा कुनम।
आशिक़ां रा दर जहां शैदा कुनम॥

अर्थ—(यदि) मैं भेद उसी पत्र का जिस पर पता नहीं लिखा, बताऊं (तो) संसार में लोगों को आशिक़ बनाऊं।

एक पत्र मिला जिसमें (१) घर आने के विषय में प्रेरणा थी। यह पत्र तत्काल परमधाम को रवाना कर दिया गया, अर्थात् श्रीगंगाजी में प्रवाह दिया गया।

(राग आसावरी)

रे रंग नहीं मेरा कतने दा।
जोरी बन्ह के भोरे न घत माए॥
पीड़ीं पीड़ के जान नपीड़ लीती।
मासा मास नाहीं रत्ती रत्त माए॥
चरख़ा वेख के रंग कुरंग होया।

सइयाँ विच वाहां केढ़ी वत माए ॥
मत्ती इश्क़ हुसैन न मत सुझे।
मत्ती देंदियां दी मारी मत माए ॥

भावार्थः—हे माता! गृहस्थ रूपी चर्खा कातने की मेरी दशा नहीं, मुझे ज़बरदस्ती से इस बंधन में मत डाल। गृहस्थ के दुःख दे दे कर मेरे प्राण निचोड़ लिये हैं, अब तो शरीर में माशा भर मांस नहीं है और रत्ती भर खून नहीं है। गृहस्थ रूपी चर्खे को देख कर तो मेरा रंग कुरंग (पीला) हो जाता है अब तू ही बतला कि मैं इन गृहस्थी मित्रों में कैसे बैठूं। प्रेम में, ऐ हुसैन! कोई मति नहीं सूझती, बल्कि मति देने वालों की अपनी मति मारी जाती है।

(२) लोगों के गिल्ले-उलाहनों का डर दिखाया था। सो भगवन्! अब तो हम हैं और गंगा—

कफ़न बांधे हुए सर पर किनारे तेरे आ बैठे।
हज़ारों ताने अब हमपर लगाले जिसका जी चाहे॥

तीरों-ऐसे लाछन यहां कुछ नहीं असर कर सकते!

गर न मानद दर दिलम पैकाँ गुनाहे तीरे नेस्त।
आतिशे-शोज़ाने-मन आहन गुदाज़ उफ़्तादा अस्त॥

अर्थ—यदि मेरे दिल में तीर का पैकां (फलटा) नहीं चुभता तो तीर का दोष नहीं, क्योंकि मेरे हृदय में जो इश्क़ (प्रेम) की आग भड़क रही है, वह लोहे को गला देती है, उसने फलटे को भी गला दिया।

ताँ न ख्वाहद सोख्त अज़ मा वर न ख्वाहद दाश्त दस्त।
इश्क़ बस मारा चो आतिश दर क़फ़ा उफ़्तादा अस्त॥

अर्थ—प्रेमाग्नि जब तक जला न लेगी, मुझको न छोड़ेगी, क्योंकि इश्क़ की आग मेरे पीछे लगी है।

तुम्हारा (राम) तो अब पूरा होगया पूरा। न घर का न घाट का (यद्यपि मालिक मलिका लाट का)

(३) किसी घर के मामले के शोक के विषय में पूछो तो महा आश्चर्य है कि तुम्हें वास्तविक घर से ग़ाफ़िल रहने का शोक नहीं।

(४) आपने सब लोगों के सांसारिक काम-काज में तन-मन से लगने का संकेत करके बुलाया चाहा है। अच्छा, यदि लोगों की बहुमति पर ही सच्चाई का निर्णय करना स्वीकार हो, तो बताइए आदम से लेकर ईदम (अब) तक बहुमति (Majority) उन लोगों की है जो वर्तमान जीवन के काम-धंधे को अपने व्यवहार से सच कहने वाले हैं या उनकी जो पृथिवी-तल की धूलि के लगभग प्रत्येक परमाणु में अपनी जिह्वा से बोल रहे हैं कि संसार झूठा है।

अव्याक्तादीनि भूतानि व्यक्त मध्यानि भारत।
अव्यक्त निधनान्येव तत्र का परिदेवना॥

अर्थः—जिसका आदि और अन्त अव्यक्त है, केवल मध्य मध्य व्यक्त है, ऐसे के लिये रोना धोना किस काम का?

(५)भगवन्! आपही की आज्ञा पालन हो रही है। अर्थात् आपसे तुरन्त (बहुत शीघ्र) मिलने का प्रयत्न हो रहा है। शरीर की दृष्टि से तो वियोग कदापि दूर नहीं हो सकता, चाहे कितने ही निकट हो जायँ, फिर भी जहाँ एक शरीर है वहाँ दूसरा शरीर नहीं आ सकता, अतः शरीर की पृथकता अनिवार्य है। वस्तुतः वियोग को दूर करने के लिये "राम" अहर्निश यत्नवान् है, द्वैत का नाम और चिह्न नहीं रहने देगा, आप का अंतरात्मा, आप के हृदय में आपकी आँखों में, वरन् सब के हृदय में सबके जिगर (यकृत) में राम अपना

घर देखे बिना चैन नहीं लेगा। आओ, आप भी पाँच नदियों (रक्त, मूत्र, स्वेद, वीर्य और राला) के कीचड़ अर्थात् शरीर से अपने निज धाम (वास्तविक स्वरूप) की ओर प्रस्थान करो। इस पँचनद से उठकर सच्चे धाम (असली स्वरूप) की पहाड़ियों पर खिंच-खिंच कर पधारिएगा। मिलना अब केंद्र ही पर उचित है, जहाँ पर मिले फिर जुदाई नहीं हो सकती। वृत्त पर (hide and seek) छुपन लुकन खेलते-खेलते कहाँ तक निभेगी। "राम" ने तो यदि स्वयं गंगा को अपने चरणों से निकलती हुई न देखा, तो लोग उसका शरीर गंगा के ऊपर बहता हुआ अवश्य देखेंगे।

मैं कुश्तगाने-इश्क़ में सरदार ही रहा।
सर भी जुदा किया तो सरे-दार ही रहा॥

सीप से मोती निकला हुआ फिर सीप में वापस नहीं आता।

फिर जुलेखा न नींद-भर सोई।
जब से यूसुफ़ को ख़्वाब में देखा॥

गंगा में पड़ी हुई हड्डियाँ वारिसों को वापस कैसे मिल सकती हैं? हाँ, मिलने की इच्छा रखने वाले अपनी हड्डियाँ भी गंगा के समर्पण कर दें तो कदाचित् मेल हो जाय। कुछ कठिन तो नहीं, नित्य प्राप्त की प्राप्ति है, नित्य तृप्त की तृप्ति।

इश्क़ का मनसब लिखा जिस दिन मेरी तक़दीर में।
आह की नक़दी मिली स्वहरा मिला जागीर में॥

कब सुबुकदोश रहे क़ैदिए-ज़िंदाने-वतन।
बूए-गुल फाँदती है बाग़ की दीवारों को॥

ख़ूने-आशिक़ चेह कार मी आयद।
न शवद गर हिनाए-पाए-दोस्त॥

अर्थ—आशिक़ का ख़ून (अर्थात् प्रेमी का रुधिर) किस काम में आए यदि मित्र (प्यारे) के पैरों में मेंहदी की जगह न लगे। (अर्थात् मित्र के पैरों में लगे, इससे बढ़कर आशिक़ के ख़ून का और कोई प्रयोग नहीं)।

शुद फ़िदाए-पाए-जानाँ जाने-मन।
मुसहिफ़े-रूयश बुवद कुरआने-मन ॥ १ ॥
दर सरम हरदम सरे-आज़ादगीस्त।
क़ैदे-तन बाशद ऽकनूँ ज़िंदाने-मन ॥ २ ॥
सिजदए-मस्ताना अम बाशद नमाज़।
दर्दे-दिल बा ओ बुवद ईमाने-मन ॥ ३ ॥

अर्थ—(१) मेरी जान! प्यारे के पैरों पर फ़िदा (निछावर) हो गई, इस लिये उसके चेहरे की किताब (उसके मुख मंडल का दर्शन) मेरा कुरान है।

(२) मेरे मस्तिष्क में हर समय स्वतंत्रता का खयाल है, शरीर की क़ैद (बंधन) अब मुझे जेल घर मालूम होती है।

(३) मेरी नमाज़ मेरा मस्ताना सिजदा है, और उसके साथ दिल का दर्द मेरा ईमान है, अर्थात् उसके प्रेम में हृदय की पीड़ा मेरा ईमान है।

ज़िकरे-खुदा व फ़िकरे-नान् मीशवद ई नमीशवद।
इश्क़े-सनम व बीमे-जाँ मीशवद ईं नमीशवद ॥

अर्थ—ऐ प्यारे! मेरे से ईश्वर का भजन तो हो पर उदर भरण की चिन्ता कभी न हो। ऐसे ही मेरे से प्यारे का ईश्क़ (प्रेम) तो हो,पर उस में प्राणों का भय कभी न हो।

मे रसी दर काबा ज़ाहिद-ज़ूद अज़ राहे-तरी।
ज़ुहदे-खुश्को सौमे तो बे दीदए-गिरियाँ अबस ॥

अर्थः-ऐ ज़ाहिद (तपस्वी)! तू जल के मार्ग से काबे तक

शीघ्र पहुँचेगा, रोज़ा रखना और शुष्क तपस्या से कुछ न होगा जब तक कि प्रेमाश्रुओं से तेरे नेत्र पूर्ण न हों।

दर दबिस्ताने-मुहब्बत अबजद अज़ खुद रफ़्तगी-अस्त।
मानिये बिस्मिल्ला आँ फ़हमद कसे को बिस्मल अस्त ॥ १ ॥
रह नवर्दाने—मुहब्बत रा पयाम अज़ मा रसाँ।
काँदरीं रह यक क़दम अज़ खुद गुज़श्तन मंज़िल अस्त ॥ २॥

अर्थ—(१) प्रेम की पाठशाला में अबजद (क, ख,) क्या है? आपे से बाहर अर्थात् आत्म-विस्मृत हो जाना। बिस्मिल्ला के अर्थ वह जानता है जो पहले स्वयं बिस्मिल (घायल) हो चुका हो।

(२) प्रेम मार्ग पर चलने वालों (प्रेमियों) को हमारी ओर से संदेशा पहुँचा दो कि इस मार्ग में अपने से एक क़दम गुज़रना ही मंज़िल है।

नहीं कुछ ग़र्ज़ दुनिया की न मतलब लाज से मेरा।
जो चाहो सो कहो कोई बसा अब तो वही मन में ॥

एक काले साँप का पैरों-तले आना, व्याल भूषण 'राम' प्यार करने को हाथ बढ़ाता है।

मेरे प्यारे का यह भी प्यारा है।
मेरी आँखों का यह भी तारा है ॥

साँप का दौड़ जाना।

अपरोक्ष]—घना जंगल, जल का किनारा, वनोपवन खिला हुआ, एकांत, कुछ उपनिषदें समाप्त।..............

ऐ वाक-शक्ति! तुझ में है बल उस आनंद को बयान करने का? धन्य हूँ मैं! कृत कृत्य हूँ मैं!

जिस प्यारे का घूँघट में से कभी हाथ, कभी पैर, कभी

आँख, कभी कान कठिनता के साथ दिखाई देता था, दिल खोलकर उस दुलारे का एकत्व लाभ हुआ। हम नंगे वह नंगा, छाती छाती पर है। ऐ हाड़-चाम के जिगर कलेजे! तुम बीच में से उठ जाओ। भेद-भाव! हट। फासले! भाग। दूरी! दूर हो। हम यार, यार हम। यह शादी है कि शादी-मर्ग। आँसू क्यों छमाछम बरस रहे हैं?

.... क्या यह विवाह के अवसर पर की झड़ी है कि मन के मर जाने का शोक (मातम) है? संस्कारों का अंतिम संस्कार हो गया। इच्छाओं पर मरी पड़ी। दुःख-दरिद्र उजाला आते ही अँधेरे की तरह उड़ गए। भले-बुरे कर्मों का बेड़ा डूब गया।

> बड़ा शोर सुनते थे पहलू में दिल का।
> जो चीरा तो इक क़तरए-ख़ूँ न निकला॥
> शुक्र है, आई ख़बर यार के आ जाने की।
> अब कोई राह नहीं है मेरे तरसाने की॥
> आप ही यार हूँ मैं ख़त-ओ-किताबत कैसी।
> मस्ती-ए मुल हूँ मैं हाजत नहीं मयख़ाने की॥

वह तुरिया जो उनक़ा (पक्षी) की भाँति तिरोहित (अदृष्ट) थी, हम स्वयं ही निकले; जिसको अन्य पुरुष की भाँति स्मरण करते थे, वह उत्तम पुरुष अर्थात् मैं ही निकला। अन्य पुरुष अब अंतर्द्धान। ॐ हम, हम ॐ। हम न तुम दफ़तर गुम। ॐ! ॐ!! ॐ!!!

आँसुओं की झड़ी है कि अभेदता का आनंद दिलानेवाली बरसात? ऐ सिर! तेरा होना भी आज सफल है। आँखों! तुम भी धन्य हो गई। कानों! तुम्हारा भी पुरुषार्थ पूरा हुआ। यह शादी (मिलाप, वा अभेदता) मुबारक हो, मुबारक हो, मुबारक हो। मुबारक का शब्द भी आज कृतार्थ हुआ।

शाद बाश ए इशाअशे-सौदाये-मा ।
ऐ दवाए-जुम्ला इल्लतहाय मा ॥
ऐ दवाए-नखवतो-नामूसे-मा ।
ऐ तो अफ़लातूनो जालीनूसे-मा ॥ १ ॥

अर्थः-(१) ऐ मेरे पगलेपन के कारण ! ऐ मेरे समस्त रोगों की औषधि ! ऐ मेरे अभिमान और मान की औषधि (दवा) ! ऐ मेरे लिये जालीनूस और अफलातून ! तू आनन्दवान् हो ।

(२) ऐ मेरी विक्षिप्तता (वा पगलेपन) के कारण ! आनंदवान् हो । तू ही तो मेरे समस्त रोगों की औषधि है ।

तू ही मेरे अभिमान और मान की औषधि है, तू ही मेरे लिये अफ़लातून और जालीनूस है ।

अहंकार का गुड्डा और बुद्धि की गुड़िया जल गए । अरे नैत्रो ! तुम्हारा यह काला बादल बरसाना धन्य हो । यह मस्ती भरे नैनों का श्रावण धन्य (मुबारक) है ।—

यार असाडे ने अँगिया सिलाया ।
असाँ खोल तनी गल ला लिया ॥
असाँ घुट जानी गल ला लिया ।

मस्त दिहाड़े सावन दे आए ।
सावन यार मिलावन दे आए ॥

भाग ले ओ यार ! भाग । कहाँ भागेगा, आकाश पर छुपेगा ? मैं वहां मौजूद । कैलास पर नट जा, मैं वहाँ उपस्थित । समुद्र में जा लेट, तुझ से पहले पहुँचा हूँ । अग्नि में घुस जा, मेरा ही मुख है । समस्त शरीरों में मैं, समस्त नाम और रूपों में मैं, सारे शरीर और नाम-रूप यह स्वतः मैं । कौन बोले ? कौन कहे ? गूँगे का गुड़ । अहा, हा, हा, हा,

हा! मैं कैसा सुंदर हूँ। मेरी सोहनी सूरत, मेरी मोहनी मूरत, मेरी झलक, मेरी डलक, मेरा सौन्दर्य, मेरा लावण्य! इसको मेरी आँख के सिवा कोई आँख देखने की ताब नहीं ला सकती।

मैं अपनी महिमा में मस्त पड़ा हूँ। पर हाय मेरे सौंदर्य का कोई खरीदार नहीं, मेरे यौवन का ग्राहक कोई नहीं। इस अनमोल हीरे को कौन खरीदे?

मुल घत सी आन के कौन केहड़ा,
नहीं दिसदा दूसरा होर कोई।

मैं स्वयं ही आशिक़ हूँ, स्वयं ही माशूक़। आशिक़ हूँ कि माशूक़ हूँ? मैं तो इश्क़ हूँ।..

बाहर जब दृष्टि जाती है, हर पत्ती और फूल 'तू ही' 'तू ही' के स्वर से स्वागत करता है। भीतर से आनंद के बादल अपनी गरज में सब कुछ निमग्न कर रहे हैं। धीरे-धीरे अंग ढीले (गति-हीन)। देश-काल कहाँ चले गए? फासला, दूरी और भीतर-बाहर कैसे? अब आगे वर्णन कौन करे? ....

कई दिन इसी दशा में बीत गए, किंतु रात-दिन दिन-रात किसके?

जित वल देखाँ तूँ ही तूँ। ताना पेटा रूँ।

तीसरे पहर का समय होगा। एक काठ के झूले पर ठीक बीच में राम नग्न बैठा है। और मेघ के स्वरूप में मेघनाद की भांति ऊपर से कड़क रहा है; बिजली बनकर अपने तेज की चमक से जल और पाषाण पर दमक रहा है; पानी बन

कर अपनी बौछार से समस्त प्राणियों को अपने-अपने घोंसलों में घुसेड़ रहा है। आकाश और भूमि और पहाड़ कोई दृष्टिगोचर नहीं होता। जल ही जल है। मानो गंगा भी भूमि से उठकर आकाश तक जा चढ़ी है जिससे कि अपने घर, 'राम', में आराम करे। इन सब को तो घर मिल गए, अब घरहीन राम कहां विश्राम करे ?

न निशमने कि कुनम मकाँ, नं परे कि वर परम अज़ मियाँ।

अर्थः—न घर है कि जहां मैं विश्राम करूं और न पर है कि जिस से मैं अपने भीतर से वाहिर आऊं।

राम, जल शयन नारायण उस जल में व्याप रहा है। बादलों पर चल रहा है, समुद्र को रम्य बना रहा है। कभी वर्षा आती है कभी धूप, किंतु राम के यहाँ न कुछ चढ़ता है न उतरता।

जद पाया भेद कलंदर दा।
राह खोजिया अपने अंदर दा॥
सुखवासी हो उस मंदिर दा।
जित्थे कदे न चढ़दी लहँदी है॥
मुँह आई बात न रहँदी है॥ १॥

दुनियां नहीं पार्वती है, भंग बूटी हर समय घोट रही है। शिव की आँख खुली, चट प्याला हाज़िर (उपस्थित)। ज़रा होश आया, नशे में बहाया।

आ मेरे भँगड़ा ! तू आ, भंग पी जा।
आ मेरे भँगड़ा ! निशंग भंग पी जा॥ १॥

भर-भर देनियां मैं भंग दे प्याले।
निशंग भंग पीजा, निहंग भंग पीजा॥ २॥

भंग घोटनेवाली प्रकृति नहीं, यह तो स्वयं भंग और मदिरा है। भंग और मदिरा नहीं, यह तो भंग और मदिरा का मद (नशा) और मस्ती है, यह तो स्वयँ मैं हूँ।

न है कुछ तमन्ना न कुछ जुस्तजू है।
कि वहदत में साक़ी न सागर न बू है॥
मिलीं दिल को आँखें जभी मारफ़त की।
जिधर देखता हूं, सनम रू बरू है॥
गुलिस्तां में जाकर हर इक गुल को देखा।
तो मेरी ही रंगत व मेरी ही बू है॥
मिरा तेरा उठा, हुए एक ही हम।
रही कुछ न हसरत न कुछ आरजू है॥

भर दे नी कटोरा भंग दा।
तेरा केडी गल्लूँ जिया संग दा ? ॥

एक अनूठा स्वप्न—गोल चंद (जिसको सर्व साधारण कृष्ण परमात्मा कहते हैं) राम से छुप्पन-लुक्कन (hide and seek) खेलता है। ढूँढते-ढूँढते हार कर:—

राम—"अरे कहां छुप रहा ? न बाहर है न भीतर है। अंतर्धान कहां हो गया ? बड़ा अंधेर है। हाय हाय !.........

हां ! हां !! हां !!! अब लगा पता। किवाड़ की आड़ में घुसे खड़े थे आप। बाहर निकल गोलू ! अब जाता कहां है ? कान खींचकर चपत जड़ा।"मुँह फेर दूँगा !
...."

इतने में झट आंख खुल गई। अपना कान दर्द कर रहा था, और अपने ही गालपर (थप्पड़ मारता हुआ) हाथ था। इस स्वप्न का वर्णन जो बताए (अर्थात् इस स्वप्न का रहस्य जो बूझे) वही यूसुफ़।

एक पर्चा कुछ प्रश्न उठाए हुए इस आनंद-गंगा में स्नान करने आ गया। प्रश्नों के उत्तर।

"क्या राम अकेला है ?"

(१) कोई विद्यार्थी साथ नहीं, नौकर पास नहीं। वस्ती बहुत दूर है, आदमी का नाम काफ़ूर है। तारों-भरी रात आधी इधर है आधी उधर है। विलकुल सुनसान है, वियावान है, सन्नाटे की अवस्था है। पर क्या हम अकेले हैं? अकेली हमारी बला। अभी वर्षा बांदी स्नान कराकर गई है, हवा लौंडी चारों ओर दौड़ रही है, सामने गंगा अपनी गंग गंग गंग की रागनी अलाप रही है, सैकड़ों सेवक चहुँ ओर की झाड़ियों में आराम कर रहे हैं। लो, यह शब्द किधर से आया? कोई वनपशु झाड़ियों में से बोल उठा है- "उपस्थित"। हम अकेले क्यों? पर हां, हम अकेले ही हैं। यह सेवक वेवक और नहीं, हम ही हैं। गहन वृत्त (तरुवर) नहीं, हम ही हैं। हवा नहीं हम हैं। गंगा कहाँ? हम हैं। तारे-वारे और चाँद नहीं, हम हैं। खुदा नहीं हम। माशूक़ और वस्ल (मिलाप) कैसा? प्यारी और प्रणय कैसा? हम ही हम। अरे एकांत का खयाल भी हम से भाग गया अकेले का शब्द भी अकेला छोड़ गया।—

तनहास्तम तनहास्तम चि बुलअज़ब तनहास्तम।
ज़ुज़ मन न बाशद हेच शै यकतास्तम तनहास्तम॥

अर्थः – मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं, कैसे आश्चर्य की बात है कि मैं अकेला हूं। मेरे बिना कोई वस्तु नहीं है, मैं अद्वितीय हूं, अकेला हूं॥

ईं नारा ओ ईं नारा ज़नो नीज़ ईं स्वहरा।
अशजारो-कुहिस्तानों-शबो रोज़ नगारा॥ १॥

वाद् अंजमों-गंगाजलो-अवरो-महे-तावां ।
माशूक़ो-खुदा खास विसालो दमे-हिजरां ॥
काग़ज़ क़लम चश्मतो-मज़मूनो-तो खुद जाँ ।
"राम" अस्त हमा, नस्त दिगर, अस्त, हमा आँ ॥

अर्थ—यह गरज, यह गरजनेवाला, और साथ इस के यह वन, वृक्ष, पर्वत, दिन रात, पवन, तारे, गंगा जल, मेघ व प्रकाशमान् चन्द्रमा, माशूक़ (प्रिय) व स्वयं परमात्मा, मिलाप व वियोग, काग़ज़, लेखनी, नेत्र, विषय और तू स्वयं यह सब 'राम' है, इतर कुछ नहीं है, वही है, सब वही है।

क्या राम बेकार है ?

(२) मन का मानसरोवर अमृत से लबालब हो रहा है। आनंद की नदी हृदय में से बह रही है। अंतःकरण कृतकृत्य और गद्गद है। विष्णु के भीतर सतोगुण इतना भरा कि समा न सका। उस सतोगुण के स्रोत से पैरों की राह सतोगुण की गंगा जारी हो गई। ठीक इस भाँति परम आनंद से भरपूर राम भगवान् जिसका ब्रह्मानंद समेटे से सिमटता नहीं पूर्ण आनंद का स्रोत बनकर आनंद की नदी संसार को भेज रहा है। प्रफुल्लता और विश्रांति की प्रभात पवन प्रेषित कर रहा है। कौन कहता है, वह बेकार बैठा है ?

(राग बरवा—ताल दादरा)

अलाया ईह-हुस्साक़ी मये बाक़ी बचश अज़ मा ।
कि रोज़ अफ़ज़ूँ शवद् इशक़त कुनद आसाँत मुश्किलहा ॥ १ ॥
व हुस्न-मौज खेज़े-मन कि शुद तूफ़ाँ नक़ाबे-मन ।
ज़ मौजे-खूबी ए बहरम चे शोर उफ़्ताद दर दिलहा ॥ २ ॥
शबे-महतावोबादे-खुश लबे-दरिया सनम दर बर ।
चसाँ दानंद हाले-मा ग़रीक़ाने-तमव्वजहा ॥ ३ ॥

मरा दर मंज़िले-जानाँ हमा ऐशों हमा शादी ।
जरस बेहूदा मी नालद कुजा बंदेम मह्मिलहा ॥ ४ ॥
हमा कारम ज़ बे कामी व ख़ुश कामी कशीद आख़िर ।
निहाँ चूँ मानद ईं राज़े कि बूदा शमए-महफ़िल हा ॥५॥
हुज़ूरी चे हमी ख़्वाही अज़ो ग़ायब नई ऐ जाँ ।
तुई उक़बा, तुई मौला, तुई दुनिया व माफ़ीहा ॥ ६ ॥
व सिदक़े-दिल अनलहक़ गो, चुनीनत् राम फ़रमायद ।
कि दर यक दम ज़दन गर्दद वसालो-क़ितए-मंज़लहा ॥७॥

अर्थ—१— सावधान ऐ सुरा पिलानेवाले ! (अमर) मदिरा हम से चख जिसमें तेरा प्रेम नित्य प्रति उन्नति करता रहे और तेरी कठिनताओं को सरल कर देवे (यहाँ ईश्वर-प्रेम में निमग्न पुरुष अपने गुरु से कहता है कि हम से प्रेम-बूँद चख जिसमें हृदय की सब ग्रंथियाँ खुल जाँय और सच्चा रहस्य प्रकट हो जाय) ।

२— मेरी लहराती हुई सुंदरता के कारण, जो कि मेरा एक विचित्र पर्दा बन गई है, और मेरे प्रेम-सागर की सुंदरता की लहर से दिलों में कितना शोर उपस्थित हो गया है, अर्थात् कितने दिल व्याकुल हो गए हैं ।

३— जब उजेली रात और मन भावती वायु, नदी का तट और प्यारा पहलू में हो, तो हमारी ऐसी दशा को लहरों में डूबे हुए लोग (संसार की कामनाओं और प्रलोभनों में व्यथित लोग) क्या जानें ।

४— मुझको प्यारे की मंज़िल में अत्यंत सुख और अत्यंत प्रसन्नता है । घंटा व्यर्थ कोलाहल करता है, हम चलने को ऊँट कहां बाँधे ? (अर्थात् हमको तो यहाँ ही प्यारे का मिलाप हो गया, इस में हमें अत्यंत प्रसन्नता है, अब नाना उपदेश

का कोलाहल मुफ़्त में है, हम यहाँ से नहीं टल सकते अथवा अब श्वाँस का कोलाहल व्यर्थ है, हमको जाना-आना शेष नहीं रहा)।

५—मेरे सब काम जो कि अपूर्ण थे, अब पूर्ण हो गए। यह भेद क्योंकर छिपा रह सकता है, क्योंकि यह अब महफ़िलों की शमा (सभाओं का दीपक) हो गया है अर्थात् मेरी सब कामनाएँ प्यारे के मिलने से पूरी हो गई हैं,यह बात छुपी नहीं रह सकती।

६ - ऐ प्यारे! तू प्रभुत्व क्या चाहता है? तू उस से दूर नहीं (क्योंकि वह हर एक के भीतर मौजूद है),तू ही आख़िरत है, तू ही मौला है, तू ही दुनिया (लोक) है. तू ही माफ़ीहा (परलोक) है।

७—राम यह आज्ञा (तुझे) देता है कि सच्चे चित्त से शिवोऽहं कहो, क्यों थोड़ी सी देर में शिवोऽहं का एक दम मारने से (अर्थात् एक बार शिवोऽहं कहने से) प्यारे का मिलाप हो जायगा और मंज़लें (मुरादें) तै हो जायंगी।

No sin, no grief, no pain,
 Safe in my happy self.
My fears are fled my doubts are slain
 'My day of triumph come.

मैं अपने आनन्द स्वरूप आत्मा में सुरक्षित हूं।
वहां न पाप है, न दुःख है, न दर्द है॥
मेरा भय भाग गया, मेरे संशय नाश होगए।
(इस प्रकार) मेरी विजय प्राप्ति का दिन आगया।

O Grave! where is thy victory?
 O Death! where is thy sting?

ओ चिता ! (अब बता) कहां है तेरी जय ?
ओ मृत्यु ! (अब बता) कहां है तेरी वेदना ?

My self to me my kingdom is
Such perfect joy therein I find
No wordly wave my mind can toss.
To me no gain to me no loss.
I fear no foe, I scorn no friend,
I dread no death, I fear no end.

मुझे मेरा आत्मा मेरा साम्राज्य है ।
इस प्रकार पूर्ण आनन्द मैं उस में पाता हूं ।
कोई सांसारिक तरंग मेरे चित्त को विचलित नहीं कर सकती ।
मेरे नज़दीक न लाभ है न हानि (हानि लाभ समान है) ।
मुझे किसी शत्रु का त्रास नहीं, किसी मित्र से घृणा नहीं ।
न मुझे नाश का डर है, न मृत्यु का भय ।

मैंने कहा कि रंजो-गम मिटते हैं किस तरह कहो ।
सीना लगा के सीने से मह ने बता दिया कि यों ॥

राम बेकार कभी नहीं, संसार भर में निकम्मे काम राम ही करता है ।

मिहर सरगश्ता कि आफ़ताब कुजास्त ।
आब हर सू दवाँ कि आब कुजास्त ॥ १ ॥
ख़्वाब दोशम ज़ दीदा मैं पुरसीद ।
कि ऐ जहाँ बीं बिगो कि ख़्वाब कुजास्त ॥ २ ॥
मस्त पुरसाँ कि मस्त रा दीदी ?
या रब ! आँ बे खुदो-ख़राब कुजास्त ॥ ३ ॥
बादा दर मयकदा हमे गरदद ।
गिरदे-मजलिस कि गो शराब कुजास्त ॥ ४ ॥

यारे-खुद बेनक़ाब मे गरदद ।
कि मर आँ यारे-बेनक़ाब कुजास्त ॥ ५ ॥

अर्थ १—भास्कर व्याकुल हो रहा है कि सूर्य कहाँ है, पानी हर तरफ़ भाग रहा (बहता फिरता) है कि पानी कहाँ है ?

२—कल रात मेरी नींद मेरी आँख से पूछती थी कि ऐ जगत् की देखनेवाली (आँख)! तू बता कि नींद कहाँ है ?

३—मस्त लोग पूछ रहे हैं कि तुमने मस्त को देखा ? हे ईश्वर ! वह बेखुद और खराब (बदमस्त) कहाँ है ?

४—मदिरा मद्यालय में सभा के चारों ओर दौड़ती हुई पूछती फिरती है कि मदिरा कहाँ है ?

५—अपना यार (प्राप्तव्य) यद्यपि बेनक़ाब (बेपरदा) फिरता है, किंतु फिर पूछता है कि वह बे नक़ाब कहाँ है ?

चूँ कार मरदम मी कुनंद अज़ दस्तो पा हरकत कुनंद ।
बेकार माँदम जाय-हरकत हम मनम हर जा स्तम ॥१ ॥
अज़ खुद चहा बेरूँ जहम, गो मन कुजा हरकत कुनम ।
अज़ बहरचे कार-कुनम मन रूहे-मतलबहास्तम ॥ २ ॥

अर्थ १—लोग जब कोई काम करते हैं, तो हाथ और पैर चलाते हैं, मैं हाथ पैर चलाने से बेकार हूँ, क्योंकि हर जगह मैं खुद मौजूद हूँ। अर्थात् मनुष्य जब काम करता है, तो चेष्टा करता है, आता जाता है, किंतु मैं कहीं आता जाता नहीं, इस लिये कि हर जगह मौजूद हूँ ।

२—मैं अपने से बाहर क्यों कूदूँ और चेष्टा करूँ ? किस लिये कोई काम करूँ ? इस लिये कि समस्त आशाओं की जान तो मैं हूँ ।

क्या यह अहंकार (अनानीयत) है ?

घमंडी और अहंकारी कौन है ? जो अविद्या (गाढ़े अन्धकार) में फँसा हो।

आँ कस कि नदानद व नदानद कि नदानद।

अर्थः—वह मनुष्य जो नहीं जानता और इस बात को भी नहीं जानता है कि मैं नहीं जानता हूं।

अहंकारी वह है जो पद से,कुल से,रुपया से,विद्या से या चमड़े की रंगत से या श्रेणी से फटी-पुरानी बड़ाई की खिलअत (उपाधि) उधार माँगकर पहन रहा हो और उसपर मुग्ध हो। अर्थात् हो तो वास्तव में भीख मांगनेवाला,पर इस अपनी वास्तविक दरिद्रता को सम्मान का कारण ख़याल कर बैठा हो। फ़रऊन और नमरूद ने ख़ुदाई दावा किया था। नास्तिकता और भूल के होते हुए भी वह धन्य थे कि एक वेर महावाक्य "शिवोऽहं" "अनलहक़" तो बोल उठे। उनकी नास्तिकता और भूल केवल यह थी कि उन्होंने अपने पवित्र स्वरूप को लांछन लगाया, अपने आप को परिच्छिन्न बनाया, अपने आपको "वहदहू ला शरीक" (एकमेवाद्वितीयं) न जाना, सच्ची मंज़लत (पराकाष्ठा) को न पहचाना, अपना सांझीदार एक दूसरा ईश्वर कल्पना करके उसकी नक़ल उतारना या बराबरी करना चाहा, सच्ची बड़ाई को छोड़ कर बनावटी घमंड स्वीकार किया, शरीरत्व में फँसे, पैर के जूते को सिर पर चढ़ाया, अपने पैरों आप कुल्हाड़ा मारा, और अपने आप ईश्वर के साथ दूसरे को सम्मिलित करने वाले और सन्मार्ग से फिरने वाले बने। किंतु "राम" जो स्वयं गुलों (पुष्पों) की श्वास, अरुण कपोल वालों में प्राण की

श्वास फूकने वाला और मंसूर को सरदार तथा विजयी बनाने वाला है। इस "राम" को क्या पड़ा है कि अपनी निजी ज्येष्ठता तथा तेज और प्रताप को छोड़ कर भिक्षा वृत्ति अर्थात् घमंड और अहंकार स्वीकार करे।

नमरूद् शुद् मरदूद चूँ बूदश निगह महदूद चूँ।
मारा तकब्बुर कै सज़द चूँ किबरिया मौला स्तम॥

अर्थः—नमरूद की दृष्टि जब परिच्छिन्न हुई तो वह मरदूद हो गया, हमें भला यह घमंड कैसे उचित है जब कि हम स्वयं ज्येष्ठ, (सर्व शिरोमणि) और ईश्वर वास्तव में हैं।

यह पागलपन न हो।

प्रायः बुद्धिमानों के द्वारा यह शिकायत सुनने में आई कि 'राम' को सन्निपात [मालंखोलिया] की बीमारी हो गई है, विक्षिप्तता [पागलपना] का रोग हो चला है। वर्तमान काल के तर्कशास्त्रियों का अग्रगण्य "जे० एस० मिल" लिखता है कि दो बातों में एक को दूसरे से श्रेष्ठ सिद्ध करने का अधिकार केवल उस व्यक्ति को होता है जो दोनों विषयों से भली से भली भाँति परिचित हो। केवल एक ही ओर का ज्ञान रखनेवाला दोनों की तुलना करने की योग्यता नहीं रखता। ऐ मिल, डैविड ह्यूम (David Hume) के अनुयायी ! अर्थात् बुद्धि और तर्क-संपन्न व्यक्तियों ! क्या तुमने कभी इस दीवानेपन का आनन्द चखा ? इस पागलपन का अनुभव किया ? इस सौदाईपन का स्वाद लिया ?—कभी नहीं।

दिल के जाने की ख़बर आक़िल को क्या जाने बला।
किस तरह जाता है दिल बेदिल से पूछा चाहिए॥

अतः तुम्हें कोई अधिकार नहीं इस सदाशुभ पागलपन पर अक्षर रखने का (अर्थात् कोई लांछन लगाने का) ऐ आनंद (Ecstasy-बेखुदी) पर आसक्त लोगो ! जाओ मदिरा तुम्हें स्मरण कर रही है, संगीत-श्रवण बुला रहा है, सुस्वादु भोजन तैयार पड़े हैं, सुंदरी रमणियाँ प्रतीक्षा में खड़ी हैं। जाओ, पर सुनो तो सही, सुंदरियों में, संगीत-श्रवण में, शराब और कवाब में, मद्य-मांस में, या अन्य विषयों में वह क्या है जो तुम्हें रात-दिन अपना दास बनाए रखती है ? प्यारो ! वह 'राम' के पागलपन की ज़रा सी झलक है और बस। तुम्हें लज्जा नहीं आती, कीकर के भूत (मदिरा) से कृत्रिम उन्माद (पागलपन) उधार माँगते हो। क्षण-भर के आनंद (बेखुदी, दीवानेपन) के लिये रक्त और हाड चाम के वारे-न्यारे जाते हो, स्त्रियों के निकम्मे होते हो, भाँति-भाँति के विषयों में फँस जाते हो। आओ, जगत् के सम्राट को जो मस्ती (दीवानापन) नसीब नहीं है, राम उसका दान करता है।

राम दीवाना है व लेकिन बात कहता है ठिकाने की।

जामे-शराब वहदत वाला।
पी-पी हरदम रहो मतवाला॥
पी मैं वारी लाके डीक।
अल्ला शाहरग थीं नज़दीक॥
सुन सुन सुन ले 'राम' दोहाई।
बे अंता ! क्यों अंत है चाई॥
ज़ात पाक नूँ ला न लीक।
अल्ला शाहरग थीं नज़दीक॥

रो रो कर रुपया को इकट्ठा करना और उससे जुदा होते समय फिर रोना, यह रुपया के पीछे पागल बनना अनुचित

है। अपने स्वरूप के धन को सँभालो। बात-बात में लोग क्या कहेंगे "हाय! अमुक व्यक्ति क्या कहेगा?" इस भय से सूखते जाना, औरों की आंखों से हर बात का अंदाज़ा लगाना, केवल जनताकी बुद्धि से (सम्मति से) सोचना, अपनी निजी आँख और निजी समझ को खोकर मूर्ख और पागल बनना अनुचित है। मिटाओ द्वैत का नाम और चिन्ह, और अपने आपको बहाल करो। क्लाक (घंटा घड़ी) के पिंडूलम के अनुसार दुःख और सुख में कंपित और थरथराते रहना हताश कर देनेवाला पागलपन है। इसे जाने दो। अपने अकाल स्वरूप में स्थिति होने दो। हाँ, 'राम' दीवाना है अर्थात् बुद्धि से परे उसका निवास है। व्यर्थ जगत् पड़ा रचना और उसमें स्वयं लुप्त हो जाना, ऐसी चेष्टाएँ दीवानों का काम नहीं तो और किस का है?

दीवाना अम दीवाना अम वा अक़्लो हुश बेगाना अम।
बेहूदा आलम मी कुनम ईं करदमो मन ख़ास्तम॥

अर्थ—मैं पागल हूँ, मैं पागल हूँ, बुद्धि और होश से परे हूँ। व्यर्थ संसार रचता हूं, और इसे रच कर इस से पृथक रहता हूं।

सौदाई नहीं, सौ+दाई (सौ दाँव जानने वाला) है; पागल नहीं, पा+गल (रहस्य का पाने वाला) है।

मीरा 'राम' की दीवानी, दुनिया बावरी कहे।

होशो-खिरद से हमको सरोकार कुछ नहीं।
इन दोनों साहिबों को हमारा सलाम है॥

अर्थः—चेतना और बुद्धि से हमारा कोई संबन्ध नहीं, इन दोनों व्यक्तियों को हमारा नमस्कार है।

गर तबीबे रा रसद ज़ाँ साँ जिनूँ।
दफ़्तरे-तिब रा फ़रोशोयद ब खूँ॥

जनूने को कि अज़ क़ैदे-ख़िरद बेरूँ कशम पा रा।
कुनम ज़ंजीरे-पाए ख्वेशतन दामाने-सहरा रा॥

अर्थ—(१) यदि वैद्य को इस पागलपन का भेद मिल जाय तो अपने वैद्दिक के दफतर को अपने रुधिर से धो डाले।

(२) वह पगलापन कि जिससे मैं अपने पाओं को बुद्धि के बन्धन से छुड़ा लूं और जंगल के पल्ले (छोर) को अपने पाओं की ज़ञ्जीर बना लूं अर्थात् नित्य जंगल में ही रहूं।

(राग जोग – ताल तीन)

आ दे मुक़ाम उत्ते आ, मेरे प्यारिया! टेक

पागल्ल असली पागल होजा,
मस्त अलस्त सफ़ा, मेरे प्यारिया!
ज़ाहिर सूरत दौला-मौला,
बातिन खास खुदा, मेरे प्यारिया!
पुस्तक-पोथी सुट गंगा विच,
दम-दम अलख जगा, मेरे प्यारियां!
सेहली-टोपी लाह दे सिर तो,
रूँड मुँड हो जा, मेरे प्यारिया!
इज़्ज़त फोकी फूक दुनी दी,
अक्क धतूरा खा, मेरे प्यारिया!
झगड़े झेड़े फैसल तेरे,
लेखा पाक चुका, मेरे प्यारिया!
परदे फाड़ दुई दे सारे,
इक्को इक लखा, मेरे प्यारिया!

आपे भुल भुलावें आपे,
आपे बन खुदा, मेरे प्यारिया!
बुक्कल विच तेरा प्यारा लेटे,
खोल तनी गल्ल ला, मेरे प्यारिया!

दिल ब इस्तदलाल बस्तम माँदम अज़ मक़सूद दूर।
नर्दबाँ कर्दम तसव्वर राहे-नाहमवार रा॥

अर्थः—युक्ति और तर्क में मैं ने अपने मन को बाँध दिया (प्रवृत कर लिया) है और इस तरह लक्ष्य से दूर गया हूं। और इस तर्क रूपी टेढ़े मार्ग को मैं ने (अपने लक्ष्य के पहुंचने की) सीढ़ी मान ली है।

अक़ल नक़ल नहीं चाहिए हमको, पागलपन दरकार।
हमें इक पागलपन दरकार॥
छोड़ पवाड़े झगड़े सारे, ग़ोता वहदत अंदर मार।
हमें इक पागलपन दरकार॥
लाख उपाव करले प्यारे, कदी न मिलसी यार।
हमें इक पागलपन दरकार॥
बेखुद होजा देख तमाशा, आपे खुद दिलदार।
हमें इक पागलपन दरकार॥

राम मैदानों में।

एक जगह से शिकायत-भरा ख़त आया कि राम ने बिसार क्यों दिया है", उसका "उत्तर"—

"..

मन आँ ताक़त कुजा दारम कि पैमाँ रा निगह दारम;
थिया पे साक़ी वो बिशकन बयक पैमाना पैमानम।

अर्थ—मेरे में वह शक्ति कहां कि जिस से इक़रार पूरा करने का ख्याल रक्खूं। ऐ प्रेम मद पिलाने वाले [साक़ी=गुरु]! आ, मेरे इस पैमां [इक़रार] को तू एक पैमाने [प्रेम प्याले] से तोड़ दे।

कोई कार्ड-लिफ़ाफ़ा पास न था और न कोई पैसा-वैसा भी पहले था—

दिरमो दाम अपने पास कहाँ;
चील के घोंसले में माँस कहाँ।

इस समय संयोग से एक किताब में से दो टिकट मिल गए और उधर आपका अवश्य उत्तर चाहनेवाला पत्र मिला। उत्तर लिखा गया है। इसी ढंग पर अन्य काम-धंधे तै होते हैं।

आज लैम्प में तेल नहीं और तेल मँगाने को दाम भी नहीं। पर ऐसी बातों से यह परिणाम न निकाल लेना कि हाय हाय! राम तंगदस्त और दुखिया है।

तवंगरां को मुबारक हो शमए-काफ़ूरी।
क़दम से यार के रोशन ग़रीबख़ाना हुआ॥

प्रकृति राम की सहस्र प्राण से दासी है। प्रतिक्षण राम की सेवा करने की धुन में रहती है। आज लैम्प इस लिये नहीं जलाया कि कदाचित् राम सैर को जाने से न रुक जाय? दिन भर पढ़ता रहा, अब फिर पढ़ने-लिखने लग गया, तो स्वास्थ्य में बाधा पड़ जायगी।

इश्क़ के बीमार को अल्ला शिफ़ा करे।

आज रात नदी पर चाँदनी का आनंद दिखाया चाहती है। राम चरम सीमा (परले दर्जे) की अमीरी और बाद-

शाही करता है। जब मुद्रा सम्मुख आते हैं, झट पट उनको मुक्त कर देता है और फिर इस आनंद और बेफिकरी से काटता है कि महाराजधिराजों (शहंशाहों) के तेज और प्रताप को हँसी के योग्य (ridiculous) बना देता है।

भला भला, जानियां ! मौजां लुट्टियां ज्ञानियां ।
खुशी रहना कार है, सोग सोगियां द्वार है ॥

पहले तो बड़ी चिंता के साथ आवश्यकताओं को पूरा करने का प्रयत्न हुआ करता था, अब आवश्यकताएं बेचारी अपने आप पूरी होकर सामने आ जायँ, तो उन पर आँख पड़ जाती है, अन्यथा उनके भाग्य में "राम" की तवज्जेह कहां ? वह आवश्यकताएं जो अभी पूरी नहीं हुईं (अधूरी हैं), उनसे पूरे राम को क्या प्रयोजन ?

भेस बदले महफ़िले-अहबाब में बैठे थे हम;
वह समझते थे यह कोई ओपरा सा और है।

यह शिक्षा विद्यार्थियों को क्यों नहीं दी जाती कि जब किसी आवश्यकता को दूर करने के समान मौजूद न हों तो वह आवश्यकता ही अनुभव होने न पाए। खूब याद रक्खो कि सामानों के मौजूद न होने में जो आवश्यकता अनुभव होती है, वह केवल झूठी होती है।

जज साहिब जब कचेहरी में विराजमान होते हैं, तो उनको कमरे के झारने बुहारने या मेज़ कुरसी सजाने, दवात क़लम लाने और मुक़द्दमा-बाज़ों को बुलाने का कुछ खयाल नहीं होना चाहिए। उनको तो केवल विवेक और न्याय के लिये अपने मन और मस्तिष्क को शांत और प्रफुल्ल रखना ही काम है। अन्य धंधे जज साहब के कष्ट उठाए बिना अपने आप निभ जांयगे, मुकद्दमें-बाज़ अपने आप ही नियत

तारीख़ पर उपस्थित हो जायँगे। वकील लोग भी अपने आप पधारेंगे। मेज़ कुर्सी दवात क़लम भी चपरासी लोग समय पर अपने आप तैयार कर रक्खेंगे।

ऐ सत्य के जिज्ञासुओ! राम तुमको विश्वास दिलाता है कि यदि तुम आत्मिक परिश्रम में रात दिन लगे रहोगे, तो तुम्हारी शारीरिक आवश्यकतायें अपने आप निवृत्त पड़ी होंगी। तुम्हें कुछ आवश्यकता नहीं कि तुम अपने असली आसन को छोड़ कर चपरासी और दास लोगों के काम को अपना धर्म मान बैठो।

संसार में नियम है कि ज्यों ज्यों मनुष्य का पद ऊंचा है शारीरिक श्रम और स्थूल काम से उपरामता मिलती जाती है। जैसे जज इस तरह का कोई काम नहीं करता, वरन् जज की उपस्थिति ही से सब काम पेश होते हैं। जज का साक्षी होना ही चपरासियों को, मुकद्दमे बाज़ों को, अर्ज़ी नवीसों इत्यादि को हलचल में डाल देना है। वैसे ही कर्त्ता भोक्ता की पूंछ को उतारकर सच्चाई के उन्माद (नशे) में मग्न और मस्त की साक्षी रूप स्थिति का होना ही काम धंधे को पड़ा चलाता है। जिस साक्षी के भयसे चन्द्र सूर्य प्रकाश करते हैं, जिसके भयसे नदियां बहती हैं, जिसकी आशंका से वायु चलती है, ऐसे साक्षी को कामना और चिंता से क्या प्रयोजन?

राग भैरवी (ताल ग़ज़ल)

ये इधर से मिहर आ चमका, अहाहाहा! अहाहाहा!!
उधर मह चीम से लपका, अहाहाहा! अहाहाहा!!
हवा अठखेलियां करती है मेरे इक इशारे से।
है कोड़ा मौत पर मेरा, अहाहाहा! अहाहाहा!!

इकाई ज़ात में मेरी असंखों रंग हैं पैदा।
मज़े करता हूं मैं क्या क्या, अहाहाहा! अहाहाहा!!
कहूं क्या हाल इस दिलका कि शादी मौज मारे है।
है इक उमड़ा हुआ दरिया, अहाहाहा! अहाहाहा!!
यह जिस्मे-"राम" पे बदगो! तसव्वर महज़ है तेरा।
हमारा बिगड़ता है क्या, अहाहाहा! अहाहाहा!!

राग जोग-ताल धमार।

गुल को शमीम आब गुहर और ज़र को मैं
देता हूं जबकि देखूं उठाकर नज़र को मैं।
शाहों को रोब और हसीनो को हुस्नो-नाज़
देता बहादुरी हूँ बला शेर-नर को मैं।
सूरज को सोना चाँद को चाँदी तो दे चुके
फिर भी तवाफ़ करते हैं देखूं जिधर को मैं।
अबरूए-कहकशां भी अनोखी कमंद है
बेक़ैद हो असीर जो देखूँ उधर को मैं।
तारे झमक झमक के बुलाते हैं "राम" को
आंखों में उनकी रहता हूं जाऊं किधर को मैं।

राग बरवा ताल मुग़लई।

आप ही डाल साया को उसको पकड़ने जाय क्यों?
साया जो दौड़ता चले कीजिए वाय वाय क्यों?
दीदेह-दिल हुआ जो वा खुब गया हुस्ने-दिलरुबा।
यार खड़ा हो साह्मने आँख न फिर लड़ाए क्यों?
गंजे-निहां के कुफ्ल पर सिर ही तो मुहरे-शाह है।
तोड़ के कुफ्लो मुहर को कब्ज़ को खुद न पाए क्यों?
अहलो-अयालो-मालो-ज़र सब का है बार राम पर।
अस्प पै साथ बोझ धर सर पै उसे उठाए क्यों?

'जब वह जमाले-दिलफ़रोज़ सूरते-मिहरे-नीमरोज़,
आप ही हो नज़ारासोज़ परदे में मुँह छुपाए क्यों ?
दशनए ग़मज़ा जांस्तां नाविके-नाज़-वेपनाह ।
तेरा ही अक्से-रुख़ सही सामने तेरे आए क्यों ?

राग पीलू, ताल झप

आप में यार देखकर आईना पुर सफा कि यों ।
मारे खुशी के क्या कहूँ शशदर सा रह गया कि यों ।
रो के जो इलितमास की दिल से न भूलियो कभी,
परदा हटा दुई मिटा मह ने भुला दिया कि यों ।
मैं ने कहा कि रंजो ग़म मिटते हैं किस तरह कहो
सीना लगा के सीने से मह ने बता दिया कि यों ।
गरमी हो इस बला की हाय भुनते हों जिससे मर्दोज़न
अपनी ही आबो-ताब है, खुदही हूँ देखता कि यों ।
दुनिया व आक़बत बना वाह वा जो जहल ने किया
तारों सा मिहरे-'राम' ने पल में उड़ा दिया कि यों ।

शरीर कठिन रोग से पीड़ित होता है। ज्वर, खाँसी, पीड़ा और पेचिश अपने अपने बल की परीक्षा करते हैं। उस अवसर पर राम का गाना।

वाह वा ऐ तप व रेज़श वाह वा ।
ख़्वाज़ा ऐ दर्दो-पेचिश वाह वा ॥
ऐ बलाए नागहानी वाह वा ।
वेलकम ! ऐ मर्गे-जवानी, वाह वा ॥
यह भँवर, यह क़हरे वर्पा वाह वा ।
बहरे-महरे-राम में क्या वाह वा ॥
खाँड का कुत्ता, गधा, चूहा, बला ।
मुँह में डालो ज़ायका है खाँड का ॥

पगड़ी पाजामा दुपट्टा अँगरखा।
ग़ौर से देखा तो सब कुछ सूत था॥

दामनी तोड़ी व माला को घड़ा।
पर निगाहे-हक़ में है वही तिला॥

मोतिया बिंद दिल की आँखों से हटा।
मर्ज़ों-सिहत ऐन राहते-राम था॥

सोने को क्या परवाह, आभूषण रहे चाहे न रहे। सोने की दृष्टि से तो ज़ेवर कभी हुआ ही नहीं। सोने के ज़ेवर के ऊपर भी सोना, नीचे भी सोना, चारों ओर भी सोना और बीच में भी सोना, हर ओर सोना ही सोना है। आभूषण तो केवल नाम मात्र है। सोना सब दशाओं में एकरस है। मुझ में नाम और रूप ही कभी स्थित नहीं हुए, तो नाम रूप के परिवर्तन और रूपांतर रोग और नीरोग का क्या प्रवेश है? यह मेरी एक विचित्र आश्चर्य्य महिमा का चमत्कार है कि मैं सब में भिन्न भिन्न "अहं" कल्पित कर देता हूं जिससे यह सब लीला व्यक्तियों में विभक्त होकर मेरा तेरा का आखेट हो जाती है। एक दूसरे को अफसर-मातहत गुरु-शिष्य शासक-शासित, दुःखी-सुखी स्वीकार करके मदारी की पुतलियों की तरह खेल दिखाने लगते हैं।

यह मेरी काल्पनिक बनावट मेरे पर तो (प्रतिबिम्ब वा आभास) के कारण अपने आपको कुछ मान बैठी है। इसके कारण मुझ में कदापि भिन्नता नहीं आती, क्योंकि समस्त अस्तित्व और सृष्टि जो इन्द्रिय गोचर है, मुझसे है। पिञ्जरे में चिड़िया उछलती है, कूदती है, प्रसन्न होती है, शोक भी मानती है, किंतु व्याध जानता है कि इस में क्या बल है, चुप तमाशा देखा करता है। आनंदस्वरूप मैं सदा एकांत

हूँ। आप ही आप मेरे में नानत्व (द्वैत) का बाधक होना क्या अर्थ रखता है?

अंदर बाहर ऊपर नीचे आगे पीछे हम ही हम।
उर में सिर में नर में सुर में पुर में गिर में हम ही हम॥

समुद्र की सैर।

समुद्र के किनारे राम खड़ा है। पेच खाती हुई तरंगें चरणों में लहरा रही हैं। तेज़ हवा कपड़े उड़ा रही है। समुद्र का गंभीर गर्जन जगत् के ख़याल को लीन कर रहा है।

शरीर में गति नहीं। क्या दशा है। राम कहाँ है!.....

....

....

जिस तरफ़ अब निगाह जावे है।
आब (जल) ही आब नज़र आवे है॥

विशाल, विशाल सागर; सब जल ही जल, जल ही जल, शुष्क धरती के ख़याल को चित्त-पटल से धो रहा है। बड़े बड़े नगर और बाज़ार, सड़कें, एवं नागरिकों के परस्पर में लड़ाई झगड़े, कोलाहल आदि यहाँ पर स्वप्न से प्रतीत हो रहे हैं। समुद्र के सामने संसार कोई वस्तु नहीं जान पड़ता।

लेकिन जब दृष्टि तनिक ऊपर उठा कर देखते हैं, तो चारों ओर तना हुआ नील वर्ण महाकाश का तट हीन सागर ऐसा विशाल विशाल, विशाल, दिखाई पड़ता है कि उसमें धरती वाला बड़ा सागर बिलकुल डूब जाता है, नाम और चिन्ह सब खो बैठता है।

आनंद यह है कि अनंत महाकाश स्वयं आनंदस्वरूप राम में तुच्छ और अदृश्य हो जाता है। जैसे सूर्य की किरणों

में मृगतृष्णा दिखाई देती है, वैसेही इतना बड़ा महाकाश राम के प्रकाश में भान होता है।

आफ़ताबम् आफ़ताबम् आफ़ताब।
जर्रां हा दारंद अज़ मन रंगो ताब॥

अर्थः—मैं सूर्य हूं, मैं सूर्य हूं, मैं सूर्य हूं, और सब पदार्थ मेरे से ही चमक दमक पाते हैं।

राग कौंसिया—ताल तीन।

शुद्ध सच्चिदानंद ब्रह्म हूं अजर अमर अज अविनाशी।
जासु ज्ञान से मोक्ष हो जावे कट जावे यम की फाँसी॥
अनादि ब्रह्म अद्वैत द्वैत का जामें नाम निशान नहीं,
अखंड सदा सुख जाका कोई आदि मध्य अवसान नहीं।
निर्गुण निर्विकल्प निरुपमा जाकी कोई शान नहीं,
निर्विकार निरवयव माया का जामें रंचक भान नहीं।
यही ब्रह्म हूँ मनन निरंतर करें मोक्ष-हित संन्यासी,
शुद्ध सच्चिदानंद ब्रह्म हूँ अजर अमर अज अविनाशी॥१॥
सर्वदेशी हूँ, ब्रह्म हमारा एक जगह अस्थान नहीं,
रमा हूँ सब में मुझसे कोई भिन्न वस्तु इन्सान नहीं।
देख विचारो सिवाय ब्रह्म के हुआ कभी कुछ आन नहीं,
कभी न छूटे पीड़ दुःख से जिसे ब्रह्म का ज्ञान नहीं।
ब्रह्म ज्ञान हो जिसे उसे नहीं पड़े भोगनी चौरासी,
शुद्ध सच्चिदानंद ब्रह्म हूँ अजर अमर अज अविनाशी॥२॥
अदृष्ट अगोचर सदा दृष्ट में जा का कोई आकार नहीं,
'नेति नेति' कह निगम ऋषीश्वर पाते जिसका पार नहीं।
अलख ब्रह्म लियो जान जगत् नहीं, कार नहीं कोई यार नहीं,
आँख खोल दिल की टुक प्यारे कौन तरफ़ गुलज़ार नहीं।
सत्यरूप आनंदराशि हूं कहें जिसे घट घट बासी,
शुद्ध सच्चिदानंद ब्रह्म हूं अजर अमर अज अविनाशी॥३॥

कश्मीर-पर्यटन।

हवाए खुश, फ़िज़ाए खुश, सदाए-आबशारे खुश।
बहारे खुश, नगारे खुश, चनारे-सायादारे खुश॥

अर्थः—उत्तम पवन है, उत्तम खुला मैदान है, उत्तम शब्द झरनों का है, उत्तम ऋतु है, उत्तम भाँति भाँति रूप रंग है, और उत्तम छायादार चुनार के पेड़ हैं।

ऐ राम! यह निर्दयता ठीक नहीं। प्रकृति ने तेरे लिये विविध वर्णों के दुपट्टे रँगवाए हैं, नए-नए पहनावे (वस्त्र) पहने हैं, और तू उसकी ओर अर्द्ध-दृष्टि भी नहीं डालता। यह ज़ुल्म (निर्दयता) मत कर। चल दर्शन दे।

हमा आहुवाने-स्वहरा सरहा निहादा बर कफ़।
ब उमेद-आँकि रोज़े ब शिकार ख़्वाही आमद॥

अर्थ–जंगल के समस्त मृग शिरों को हाथ पर लिए हुए इस आशा से खड़े हैं कि कदाचित् तू किसी दिन उनकी ओर शिकार के लिये आयगा।

अज़ीज़ा वक़्तो-साअत मी शुमारंद।
रफ़ीक़ाँ चश्मो-दिल दर इंतज़ारंद॥

अर्थः—प्रियजन समय और घड़ियाँ गिन रहे हैं और मित्रगण हृदय और नेत्रों से (उसके आगमन की) प्रतीक्षा कर रहे हैं।

सरव क़दा चमाँ चमाँ, बर लबे-जू रवाँ रवाँ।
फ़रशे-रहे-तो कुमरियाँ, तालाए-शाँ बः पा कुशा॥ ३॥

अर्थः—ऐ नदी तट पर ठुमक २ चलने वाले सरु पेड़

जैसे कद वाले प्यारे! तेरी राह का बिछौना (बुलबुल) बन गई हैं, उनके भाग्य के तारे को तू अपने पाँवों से प्रकाशित कर।

प्रथम दृश्य।

पहाड़ी खेत थियेटर की बेंचों के ढंग पर सज्जित हैं। एक के पीछे दूसरा अधिक ऊँचाई पर बिछा हुआ है। पानी ऊपर से गिरता हुआ सारे के सारे एक बेंच पर एकसाँ फिर जाता है। वहाँ के हरित धानों को सिंचन करने के बाद दूसरी बेंच पर उतरता है, और इसी प्रकार तीसरी पर। प्रातःकाल में हरे-भरे खेत में पानी की सफ़ेद झलक इस प्रकार मालूम देती है जैसे किसी प्यारे प्रेमपात्र के गोरे शरीर का हरित वस्त्रों में दृष्टिगोचर होना। किंतु दोपहर को दूर से देखा जाय तो सफ़ेद पानी ही पानी दिखाई देता है और पहाड़ चाँदी का सा बन जाता है।

एक हरे तख्ते पर से राम जा रहा है। स्वच्छ निर्मल हरा मैदान है। प्रफुल्लित करनेवाली वायु अविराम गति से हर समय चलती रहती है। विस्तृत मैदान आकाश मण्डल (Horizon) के सदृश नहीं है वरन् उस सुंदरी के मस्तक की भाँति गोलाकार है जो सौंदर्य-मद में मस्त होकर चँद्रमा को आँखें दिखा रही हो। घास क्या है, अत्यंत नरम साफ़ चादरें बिछी हैं। जान पड़ता है, परियां (अपसरायें) इसी स्थान पर नाचकर देवराज इंद्र के "खुशनूदी-मिज़ाज के परवाने" [प्रसन्न करने के पात्र] प्राप्त किया करती हैं।

(राग भैरवी-ताल शूल)

भला हुआ हरि बीसरो, सिर से टली बलाय। (टेक)
जैसे थे वैसे भए अब कछु कहा न जाय॥

मुख से जपूं न कर जपूं, उर से जपूं न राम।
राम सदा हम को भजें, हम पावें विश्राम॥
राम मरे तो हम मरे? हमरी मरे बलाय।
सच्च पुरुष लियो जान जब, मरे न मारा जाय॥
हद टप्पे सो औलिया, बेहद टप्पे सो पीर।
हद बेहद दोनों टप्पे, ताका नाम फ़क़ीर॥
हद हद करदे सब गए, बेहद गया न कोय।
हद बेहद मैदान में, रह्यो कबीरा सोय॥
मन ऐसो निर्मल भयो, जैसे गंगा-नीर।
पीछे पीछे हरिफिरे, कहत कबीर कबीर॥

द्वितीय दृश्य।

सुरा के प्याले के रूप में पहाड़ों की आकृति, ठीक बीच में शुद्ध शीतल जल, पानी अत्यन्त मीठा स्वाद, अमृत का स्रोत। वृक्ष अत्यंन्त ऊंचे घन के छायावाले। बेलें प्राकृतिक हिंडोलों की शोभा दे रही हैं। आनंद-दायक झूलने लटक रहे हैं। राम झूलता है और गाता है।—

(राग पीलू-ताल धमार)

दरिया से डुबाव की है यह सदा,
तुम और नहीं हम और नहीं।
मुझको न समझ अपने से जुदा,
तुम और नहीं हम और नहीं॥
जब गुंचा चमन में सुबह को खिला,
सब कान में गुल के यह कहने लगा।
हां, आज यह उक़दा है हम पै खुला,
तुम और नहीं हम और नहीं॥

आईना मुक़ाबिले-रुख़ जो रखा,
झट बोल उठा यों अक्स उसका।
क्यों देखके हैरां यार हुआ,
तुम और नहीं हम और नहीं॥
नासूत में आके यही देखा,
है मेरी ही ज़ात से नश्वोनुमा।
जैसे पम्बह से तार का हो रिश्ता,
तुम और नहीं हम और नहीं॥
तू क्यों समझा मुझे ग़ैर बता,
अपना रुखे-ज़ेबा न हम से छुपा।
चिक पर्दा उठा टुक सामने आ,
तुम और नहीं हम और नहीं॥
दाने ने भला ख़िरमन से कहा,
चुप रह इस जा नहीं चूँनो-चरा।
वहदत की झलक कसरत में दिखा,
तुम और नहीं हम और नहीं॥

इधर-उधर रामकी सेना कलोल कर रही है। छोटे-छोटे मुमूलों ऐसे वर्ण-वर्ण के विहंग (परिन्दे) बेल बूटों पर फुदक रहे हैं। और प्रसन्नता-पूर्ण ध्वनि में चह चहा रहे हैं।

सफ़ेद-सफ़ेद झाग के भीतर से नीला पानी इस प्रकार झलक रहा है जैसे गोरे रंग पर नीली नीली रगें। किसी किसी स्थान पर पानी के नीचे पत्थरों की यह चमक है कि यदि "सर्वत्र अपना घर न समझने वाला" कोई मनुष्य यहां हो, तो तत्काल उसके चित्त में यही आय कि जैसे बने इन पत्थर के टुकड़ों को चुरा कर घर अवश्य-अवश्य ले जाऊँ। किंतु घर कैसा? यह वह स्थान है कि जब एक बेर देखा,

तो यहीं घर कर बैठने की इच्छा होती है, छोड़ने को जी नहीं चाहता। हाय रे संसार की कामना और वासना! तेरे रस्से कैसे दृढ़ हैं, ऐसे आनंद के अंक (आलिंगन वा चुंगल) से भी लोगों को खींच ले जाती है; फिर गरमी में रुलाती है और मिट्टी में मिलाती है।

प्रश्न—यहाँ लोक परलोक लुप्त है, आनंद ही आनंद है। स्वर्ग या बहिश्त कहीं इसी का नाम न हो?

राम—हाँ! खूब समझे। शुभ कर्मोंवाला भाग्यशाली जगत्-जंजाल से छुट्टी पाकर कहीं इधर आता है, कुछ देर आराम करता है, फिर पूर्वले संस्कारों से खिंचा हुआ गिर जाता है। अतएव यही स्वर्ग है।

> अगर फ़िरदोस बर रूए-ज़मीन अस्त।
> हमीनस्तो-हमीनस्तो-हमीनस्त॥

अर्थ—यदि स्वर्ग भूमि पर हो, तो यही है, यही है।

किंतु मेरा स्थान (परमधाम) यह नहीं, क्योंकि मेरे आनंद का वह आकर्षण है कि संसार की कोई कामना उस पर अधिकार नहीं जमा सकती और उससे नहीं हटा सकती; वहाँ से लौट आने के क्या अर्थ?

> रुख़सत दे बाग़बाँ कि ज़रा देख लें चमन।
> जाते हैं वाँ जहाँ से फिर आया न जायगा॥

(राग सोरठ—ताल तीन)

> मान मान मान कहा मान ले मेरा।
> जान जान जान रूप जान ले मेरा॥
> जाने बिना स्वरूप ग़म नं जायगा कभी।

कहते हैं वेद चार बार बात यह सभी ॥
नैनन के नैन जो है सो वैनन के वैन है।
जिसके बगैर शरीर में न पलक चैन है ॥
ऐ प्यारी जान! जान तू भूपों का भूप है।
नाचत है प्रकृति सदा मुजरा अनूप है ॥

तृतीय दृश्य ।

कूकरनाग के समीप एक पहाड़ी चोटी पर "राम" आसन जमाए बैठा है। चारों ओर पहाड़ों पर क्यारियों के ऊपर क्यारियाँ हैं कि कुर्सियाँ बिछी हैं। उन कुर्सियों पर पवन, वरुण, आदित्य, कुबेर आदि देवता गण विराजमान हैं। शाहंशाह राम का इजलास (दरबार) लगा है। नीचे मैदान में धानी हरे लाल पीले रंगों के क़ालीन और गलीचे (घास) बिछे हुए हैं। इस कौतुकालय में कंचनियाँ (नदियाँ) विचित्र बाँकपन से नाच रही हैं और कृतज्ञता-सूचक कलकल नाद (शब्द) करती हुई मन लुभा रही हैं। वाहरी मनोहरता! जिसने निकट जाकर आँख लड़ाई उसी से यह सौहार्द (मित्रता) कि हाँ मेरे हृदय, यकृत में तेरा स्थान है (स्वच्छता)। बेलों के हार डाले, लाल पीले नीले फूल कानों में पहने, झूम-झूम कर ये ऊंचे-ऊंचे वृक्ष क्या कर रहे हैं? नदियों के सौंदर्य की प्रशंसा कर रहे हैं (वा नदियों के सौन्दर्य की शोभा बढ़ा रहे हैं)।

दिलबर दिलरुबाए-मन मेकुनद अज़ बराय-मन।
नक़्शो-निगारो-रंगो-बू ताज़ा बताज़ा नौ बनौ ॥

अर्थ—दिल का लेनेवाला मेरे लिये नए-नए बनाव-शृंगार करता है जिससे दिल को ले ले।

ठीक नहीं कहा, जिनको हम (नदियाँ) चतुर कंचनियां समझे थे, वे नाग और नागिनियाँ हैं; काट खानेवाले (अत्यंत शीतल) सर्प हैं कि लहराते-लहराते, बल खाते, साँ साँ मचाते चले जा रहे हैं। शंकर (अमरनाथ) ने अपने साँप भेजे हैं कि रामके आगे नाच दिखाएँ।

सैर कर और दूर से गुल देख उस गुलज़ार के।
पर बना अपने गले का इन को मत ज़िन्हार हार॥

बाज़ीचा-ए-अतफाल है दुनिया मेरे आगे।
होता है शबो-रोज़ तमाशा मेरे आगे॥
होता है निहां ख़ाक में स्वहरा मेरे होते।
घिसता है जबीं ख़ाक पै दरिया मेरे आगे॥
जुज़ नाम नहीं सूरते-आलम मेरे नज़दीक।
जुज़ वह्म नहीं हस्तिए-अशिया मेरे आगे॥

चतुर्थ दृश्य।

सड़क के दोनों किनारों पर आमने-सामने पंक्तियों में शमशाद [वृक्ष विशेष] आकाश से बातें करते हुए खड़े हैं, मानों लम्बे क़द वाले प्यारे [प्रेम पात्र] हैं कि हरित वस्त्र धारण किए हुए शरीर से शरीर मिलाए राम की प्रतीक्षा में पंक्ति बांधे हैं। विचित्र दृश्य है। किन्हीं किन्हीं स्थानों पर तो शमशाद ऐसे सटे खड़े हैं कि बेचारों का कंधे से कंधा छिलता है, और यों आकाश में सिर किए हैं कि यदि उदयाचल निर्मल हो और सड़क पर ठहर कर आकाश की ओर दृष्टि उठाई जाय, तो भुवन भास्कर (रोज़े-रौशन) में दिन दोपहर के समय तारों का दिखाई देना कुछ बड़ी बात नहीं है।

एक दिन ऐसी सड़क पर अनंत नाग के निकट, घोड़े पर सवार "राम" जा रहा था। बादल घिर रहे थे। हवा शमशादों की जुल्फों से अठखेलियाँ कर रही थी। एकाएक घटा समस्त आकाश में छा गई।

> यह आई, वह आई, वह आई घटा।
> गुलिस्ताने-आलम पै छाई भटा॥
> घटा काली-काली धनुष लाल लाल।
> कन्हैया के अबरू पै जैसे गुलाल॥

पीछे से एक खुश ध्वनि की आवाज़ निकली। वायु पर सवार होकर फैलने लगी। बादलों तक गुंज़ार से समस्त लोक भर गया। यह एक पर्वतीय बालक बाँसुरी बजा रहा था। कैसा समा बँध गया। आहा, हा, हा! दिल के सातवें परदे तक वह सुरें धँस गईं। अब किस में शक्ति थी कि घोड़ा बढ़ाकर आगे निकल जाय। ध्वनि की ताल के साथ घोड़े का पग उठने लगा। मील एक चले गए और ख़्याल तक नहीं आया।

अब ज़रा ग़ौर कीजिए, उस बाँसुरी से गोलचंद (कृष्णचन्द्र) का गोपियों को साँप की तरह बिल्लों से खींच लाना और दीवार पर चित्र वत् बनाए रखना क्या कठिन था?

> एक दिल था सो वह भी खो बैठे।
> अच्छे ख़ासे फ़क़ीर हो बैठे॥
> अब बिठाएँगे आप को किस जा।
> एक मुद्दत के दिल को रो बैठे॥
> आँ शोलारू व ग़मज़ा दिलम रा कबाब कर्द।
> मारा चिः कर्द? ख़ानए-खुद रा ख़राब कर्द॥

अर्थ—उस प्रकाश स्वरूप प्यारे ने अपने एक संकेत (इशारे) से मेरे चित्त को जला दिया। इससे हमारा क्या किया, (उल्टा) अपना ही घर उसने बरबाद कर दिया।

पंचम दृश्य

दोनों ओर हरे-भरे पहाड़, घन की छाया, बीच में नहर के तट पर राम जा रहा है। हरी-हरी कोंपलें, प्यारी प्यारी पत्तियों, मनोहर बालछड़ (सुंबुल) और नरम २ घास से आँखें कृतार्थ हो रही हैं, और चित्त प्रफुल्लित। पग-पग पर झरनों की बहारें और टेढ़े-तिर्छे प्राकृतिक बागीचे निजानन्द के नशे में भरपूर कर रहे हैं। हरे-भरे वृक्षों के झुरमुट कानों में फूल, गले में बेलों के हार डालकर चढ़ती जवानी के खुमार में बरातियों का सा शृंगार कर रहे हैं।

बर लबे-जूए-जहां बा साज़ो-बर्गे ताज़ाई।
हर ज़मां आयद खरामां यारे-खुश रफ्तारे मा॥

अर्थ—संसार की नहर के किनारे नये २ सामानों के साथ हर समय मेरा अच्छी चालवाला मित्र ठुमक २ आता है।

प्राकृतिक सुन्दर पुष्प रामकी एक मधुर दृष्टि पर अपना यौवन बेचने को मीना बाज़ार लगाए परे के परे जमाए जमा हैं।

यूनानी मैथालोजी से सुना है कि सौंदर्य की परी फेन में से उत्पन्न हुई थी। किंतु "शुनीदा कै बुवद मानिंदे-दीदा (अर्थात् सुना हुआ कैसे देखा हुआ हो सकता है) यहां झरनों की फेन प्रत्यक्ष नृत्य करती देखलो।

पानी इतना तो गहरा किंतु निर्मल ऐसा कि प्यारी गंगी (गंगाजी) स्मरण आती है। गोपियां यदि यहां नहातीं, तो

गोलचंद को कभी आवश्यकता न पड़ती कि इन को नग्न शरीर देखने के लिये पानी से बाहर निकलने का कष्ट देता। यह झलकते-झलकते ऊंचे झरने! चाँदी की कमंद और रस्से मालूम देते हैं कि जिनको पकड़कर परलोक (स्वर्ग) को चढ़ जांय, या यह हीरे के गातवाली कंचनियाँ (चादरें) हैं, जो शिर के बल नृत्य करती हुई सेवा में भूमि चूम रही हैं और अत्यंत सुरीली आवाज़ से राम की महिमा के गीत गाती जाती हैं।—

आब अज़ बराए दीदनम मी आयद अज़ फरसंग हा।
बेखुद शुदा अज़ खुर्रमी ग़लताँ शवद बर संगहा॥

अर्थः—जल मेरे दर्शनार्थ पत्थरों से निकल रहा है, और प्रसन्नता में मुग्ध हुआ पत्थरों पर पेच खा रहा है।

आज व्यायाम नहीं किया, आओ कुछ देर झरने के नीचे छाती रखते हैं, पर्याप्त व्यायाम हो जायगा। अपनी छाती के क्षेत्र और जल की गति के वर्ग इत्यादि पर गणित शास्त्र की रीति से जल का दबाव मालूम करेंगे, किंतु उफ़! यह ज़ोर का पानी, यह तो कुल गणित-सणित को बहाए ले जा रहा है, ईंटों से भी चढ़ बढ़के है। इसके आगे छाती रखने से तो यही उत्तम होगा कि चार-पाँच पत्थर मारकर कलेजा चीर दिया जाय। ऐ पानी! तेरी नरमी, जो प्रसिद्ध उदाहरण है, आज क्या हुई? तुम्हारी शीतलता कहाँ बह गई कि इस गरमा-गरमी के साथ दौड़े जा रहे हो? यह आवेशोत्तेजन, यह तुंदी तेज़ी, यह गरमी क्यों?

जल का उत्तर—(अ) मैं तो सदा शीतल हूँ। स्पर्श करके देख लो। बदन ठर (ठिठुर) न जाय तो सही। यह गरमी वरमी तमाशा करने वाले की समझ में है।

(आ) मैं तो प्रतिक्षण नरम ही हूँ। आपकी ज़बर्दस्ती है कि उल्टा मुझ में कठोरता आरोपित या कल्पित हुई है।

प्यारे पाठको! ज़रा विचार करना, संसार-समुद्र की तीक्ष्णता और कटुता कहाँ? तुम्हारी कृपा है कि जगत् धुँधला और अंधकारपूर्ण दृष्टिगोचर होता है।

> ख़ंजर की क्या मजाल कि इक ज़ख़्म कर सके।
> तेरा ही है ख़याल कि घायल हुआ है तू॥
> बादा अज़ मा मस्त शुद नै मा ज़ मै।
> हम ज़ मा दाँ बूए-गुल आवाज़े-नै॥

अर्थः—मद्य हमसे मस्त होती है न कि हम मद्य से। (इसी प्रकार) हम ही से पुष्प-गन्ध और बाँसुरी की ध्वनि तू समझ।

तुम ही जगत् बन रहे हो।

प्रश्न—यदि वास्तव में यही बात है, तो क्या कारण सचाई स्पष्ट नहीं होती। मैं ही जगत् का मूल और फिर मैं ही भय करूं? समझ में नहीं आता। आपकी इन शांतिपूर्ण बातों से हमारे हृदय की तपन नहीं बुझती। माया बड़ी प्रबल है, क्या करें?

> ज़ हर्फ़े-सरद नासह गरमी-ए-इश्क़म न गर्दद कम।
> नियंदाज़द ज़ जोशे-ख़्वेश्तन सेलाबे-दरिया रा॥

अर्थः—उपदेश करने वालों की ठंढी बातों से मेरे इश्क़ (प्रेम) की गरमी कम नहीं होती। अपने निजी जोश से नदी की बाढ़ का अन्दाज़ा नहीं लग सकता। बाढ़ का वेग नदी को फेंक नहीं देता।

रामः— सच है। जब तक अपने आपको स्वयं लेक्चर न दोगे, दिल की तपन क्यों बुझने की है ?—

तो खुद हिजाबे-खुदी ऐ दिल ! अज़ मियाँ बर खेज़।

अर्थः—अपना आवरण तू आप बना हुआ है, अतएव ऐ दिल ! अपने भीतर से तू आप जाग।

हमबग़ल तुझसे रहता है, हर आन राम तो।
बन पर्दा अपनी वस्ल में हायल हुआ है तू॥

अपने हाथों से अपना मुँह कब तक ढाँपोगे ?

बर चेहरा-ए-तो नक़ाब ता कै।
बर चश्मा-ए-खोर सहाब ता कै॥

अर्थ— तेरे चेहरे पर पर्दा कब तक रहेगा, सूर्य पर बादल कब तक रहेगा ?

साहस से काम लो। माया कुछ वस्तु नहीं। ज़रा से पत्ते की ओट में पहाड़ को छिपा रहे हो। जब साहस का सागर प्रवाह (बाढ वा ज्वार) पर आता है तो कौनसा हिमालय है जिसको कूड़ा कर्कट की तरह बहाकर आगे नहीं ले जा सकता। वह कौन-सा समुद्र है जिसे तुम नहीं सुखा सकते, वह कौन-सा सूर्य है जिसे परमाणु नहीं बना सकते ?

वह कौनसा उक़दा है जो वा हो नहीं सकता।
हिम्मत करे इंसान तो क्या हो नहीं सकता॥

प्रश्न—पर्दे और घूंघट का काम ही क्या, निरवयव और निराकार में हाथ पाँव की चर्चा ही क्या अर्थ रखती है ? एक ही पवित्रात्मा में ये कहां से आ गए ? वह कौन-सी शक्ति थी जिसने सर्व शक्तिमान पर अधिकार प्राप्त किया ? और

यह किस प्रकार हो सकता है कि मेरा ही चेहरा अपने आप को ढाँप ले !

हिजाबे-जलवा हम यकसर हुजूमे-जलवा हस्त ईंजाँ।
नकाबे-नेस्त दरिया रा मगर तूफ़ाने-उरयानी॥

अर्थ—उसके तेज का पुञ्ज ही तेज का पर्दा बना हुआ है जिस प्रकार कि नदी को और कोई पर्दा नहीं बल्कि नदी की बाढ़ ही नदी का पर्दा हो जाती है।

चादर से मौज की न छिपे चेहरा आब का।
बुरक़ा हुबाब का न हो बुरक़ा हुबाब का॥
जब वह जमाले-दिल फ़रोज़ सूरते-मिहरे नीमरोज़।
आपही हो नज़ारासोज़ पर्दे में मुँह छुपाए क्यों ?॥

चेहरए-नूरानी पर से ज़ुलमते-काकुल (काली ज़ुल्फ) दूर करो। और दीदा-ए-दिल में सुर्मा दो।

अर्थात् सुन्दर मुख पर से अन्धकार का आवरण दूर करो और हृदय नेत्र में ज्ञान का काजल डालो।

हिजाबे-नौ उरूसानी ज़ शौहरे-खुद नमी मानद।
अगर मानद शबे मानद शबे-दीगर नमी मानद॥

अर्थ—नई दुलहिन की लज्जा अपने पति के साथ तो नहीं रहती, और यदि रहती भी है तो केवल एक रात रहती है, दूसरी रात नहीं रहती।

एलो—मिक़राज़े-मौज दामने-दरिया कतर गई।
वहदत का कुर्ता फट गया सारी सतर गई॥

गला फाड़-फाड़कर अब (जल) पुकार रहा है—

मनम खुदा ओ बबाँगे-बलंद मीगोयम।
हर आँ कि नूर दिहद मिहरो-माह रा ओयम॥

अर्थ—मैं पुकार पुकार कर कहता हूं कि मैं खुदा हूं जो चंद्रमा और सूर्य को प्रकाश देता है, वही मैं हूं।

प्रश्न—तुम तमाशा देखने आये हो कि सब वस्तुओं को खा जाने? सब की शोभा, सबकी चमक दमक तुमही हो! तुम इस कवि-वाक्य के अनुरूप हो क्या—

चाँदनी देखे अगर वह महजबीं तालाब पर।
अक्से-रुख की ताब पानी फेर दे महताब पर॥

राम—क्या आज इस कवि-वाक्य के अनुरूप हुआ हूं? मेरे विषय में वेद कहता चला आता है।

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्र तारकं
नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः।
तमेव भान्तमनुभाति सर्वं
तस्य भासा सर्वमिदं विभाति॥
(मुण्डक उप० खं० २ मं० १०)

अर्थः—न वहां सूर्य चमकता है, न चन्द्र और तारे, न ही ये विजलियां चमकती हैं, यह अग्नि तो कहां?। उसी के ही चमकने पर यह सब कुछ चमकता है, उसी की ही चमक से यह सब चमक रहा है॥ १०॥

(राग पहाड़ी-ताल चलंत)

(१) पहाड़ों का यों लंबी ताने यह सोना।
वह गुंजान् दरख्तों का दोशाला होना॥
वह दामन में सब्ज़ा की,मखमल विछौना।
नदी का विछौने की झालर पिरोना॥
यह राहत मुजस्सम यह आराम मैं हूं।
कहां कोहो-दरिया, यहां मैं ही मै हूं॥

नोट—झालरदार मखमल के बिछौने पर दोशाला ओढ़े कुंभकर्ण की तरह लंबे पर्वतीय शृंखला का विस्तारित होना ठीक मस्ती (घन सुषुप्ति-आनंदमय कोष) का स्वरूप है। इस सुषुप्ति या आनंदमय कोष में प्रकाश या आनंद (कूटस्थ) मैं हूँ। मुझे जानने पर यह सुषुप्ति रूप पहाड़ नदी आदि कहां रहने पाते हैं ? सत्यता का पता लगते ही भ्रांति पलायित हो जाती है।

ए ज़ रूयत गुलिस्तां हा शर्मसार।
दर गुलो-गुलज़ार चूनत याफ्तम॥

अर्थ—जब मैंने तुझको बाग़ में देखा तो, बाग़ को शर्मिंदा पाया। (तेरा सा सौंदर्य बाग़ में कहां)।

[२] सफ़ेद-सफेद बादल कभी घोड़े के रूप में, कभी रेल के रूप में, कभी मनुष्य की आकृति में पहाड़ों पर हाथी की मस्त चाल से चलते हुए स्वप्नावस्था की चँचलदशा दिखा रहे हैं। प्रकृति इस अवस्था में भी स्त्रियोंवाले हाव-भाव नहीं छोड़ती। अपने प्रियतम "राम" की आनंद दृष्टि प्राप्त करने के लिये कभी रोती है कभी हँसती है—

(२) यह पर्वत की छाती पै बादल का फिरना।
वह दम भर में अबरों से पर्वत का घिरना॥
गरजना, चमकना, कड़कना, नखिरना।
छमाछम छमाछम यह बूंदों का गिरना॥
अरूसे-फलक का वह हँसना यह रोना।
मेरे ही लिये है फ़क़त. जान खोना॥

[३] कोसों तक कुद्रती गुलजार (प्राकृतिक वाटिका) का चले जाना, वर्ण-वर्ण के फूल चारों ओर खिले हुए—

(३) यह वादी का रंगीन गुलों से लहकना।
फ़िज़ा का यह बू से सरापा महकना॥
यह बुलबुल सा ख़ंदाँलबों का चहकना।
वह आवाज़े-नै का बहर सू लपकना॥

गुलों की यह कसरत इरम (स्वर्ग) रूबरू है।
यह मेरी ही रंगत, यह मेरी ही बू है॥

[४] एक और मनोहर स्थान—

(४) जो जू और चश्मा हैं नग़मा सरा है।
किस अंदाज़ से आब बल खा रहा है॥
यह तकियों पै तकिए हैं रेशम बिछा है।
सुहाना समा मन लुभाना समा है॥

जिधर देखता हूँ, जहाँ देखता हूँ।
मैं अपनी ही ताब और शाँ देखता हूँ॥

[५] झरनों की बहार (फुहार)

(५) नहीं चादरें नाचते सीम-तन हैं।
यह आवाज़? पाज़ेब हैं नाराज़न हैं॥
पहाड़ों के दाने ज़मुर्रुद फ़िगन हैं।
सफ़ाई अहा! रूप-मह पुर-शिकन हैं॥

सबाहों में गुल चूमता बासा लता।
मैं शमशाद हूँ झूमकर दाद देता॥

[६] बड़े-बड़े ऊँचे पहाड़ों को कश्मीर में "पीर" कहते हैं (जैसे पीर पंचाल, पीर भुंजाल, रतन-पीर आदि)। इसका कारण यह विदित होता है कि जैसे पीर (बुड्ढा) सफ़ेद सिर वाला होता है, इन पहाड़ों की चोटियाँ भी बर्फ़ के कारण प्रायः सफ़ेद ही रहती हैं।

किंतु आनंद यह है, क्या जानें इन पीरों ने धूप में बाल सफ़ेद किए हैं, सिर तो बुड्ढे हो गए, किंतु युवापन की सब उमंगें जी में हैं। इनके हृदय हरे भरे हैं, अर्थात् चोटियों को छोड़ कर नीचे से अत्यंत ही हरे-भरे हैं। वाहर का यह कथन इन पर घटित होता है—

पीरी में न किस तरह करूँ ऐश-जहाँ की।
दिन ढलते ही होता है तमाशा गुज़री का॥

देवदार के ऊँचे वृक्ष सुरा की सुराहियों की सूरत (आकृति) रखते हैं। इन में स्थान-स्थान पर कल कल नाद करते हुए सोते (स्रोत) बह रहे हैं, मानों बोतलों में से कुल कुल के साथ सुरा निकल रही है। यह मूर्तिमान मस्ती राम ही की एक मौज है।

(६) मेरे साम्हने एक महफ़िल सजी है।
हैं सब सीम सर पीर, पुर सब्ज़ जी है॥
शजर क्या हैं? मीना पै मीना धरी है।
न झरनों का झरना है, कुल कुल लगी है॥
लुंढाये ये शीशे कि बह निकलीं लहरें।
है मस्ती मुजस्सिम यह या अपनी लहरें॥

[७] श्रीनगर से अनंतनाग को नौका (किश्ती) में जाना—

(७) रवाँ आबे-दरिया है किश्ती रवाँ है।
सबा नुज़हत आगीं सुबहदम व जाँ है॥
यह लहरों पै सूरज का जलवा अयाँ है।
बलंदी पै बर्फ़ एक तजल्ली फशाँ है॥
ज़हूर अपने ही नूर का तूर पर है।
पदीद अपनी ही दीद कुल बहरो-बर है॥

[८] झील डल में इधर-उधर सुर्जीत पहाड़ों का प्रतिबिंब पड़ रहा है और पानी को हवा हिला रही है;(इस रूप) में हलकी हवा के झोंकों से इतने बड़े पहाड़ हिलते दृष्टिगोचर होते हैं। क्या आनंद है, आश्चर्य है।

(८) डलकता है 'डल' दीदए-महलक़ा सा।
धड़कता है दिल आईना पुर सफ़ा का॥
हिलाता है कोहों को सदमा हवा का।
खिले हैं कँवल फूल, है इक बलाका॥
यह सूरज की किरणों के चप्पे लगे हैं।
अजब! नावें भी हम हैं खुद खे रहे हैं॥

सूर्य नौका की भांति डल में कंपित दिखाई देता है। और उसी सूर्य की किरणें चप्पों के समान नौका चलाने वाली हैं। मैं ही वह सूर्य हूँ जो नौका बना है, मैं ही खेने के औज़ार (हथ्यार) हूँ।

[९] अमरनाथ की चढ़ाई, पूर्णमासी की रात—

(९) चढ़ाई मुसीबत, उतरना यह मुश्किल।
फिसलनी बरफ़ तिसपे आफ़त यह बादल॥
क़यामत यह सर्दी, कि बचना है बातिल।
यह बू बूटियों की कि घबरा गया दिल॥
यह दिल लेना, जाँ लेना किसकी अदा है?
(शिवजी जो मेरा ही अन्तरात्मा है)
मिरी जाँ की जाँ जिसपै शोखी फ़िदा है।(पार्वतीजी)

[१०] पूर्णमासी की रात—

(१०) अजब लुत्फ़ है कोह पर चाँदनी का।
यह नेचर ने ओढ़ा है जाली दुपट्टा॥

दिखाता है आधा, छिपाता है आधा।
दुपट्टे ने जोबन किया है दो बाला ॥
नशे में जवानी के माशूक़ नेचर।
है लिपटी हुई 'राम' से मस्त होकर ॥

[११] अमरनाथ का अत्यंत विस्तृत ईश्वरीय हाल (जिसे लोग गुफा कहते हैं)

(११) बरफ जिसमें सुस्ती है, जड़ता है, लाशै।
अमर लिंग अस्तादा चेतन की जा है ॥
मिले प्यार, हो वस्ल, सब फ़ासला तै।
यही रूप दायम अमरनाथ का है ॥
वह आप उपासक, तअय्युन मिटा सब।
रहा 'राम' ही 'राम' में तू मिटा जब ॥

हे राम।

(राग जंगला—ताल धमार)

हरसू कि दर्वीदेम हमा सूये-तो दीदेम।
हरजा कि रसीदेम सरे-कूये-तो दीदेम ॥ १ ॥
हर क़िबला कि बुगज़ीद दिल अज़ बहरे-अबादत।
आँ क़िबलए-दिल रा ख़मे-अबरूये-तो दीदेम ॥ २ ॥
हर सरवे रवाँ रा कि दरीं गुलशने-दहर अस्त।
बर रुस्तए-बुस्ताने-लबे-जूए-तो दीदेम ॥ ३ ॥
अज़ बादे-सबा बूए-खुश्त-दोश शमीदेम।
बा बादे-सबा क़ाफ़िला-ए-बूए-तो दीदेम ॥ ४ ॥
रूए-हमा खुबाने-जहाँ रा ब तमाशा।
दीदेम वले ज़ आईना-ए-रूए-तो दीदेम ॥ ५ ॥

ता दीदए-शुहलाए-बुताने-हमा आलम।
कर देम नज़र नर्गिसे-जादूए-तो दीदेम ॥ ६ ॥
ता मिहरे-रुखत वर हमा ज़र्रात न तावद।
ज़र्राते-जहाँ रा ब तगो-पूए तो दीदेम ॥ ७ ॥

अर्थ—(१) जिस ओर हम दौड़े, वह सब दिशाएँ तेरी ही देखीं (अर्थात् सब ओर तू ही था)। और जिस स्थान पर हम पहुँचे वह सब तेरी ही गली का सिरा देखा (अर्थात् सर्वत्र तुझे ही पाया)।

(२) जिस उपासना के स्थान को हृदय ने प्रार्थना के लिये ग्रहण किया उस हृदय के पवित्रधाम को तेरी भ्रू का खम (झुकाव) देखा (अर्थात् उस स्थान पर तू ही झांकता दृष्टिगोचर हुआ) ॥

(३) हर सर्व-रवाँ (प्रिय वृक्ष अर्थात् प्रेमपात्र) को जो कि इस संसार वाटिका में है, उसको तेरी नदी-तट की वाटिका का उगा हुआ देखा (अर्थात् जो भी इस जगत् में प्यारा दृष्टिगोचर हुआ, वह सब तेरे ही से प्रकटीकृत हुआ दिखाई दिया)।

(४) कल रात हमने प्राची-समीर से तेरी सुगंध सूँघी और उस प्राची-पवन के साथ तेरी सुगंध का समूह देखा (अर्थात् उसमें तेरी ही सुगंध बसी हुई थी)।

(५) संसार के समस्त सुंदर पुरुषों के मुखमंडलों को कौतूहल (कौतुक) के लिये हमने देखा, किंतु तेरे मुखड़े के दर्पण से उनको देखा (अर्थात् इन समस्त सुंदरों में तेरा ही रूप पाया)।

(६) समस्त संसार के प्यारों की मस्त आँख में हमने जब देखा तो तेरी जादू भरी नरगिस (आंख) देखी।

(७) जब तक तेरे मुखमंडल का सूर्य समस्त परमाणुओं पर न चमके, तब तक संसार के परमाणुओं को तेरी ही ओर दौड़ते हुए देखा (अर्थात् जब तक तेरी किरण न पड़े तब तक सत्यका जिज्ञासु तेरा ही इच्छुक रहेगा)

(राग भैरवी-ताल दादरा)

सेर नियम सेर नियम अज़ लबे-खंदाने-तो ।
पे कि हज़ार आफ़रीं बर लबे-दंदाने तो ॥ १ ॥
सोसने-तेग़ कशीद खूँने समन रा बरेख्त ।
तेग़ ब सोसन कि दाद ? नर्गिसे-खूँख्वार-तो ॥ २ ॥
आईनए जाँ शुदस्त चेहरए-ताबाने-तो ।
हर दो यके बूदा एम जाने-मन व जाने-तो ॥ ३ ॥

अर्थ – (१) तुझको हँसते हुए देखकर मैं तृप्त नहीं हुआ हूं, मैं तृप्त नहीं हुआ हूं, पर प्यारे ! तेरे अधर और दांतो पर बलिहार ।

(२) सोसन (पुष्प विशेष) ने तरवार खींचकर मेरा खून बहाया, सोसन को तरवार किसने दी ? तेरी नरगिस (पुष्प विशेष जिससे तात्पर्य नेत्र है क्योंकि नेत्रों की आकृति की तुलना नरगिस के पुष्प से की जाती है) ने दी जो कि रक्त की प्यासी है ।

(३) तेरा चमकता हुआ मुखड़ा प्राण का दर्पण है । मेरे प्राण और तेरे, दोनों एक हैं, क्योंकि तेरे मुखड़े में मेरे प्राण दिखाई देते हैं ।

ॐ ! ॐ !! ॐ !!!

बनवास ।

(राग बरवा–ताल धमार)

रहिए अब ऐसी जगह चलकर जहां कोई न हो।
दुश्मने-जाँ हो न कोई मिहरबां कोई न हो॥ १॥
पड़िए गर बीमार तो आकर कोई पूछे न बात।
और गर मरजाइए तो नौहा–ख्वाँ कोई न हो॥ २॥
रुखसत ऐ ज़िंदा ! जनूँ ज़ंजीरे-दर खड़काए है।
मुज्दाह खारे-दश्त ! फिर तलवा मिरा खुजलाय है॥३॥
फिर बहार आई चमन में ज़खमें गुल आले हुए।
फिर मिरे दागे-जनूँ आतश के परकाले हुए॥ ४॥

जीते राम की हड्डियां गंगा में पड़े दो वर्ष बीत गए। कश्मीर-यात्रा को लगभग एक वर्ष हो चुका है।

किसी व्यक्ति को मालूम हो जाय कि यह, मृगतृष्णा है, फिर वहां पानी भरने क्यों जायगा?। यदि किसी के मारे-बांधे चला भी जाय, तो उसका पग उत्साह से नहीं उठेगा।

संसार के विषयों की असलीयत खुल गई, संसार की वस्तुओं की क़लई उतर गई, तो उन में जी कैसे लगे? जो कुम्हार अपने चक्कर को चलाते चलाते छोड़कर अलग अपनी गद्दी पर जा बैठा हो वह चक्कर पिछले धक्के (inertia) के कारण कुछ देर अवश्य चलता रहता है। किंतु कब तक? इसकी गति मंद पड़ती जायगी और धीरे धीरे मालिक के हाथों बिना वह चक्कर शीघ्र थम जायगा।

जिस शरीर का कर्त्ता-भोक्ता जीव अपनी सच्ची गद्दी पर आसन ग्रहण कर चुका हो, वह शरीर कब तक कुम्हार के चक्कर की भाँति घूमेगा? सांसारिक संबंध ढीले पड़ते जाँयगे और धीरे धीरे विदेह।

कब सुबुकदोश रहे क़ैदिए-ज़िंदाने-वतन।
बूए-गुल फांदती है बाग़ की दीवारों को॥

अकबर का बाप हुमायूँ बादशाह मर गया, लेकिन कई दिन तक लोग मुल्लाशिकबी कवि को (जिसकी आकृति हुमायूँ से बहुत मिलती थी) राज सिंहासन पर बैठा हुआ पाकर यही समझते रहे कि हुमायूँ जीवित है और राज कर रहा है। पर कहां तक छिपे? ज्ञात हो ही गया। ज्ञान होते ही ज्ञानी तो शरीर छोड़ बैठा, मर गया, किंतु सांसारिकों की दृष्टि में काम-काज करता मालूम होता है। निभेगी कहां तक?

कई तारे आकाश पर टूट पड़ने के बाद भी इस भूमि के निवासियों को दूरता के कारण सैकड़ों वरन् सहस्रों वर्षों तक दृष्ट पड़े आते हैं, पर एक दिन टूटते दृष्ट आ ही जाते हैं। जो रोटी एक बार खाई जाय फिर हाथ में कैसे रह सकती है? अहंकार को जब शिवोऽहम् ने खा लिया, तो फिर क्या काम देगा।

मन अज़ आं हुस्ने-रोज़ अफ़ज़ूँ कि यूसुफ़ दाश्त दानिस्तम
कि इश्क़ अज़ पर्दए असमत बुरूँ आरद ज़ुलेखा रा।

अर्थ—मैं यूसुफ़ के प्रतिदिन बढ़ने वाले सौंदर्य से जान गया था कि प्रेम ज़ुलेखा को सतीत्व के पर्दे से बाहर निकालेगा।

मैं जो शौक से क़दम बढ़ा के चला।
लगी रस्ते में कहने यह बादे-सबा॥
तुझे ज़िंदा न छोड़ेगी नाज़ो-अदा।
मुझे उस गुले-होशरुबा की क़सम॥

अंततः आया वह दिन कि काम काज छुट गए।

दिलबरा चूँ रुख नमूदी शुद नमाज़े-मन क़ज़ा।
आफ़ताबे चूँ बरायद सिजदा कै बाशद रवा॥

अर्थ—ऐ प्यारे! जब तू ने मुखड़ा दिखाया, मैंने नमाज़ क़ज़ा की (नहीं पढ़ी)। जब सूर्य निकल आता है तो नमाज़ ठीक नहीं होती (तेरा मुखड़ा सूर्य के समान है)।

इश्क़ के मकतब में मेरी आज बिस्मिल्लाह है।
मुँह से कहता हूँ अलिफ़ दिल से निकलती आह है॥

अर्थ—मेरी बेखुदी ने मुझको मसीह (अच्छा करनेवाले) से बेपर्दा कर दिया। मेरा दर्द (बेखुदी) स्वयं मेरी दवा होगया।

जिस प्रकार मृतक को इस संसार से प्रेत जानकर लोग कीर्तन करते हुए घर से बाहर छोड़ आते हैं। सब प्रियजन और परिजन मारू राग गाते हुए राम को गंगा की ओर रवाना कर आए।

(राग मालकौंस–ताल झप)

मना! तैंने राम न जानिया रे! राम न जानिया रे।
मना! तैंने राम न जानिया रे॥
जैसे मोती ओस का रे, तैसे यह संसार।
देखत ही को झिलमिला रे, जात न लागी बार॥
मना! तैंने राम न जानिया रे।
सोने का गढ़ लंक बनायो, सोने का दरबार।
रत्ती इक सोना न मिला रे, रावन मरती बार॥
मना तैंने राम न जानिया रे॥
दिन गँवाया खेल में रे, रैन गँवाई सोय।
सूरदास भजो भगवंता, होनी होय सो होय॥
मना तैंने राम न जानिया रे॥

राम न जानियारे ! मना ! तैंने राम न जानियारे ॥

रेलवे स्टेशन के प्लेटफ़ार्म पर प्रेम-भरे इष्ट मित्र रो रहे हैं और गा रहे हैं।

(राग भैरों-ताल शूल)

अलविदा ऐ मेरी रियाज़ी ! अलविदा।
अलविदा ऐ प्यारी रावी ! अलविदा ॥
अलविदा ऐ अहले-ख़ाना ! अलविदा।
अलविदा मासूमे-नादाँ ! अलविदा ॥
अलविदा ऐ दोस्तो-दुश्मन ! अलविदा ॥
अलविदा ऐ शीत उष्ण ! अलविदा ॥
अलविदा ऐ कुतुबो-तदरीस ! अलविदा।
अलविदा ऐ खुबसो तक़दीस ! अलविदा ॥
अलविदा ऐ दिल ! खुदा ! ले अलविदा।
अलविदा राम ! अलविदा, ऐ अलविदा ! ॥

कैसा चालाकी में तू थकता है ऐ दस्ते-जनूँ !
दस तो क्या इक तार भी बाक़ी नहीं दस्तार में ॥

दीवानगी से दोश पै जुन्नार भी नहीं।
यानी हमारी जेब में इक तार भी नहीं ॥

जब जेब ही नहीं तो तार कैसा ?

यारो ! वतन से हम गए, हम से वतन गया।
नक़्शा हमारे रहने का जंगल में बन गया ॥

पैरहन मे बदरम दम बदम अज़ शायते-शौक़।
कि वजूदम हमा ओ गश्त व मन ई पैरहनम ॥

अर्थः—ईश्वरी लग्न की अधिकता से मैं अपने वस्त्र को दिन प्रति दिन फाड़े डालता हूं। क्योंकि मेरा वजूद (हस्ती) समग्र वही हो गया और (व्यक्ति गत) मैं यह वस्त्र हूं।

मुझे इस दर्द में लज्ज़त है ऐ जोश-जनूँ अच्छा।
मेरे ज़ख्मे-जिगर के हर घड़ी टाँके उधेड़े जा॥
रहा है होश कुछ बाक़ी उसे भी अब निबेड़े जा।
यही आहंग ऐ मुतरब पिसर! टुक और छेड़े जा।

दर दिलम इश्क़ ज़ि लैला काफीस्त।
ख्वाहिशे-वस्ल ज़ना ना इन्साफीस्त॥

अर्थः—मेरे दिल में लैली का प्रेम काफी (पर्याप्त) है इस लिये दूसरों से मिलने की इच्छा अन्याय है।

पेश आमदम शहे वंदा रा गुफ़्तम शहा कम कुन बला।
गुफ़्ता बरो गर आशिक़ी हर दम बला अफ़ज़ूँ कुनम॥

अर्थ—सम्मुख उपस्थित होकर मैंने कहा कि ऐ सौंदर्य के बादशाह! बला को कम करो। जवाब दिया कि यदि तू आशिक़ है तो हर वक्त बला को मैं अधिक करूंगा।

(राग जोग-ताल धमार)

जीने का न अंदोह न मरने का ज़रा ग़म।
यकसाँ है उन्हें ज़िंदगी और मौत का आलम॥
वाक़िफ़ न बरस से न महीने से वह इकदम।
शब की न मुसीबत न कहीं रोज़ का मातम॥
दिन रात घड़ी पहर महो-साल में खुश हैं।
पूरे हैं वही मर्द जो हर हाल में खुश हैं॥ १॥
कुछ उनको तलब घर की न बाहर से उन्हें काम।
तकिया की न ख्वाहिश है न बिस्तर से उन्हें काम॥
अस्थल की हवस दिलमें न मंदिर से उन्हें काम।
मुफलिस से न मतलब न तवंगर से उन्हें काम॥
मैदान में बाज़ार में चौपड़ में खुश हैं।
पूरे हैं वही मर्द जो हर हाल में खुश हैं॥ २॥

उनके लिये तो—

(रागपीलू-ताल चलंत)

गर न्यामतें खाता रहा दौलत के दस्तरख्वान पर।
मेवे मिठाई दूध घी हलवा-ओ-तुर्शी और शकर॥
वर बांध झोली भीख की टुकड़े के ऊपर धर नज़र।
हो कर गदा फिरने लगा कूचा बकूचा दर बदर॥
गर यों हुआ तो क्या हुआ और वों हुआ तो क्या हुआ ॥१॥

था एक दिन वह धूम का निकले था जब असवार हो।
हर दम पुकारे था नक़ीब "आगे बढ़ो, पीछे हटो॥
या एक दिन देखा उसे तनहा पड़ा फिरता है वह।
बस क्या खुशी क्या ना खुशी,यकसां है सब ऐ दोस्तो!॥
गर यों हुआ तो क्या हुआ और वों हुआ तो क्या हुआ ॥२॥

या इशरतों के ठाठ थे, या ऐश के असबाब थे।
साक़ी सुराही गुलबदन जामो-शरावे नाब थे॥
यां बेकसी की दर्द से बेहाल थे बेताब थे।
कुछ रह नहीं जाता यहां आखिर को नक्शे-आब थे॥
गर यों हुआ तो क्या हुआ और वों हुआ तो क्या हुआ ॥३॥

एक वह दिन था जब ठंढे लंबे सांस खींचता, पीली रंगत के साथ छुप-छुपकर तार-तार रोता-धोता, गंगा में डूबने की कामना से "राम" यहां आया था—

बजहे-ज़र अज़ रूए दारद चश्मे-लू लू बारे मन।
क़ल्बे-मन नक़्दे-रवां जाँ रूए-दर बाज़ारे-मन॥ १॥
पेश जाँ कि बेज़र-ज़र्री फ़ितद बर तिश्त-ज़र।
दर ख़रोश आयद ख़रूस अज़ नालाहाए-ज़ारे-मन॥

अर्थ—(१) इश्क़ की वजह से मेरी आंख जो मोती बर-

साती है, सोने का मूल्य रखती है, और मेरा हृदय भी इश्क (प्रेम) के कारण मेरे बाज़ार में सिक्के की तरह जारी है।

(२) पहले इसके कि श्वेत रजतवर्ण प्रभात आकाश पर प्रकट हो, मुर्ग मेरे आर्तनाद से शोर डालने लग जाता है (अर्थात् मेरे आर्तनाद से मुर्ग जागता है और बोलता है कि प्रभात हो गया)

"गंगा! तैथों सद बलिहारे जाऊं,
गंगा, तैथों सद बलिहारे जाऊं।"

आज वह समय है कि उसी गीली गंगी (अर्थात् श्रीगंगाजी) में कपड़ा-लत्ता, वरन् शरीर का प्रत्येक रोम डाल परम आनंद के साथ मौज में लहरा-लहरा कर गा रहा है।

"सद बलिहारे जा गंगे! मैथों सद बलहारे जा।" इत्यादि

हाजी बसूए-काबा रवद अज़ बराय हज।
अल्हमद गो कि काबा बियायद बसूए-मा॥

अर्थः—यात्री यात्रा के लिये काबा की ओर जाता है परमात्मा का धन्यवाद दे कि काबा मेरी ओर आता है।

(राग सोरठ-ताल मुग़लई)

बाज़ आमदम बाज़ आमदम ता वक़्त रा मैमूं कुनम।
बाज़ आदम बाज़ आमदम ता दर्दे-दिल अफ़ज़ूं कुनम॥ १॥
बाज़ आमदम बाज़ आमदम ता बहरे-बीमाराने-दिल।
अज़ अश्के-चश्मो-आहे-शब बज़ खूँ जिगर माजूं कुनम॥ २॥
बाज़ आमदम बाज़ आमदम ता दिलबर आँ दिलवर शवम।
बज़ हरचे जुज़ दिलबर बुवद अज़ शहरे-दिल बेरूं कुनम॥३॥
बाज़ आमदम बाज़ आमदम चीज़े नदारम जुज़ अलिफ़।
क़द्दे-अलिफ़ पैदा शवद चूँ रास्त पुश्ते नूँ कुनम॥ ४॥

बाज़ आमदम बाज़ आमदम दिल दादए-शोरीदए।
खुद रा मगर लैली कुनां आं यार रा मजनूं कुनम ॥ ५ ॥
गुफ्तम शहा दर हिज्रे-तो बस क़तरा हा बारीदा अम।
गुफ्ता चि ग़म हर क़तरा रा मन लो लुए मकनूं कुनम ॥ ६ ॥
गुफ्तम शहा चूँ हाज़री फ़र्दा चिः हाजत वादा रा।
गुफ्ता बरो, खुद रा बबीं, ता वादा रा अकनूं कुनम ॥ ७ ॥
गुफ्तम शहा दर पर्दा हा खुदरा चरा दारीनिहां।
गुफ्ता कि गर बेरूं शवम सीसद चो तो मजनूं कुनम ॥ ८ ॥

अर्थ—(१) मैं फिर लौट आया हूँ, मैं फिर लौट आया हूँ, जिससे समय को धन्य बनाऊँ। मैं फिर लौट आया हूँ, मै लौट आया हूँ, जिससे हृदय की पीड़ा बढ़ाऊँ।

(२) मैं फिर लौट आया हूँ मैं लौट आया हूं जिस से हृदय के बीमार के लिये अपनी आँख के आँसू रात की आह और रोदन और यकृत के रक्त से माजून बनाऊँ।

(३) मैं बार बार लौट आया हूँ जिस में चित्त को उस दिलबर (प्यारे) से लगाऊँ और जो कुछ दिलबर के अतिरिक्त हो, उसको हृदय के नगर से बाहर निकाल दूँ।

(४) मैं बार बार लौट आया हूँ जिस में सिवाय अलिफ़ (अद्वैत) के और कोई वस्तु न रक्खूँ और जब मैं नून (अहंकार) की पीठ को सीधा करूँ तो अलिफ़ जैसा (।) सीधा आकार उत्पन्न हो जाय।

(५) मैं बार-बार वापस आया हूँ क्योंकि मैं आशिक़ (प्रेमी) और पागल हूँ किंतु अपने आपको लैली बनाए हुए हूँ, जिस में उस प्यारे को मजनूँ बनाऊँ।

(६) मैंने कहा, ए बादशाह! तेरी जुदाई में मैंने बहुत से

आँसू गिराए हैं, उसने उत्तर दिया कि कुछ चिंता न कर मैं तेरे (आँसू के) प्रत्येक बूँद को गुप्त मोती (दुर्रे नासुफ़्ता) बना दूंगा।

(७) मैंने कहा, ऐ बादशाह! जब कि तू उपस्थित है तो कल पर वादा पूरा करने की क्या आवश्यकता है? उसने उत्तर दिया कि जा, अपने आपको देख, जिस से कि मैं अभी का वादा (दर्शन का इक़रार तत्काल) पूरा करूँ।

(८) मैंने कहा, ऐ बादशाह! तू अपने आपको पर्दों में क्यों छिपाए रखता है? उसने उत्तर दिया कि यदि मैं बाहर प्रकट हो जाऊँ तो तुझ जैसे तीन हज़ार (कई लोगों) को मजनूँ बना दूँ।

बादलों की गरज के उत्तर में गूंजने वाले पहाड़, सदैव प्रसन्नता में सिर के बाल नाचने वाले झरने और आनन्द दायिनी गंगा की आवाज़ यह गीत गा रहे हैं—

(राग आसा—ताल दादरा)

गंगा का है किनार, अजब सबज़ा ज़ार है।
बादल की है बहार हवा खुशगवार है॥
क्या खुशनुमा पहाड़ पै वह चश्मसार है।
गंगाध्वनी सुरीली है क्या लुत्फ़दार है॥
आ, देख ले बहार कि कैसी बहार है॥ १॥

वक़्ते-सबाहे-ईद तमाशा तयार है।
गुलगूना मुँह पै मल के खड़ा गुल अज़ार है॥
शाहे-फ़लक से या जो हुई आँख चार हैं।
मारे-शरम के चेहरा बन सुख नार है॥
आ, देखले बहार कि कैसी बहार है॥ २॥

क़तरे हैं ओस के कि दुर्रों की क़तार है।
किरणों की उन में थल वे नज़ाकत यह तार है॥
मुर्ग़ाने-ख़ुश नवा! तुम्हें काहे की आर है।
गाओ बजाओ, ग़म का मिटा दिल से बार है।
आ, देखले बहार कि कैसी बहार है॥ ३॥

माशूक़ क़द दरख़्तों पै बेलों का हार है।
नै नै ग़लत दै, ज़ुल्फ़ का पेचाँ यह मार है॥
वाह वा, सजे सजाए हैं, कैसा शृंगार है।
अशजार में चमकता है ख़ुश आबशार है॥
आ, देखले बहार कि कैसी बहार है॥ ४॥

अशजार सर हिलाते हैं, क्या मस्त वार हैं।
हर रंग के गुलों से चमन लाला ज़ार है॥
भौंरे जो गूँजते हैं पड़े ज़र-निगार हैं।
आनंद से भरी यह सदा ओङ्कार है॥
आ, देखले बहार कि कैसी बहार है॥ ५॥

गंगा के रू-सफा से फिसलती न गर नज़र।
लहरों पै अक्स मिह्र का क्यों बेक़रार है॥
विष्णु के शिव के घर का असासा यह गंग है।
याँ मौसमे-ख़िज़ाँ में भी फ़सले-बहार है॥
आ, देखले बहार कि कैसी बहार है॥ ६॥

साक़ी वह मै पिलाता है, तुर्शी को हार है।
दिलदारे-ख़ुश अदा तो सदा हमकनार है॥
वाह क्या मज़े से खाने को ग़म का शिकार है।
दर्शन शराबे-नाब सख़ुन दिल के पार है॥
आ, देखले बहार कि कैसी बहार है॥ ७॥

बाहर निगाह कीजिये तो गुलज़ार है खिला।
अंदर सरूर की तो भला हद कहाँ, दिला॥
कालिज क़दीम का यह सरे-मू नहीं हिला।
पढ़ाता मारफ़त का सबक़ मेरा "यार" है॥
आ, देखले बहार कि कैसी बहार है॥ ८॥

ऐ जाँ! बया बया कि ईं दुनियाए-दीगरअस्त।
आबे-दिगर हवाए-दिगर, जाय-दीगरस्त॥
खूवाँ ज़ ख्वेश दूरो-दर जुहल अफ़गनंद।
खूबअस्तो-जहल दूर कुनद जाय दीगरस्त॥
साधू फ़कीर का तो इसी पर मदार है।
आ, देख ले बहार कि कैसी बहार है॥ ९॥

मस्ती मुदाम कार यही रोज़गार है।
गुलवीं निगाह पड़ते ही फिर किसका खार है।
क्यों राम से तू निज़ार है क्यों दिलफ़िगार है।
जब राम क़ल्ब में तेरे खुद यारे-ग़ार है॥
आ, देख ले बहार कि कैसी बहार है॥ १०॥

ॐ

गंगोत्तरी का रस्ता।

केवल कमर पर कपड़ा ओढ़े राम चला जा रहा है और गा रहा है! क्या?—"ॐ"

एक स्थान पर तो दस मील तक अत्यंत ऊँची दीवारों की तरह एक दूसरे के आमने सामने पहाड़ों का सिलसिला चला गया है। इनके बीच में एक ओर पहाड़ से टकराती झकोले खाती गंगा बही जाती है, दूसरी ओर ढालू पहाड़ में एक पतली पगडंडी खुदी हुई है। रात के दो या तीन बजे का

समय होगा। सन्नाटा छाया हुआ है। बादल घिरा हुआ है। पक्षी पँख नहीं मारता। पे लो! बिजली चमकी, बादल कड़का, वर्षा पहाड़ों से बल प्रयोग करने लगी। मार्ग पर पत्थर और वृक्ष गिरने लगे-अरा, रा, धम; अरा, रा, धम। राम के सिर पर छाता नहीं। पाँव बिलकुल नंगे हैं। हाथ में छड़ी भी नहीं। गरम कपड़े का सहारा नहीं।

अफसुरदनम हमा तन अलम व तरद्दुद आबला दरक़दम।
चो गुबारे-नाला फसुर्दनम चो सरिश्ते-नंगे-रवानियम॥
न नशीमने कि कुनम मकाँ न परे कि वर परम अज़ मियाँ।
न कुनी व इश्वाए-इम्तहाँ, सितम आशियाने-रहाईयम॥

अर्थ—मुरझाने में तो यह सारा शरीर, शोक स्वरूप है। चलते चलते पाँव में छाले पड़ गए हैं, रोने के गुबार की तरह मेरा मुरझाना है। और लज्जा के आँसू की तरह मेरा टपकना (चलना) है।

(२) न कोई घोंसला (घर) है कि जहां मैं ठहर जाऊँ, और न पर ही है कि जिससे मैं उड़ जाऊं। ओ हो आश्चर्य (दुःख) है कि तू परीक्षा के नखरे में मेरी मुक्ति होने नहीं देता।

दश्ते-पैमाई से है अपने बियाबां नाज़ां।
अपने पाबोस से है खारे-मुग़ीलां नाज़ां॥

यह वह स्थान है कि जहां दिन दोपहर को भी मनुष्य की गति (गुज़र) कम होती है। यहां अँधेरी रात में कौन चल रहा है? उसके सिवा और कौन होगा जो सुषुप्ति की घोर निशा में भी जागता है। सदोदितोऽहं सदोदितोऽहं

इसी दशा में चलते-चलते टूटी हुई सड़क सामने मिलती है। मार्ग बंद है, परंतु वह कौन-सी रुकावट है जो राम को

रोक सकती है। कांटेदार झाड़ियों को पकड़-पकड़ कर, पत्थरों को टटोल-टटोल कर राम पहाड़ के ऊपर चढ़ रहा है, जहां बकरी (अजा) की गति कठिन है, राम मौजूद है।

ब जहाने-जलवा रसीदाअम, दह हज़ार पर्दा दरीदाअम।
समरे-निहाले—हक़ीक़तम, चमने—बहारे—खुदाइयम ॥ १ ॥
सरे—काबा गरमे-फ़सूने-मन, दिले-दैर जोशशे-खूने मन।
मगुज़र ज़ सैरे-जनूने-मन, कि क़यामते-हमा जाइयम ॥ २ ॥

अर्थ—(१) अनुभव के संसार में मैं पहुंच गया हूँ, हज़ारों पर्दे फाड़े हैं, तत्त्व के पेड़ का मैं फल हूं और ईश्वरीय वसंत की वाटिका हूं।

(२) मेरे जादू भरे मंत्र से काबे में धूम है, अर्थात् मेरा ध्यान करते ही काबा का सर जलने लगता है। मन्दिर का दिल मेरे खून का जोश है, अर्थात् देवताओं के दिलों में मेरा रुधिर जोश मारता है। मेरे जनून की सैर न कर, मैं हर जगह (काबा और दैर) की क़यामत हूं। अर्थात् मेरे दर्शन से सब नानत्व नष्ट होजाता है।

पहाड़ की चोटी पर किस ज़ोर से ॐ! ॐ!! ॐ!!! की ध्वनि सुनाई दे रही है। अरे पिछली रात के सोने वालो! क्या यह कूक तुम्हारे कानों तक नहीं पहुँची? तुम्हारी नींद अभी तक नहीं खुली? बादलो जाओ, संसार भर में ढिंढोरा फेर दो, ॐ। बिजली! दौड़ो। प्रकाश के अक्षरों में लिखकर दिखादो, "ओं"।

उत्तर में बादल गरज-गरज कर पत्थरों को जगाते हैं। बिजली वृक्षों और जानवरों को प्रकाश से जगमगा देती है। राम की आज्ञाको प्रकाश ने आंखों पर स्वीकार किया। आकाश ने शिर पर स्वीकार किया—"भारत जागा, जागा, जागा"।

फ़लक गुफ्त अहसन मलक गुफ्त, जेह।

अर्थः—आकाश से ध्वनि आई, बहुत खूब। देवता से ध्वनि आई, शाबास।

ऐ गुलामी! अरे दासपन! अरी दुर्बलता! अब समय है। बांधो बिस्तर, उठाओ लता-पता। भागो, छोड़ो मुक्त पुरुषों के देश को।

बादल तुम्हारे शोक में रो भी रहे हैं। बह जाओ गंगा में, डूब मरो समुद्र मे, गल जाओ हिमालय में।

इस भयानक और शंका-पूर्ण अवसर पर राम निश्शंक-भाव से मृत्यु को डांट रहा है। क्या उसे प्राणों का भय नहीं है? जिससे कोई स्थान खाली ही नहीं है, उसको भय कहां। मृत्यु की है शक्ति रामकी आज्ञा के विना दम मारने (श्वास लेने) की! राम का यह शरीर नहीं गिरेगा जब तक भारत सुधर न जायगा।

यह शरीर कट भी जायगा, तो भी इसकी हड्डियां दधीचि की हड्डियों की तरह किसी न किसी इंद्र का वज्र बनकर द्वैत के राक्षस को चकनाचूर कर ही देंगी। यह शरीर मर जायगा, तो भी इसका ब्रह्मबाण चूकेगा नहीं।

अश्वत्थामा के "ब्रह्मशर" की तरह राम का "ब्रह्मबाण" द्वैतदृष्टि और द्वैतज्ञान के वंश का बीज शेष नहीं छोड़ेगा। गर्भ में जो भेद रूपी बच्चे-कच्चे हैं, उनको भी उड़ा देगा।

इस शुद्ध फुरना के आगे कौन ठहर सकता है? यह ज्ञानगोला (Star-shell) खाली जानेवाला नहीं। गधे के-शिरवाले अहंकार रूपी रावनका बंद बंद जुदा।

पड़ा नफ़स को कि रावन है हमसे काम नहीं।
जला के ख़ाक न करदूं तो "राम" नाम नहीं॥

बया ऐ सब्ज़ खंगे-मन विनह बर आसमां हा सुम ।
बखेज़ ऐ मुर्दा दुनिया ! कुम बइज़नी कुम बइज़नी कुम ॥

अर्थः—ऐ मेरे सब्ज घोड़े (मन)! आ, आकाश पर अपनी टाप रख (अर्थात् लोक परलोक से ऊपर उठ) । ऐ मुरदा (मृतक) सृष्टि ! उठ, मेरी आज्ञा से उठ, मेरी आज्ञा से उठ ।

प्रभात का वेला है । खुद मस्ती में झूमता हुआ "राम" जा रहा है । किसी समय मौज में नाचने लग पड़ता है ।

चारों ओर पहाड़ियों को सफ़ेद (बर्फ़ की) साड़ियां ओढ़े देखकर मारे क्रोध के मुख तमतमाने लगा ।—

"तुमने विधवा का वेष क्यों धारण कर रक्खा है ? देखती नहीं हो, कौन आ रहा है ?"

पहाड़ियों से ठँढी "आह" (शीतल वायु) निकलती है–
"हाय ! रँगरेज जल गया, आज अभी तक नहीं आया ।"

राम के दृष्टि उठाते ही कांपता-कांपता लाल रँगरेज़ आता है । तत्काल पहाड़ियों के दुपट्टे भगवे होगए ।

रंग दे रे रँगरेज़ ! चुनरिया रंग दे ।
साही की चदरिया हमरी चुनरिया, दोनों को जोगिया रँगदे ।
रंग दे रे रंगरेज़ ! चुनरिया रंग दे ॥

मैं पिया तोरे रँग में समाय रही ।
और रंग मोहे काहे प्रिय होवे,
मैं पिया तोरे रंग में समाय रही ॥
रंग वही रँगरेज वही, मैं चटक चुनरिया रँगाय रही ।
मैं पिया तोरे रँग में समाय रही ॥
हमरे पिया हम पियाकी री सजनी,
पिया पर जियोड़ा गँवाय रही ।
मैं पिया तोरे रँग में समाय रही ॥

साधन संगूह ।

यह पुस्तक भक्तप्रवर श्री पण्डित भवानीशंकर जी के उपदेश के आधार पर लिखी गई है। इस के प्रकरण ये हैं। १ धर्म, २ कर्म, ३ कर्मयोग ४ अभ्यासयोग ५ ज्ञानयोग और ६ भक्तियोग।

इस पर प्रसिद्ध पत्रों की समालोचना इस प्रकार है।

जबलपुर का साप्ताहिक पत्र कर्मवीर लिखता है:-"धर्म, कर्म, ज्ञानयोग, भक्तियोग, नवधाभक्ति आदि सभी विषयों पर मुमुक्षुजनों के पढ़ने और विचारने योग्य बातें इस में दी गयी हैं। स्थान २ पर शास्त्रों के वचन भी उद्धृत किये गये हैं, जिन से पुस्तक में प्रामाणिकता आ गयी है। लगभग ४०० पृष्ठों की बड़ी साइज की पुस्तक का मूल्य २) इस महंगी के जमाने में कम मूल्य मालूम होता है।

पटने का सर्चलाइट लिखता है:—"हिन्दू धर्म का उदार भाव जैसा इस पुस्तक में दरशाया गया है वह आज कल अधिकांश लोगों को ज्ञात नहीं है, अतएव हिन्दूधर्म की उन्नति के लिये उस का विशेष प्रचार होना चाहिये। भक्ति का विषय, उस की साधना और परिपक्वता बड़ी सुन्दरता से विस्तार रूप में वर्णन किया गया है और यह अध्याय विषयानुसार परममनोहर और उज्ज्वल है। पुस्तक वर्तमान समय के उपयोगी है।"

आकार डेमी ८ पेजी, दोनों भागों के पृष्ठ की संख्या लगभग ६५०, मूल्य दोनों भागों का २॥), प्रत्येक भाग का १॥).

मैनेजर—श्री रामतीर्थ पब्लिकेशन लीग,

लखनऊ।